॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

॥ ऋग्वेद संहिता ॥

॥ ऋग्वेद॥

॥अथ षष्ठं मण्डलं॥

श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

विषय सूची

सूक्त १ 7

सूक्त २ 12

सूक्त ३ 16

सूक्त ४ 19

सूक्त ५ 22

सूक्त ६ 25

सूक्त ७ 28

सूक्त ८ 31

सूक्त ९ 34

सूक्त १० 37

सूक्त ११ 40

सूक्त १२ 43

सूक्त १३ 46

सूक्त १४ 48

सूक्त १५ 50

सूक्त १६ 57

सूक्त १७ 70

सूक्त १८ 75

सूक्त १९ 80

सूक्त २०..... 84
सूक्त २१..... 88
सूक्त २२..... 92
सूक्त २३..... 96
सूक्त २४ 100
सूक्त २५ 104
सूक्त २६ 107
सूक्त २७ 110
सूक्त २८ 113
सूक्त २९ 116
सूक्त ३०..... 119
सूक्त ३१..... 121
सूक्त ३२..... 123
सूक्त ३३..... 125
सूक्त ३४ 127
सूक्त ३५ 129
सूक्त ३६ 131
सूक्त ३७ 133
सूक्त ३८..... 135
सूक्त ३९..... 137

सूक्त ४०..... 139
सूक्त ४१..... 141
सूक्त ४२ 143
सूक्त ४३ 145
सूक्त ४४ 147
सूक्त ४५..... 154
सूक्त ४६..... 163
सूक्त ४७..... 168
सूक्त ४८ 177
सूक्त ४९ 184
सूक्त ५० 189
सूक्त ५१..... 194
सूक्त ५२ 199
सूक्त ५३ 204
सूक्त ५४ 207
सूक्त ५५..... 210
सूक्त ५३ 212
सूक्त ५७..... 214
सूक्त ५८ 216
सूक्त ५९ 218

सूक्त ६० 221
सूक्त ६१ 226
सूक्त ६२ 230
सूक्त ६३ 234
सूक्त ६४ 238
सूक्त ६५ 240
सूक्त ६६ 242
सूक्त ६७ 246
सूक्त ६८ 250
सूक्त ६९ 254
सूक्त ७० 257
सूक्त ७१ 259
सूक्त ७२ 261
सूक्त ७३ 263
सूक्त ७४ 265
सूक्त ७५ 267

ऋग्वेद – षष्ठं मंडल

सूक्त १

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

त्वं ह्यग्ने प्रथमो मनोतास्या धियो अभवो दस्म होता ।
त्वं सीं वृषन्नकृणोर्दुष्टरीतु सहो विश्वस्मै सहसे सहध्यै ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप देवताओं में श्रेष्ठ हैं, उन्हें आप अपनी ओर आकर्षित करने वाले हैं। इस जगत् में आप ही दर्शन के योग्य हैं। होता द्वारा किये जा रहे इस बुद्धिपूर्ण कार्य (यज्ञ कार्य) को सम्पन्न करने में आप ही सहयोगी हैं । हे बलवान् देव ! हमें अपरिमित बल प्रदान करें, जिससे हम बलिष्ठ शत्रुओं को जीतने में समर्थ हों ॥१॥

अधा होता न्यसीदो यजीयानिळस्पद इषयन्नीड्यः सन् ।
तं त्वा नरः प्रथमं देवयन्तो महो राये चितयन्तो अनुग्मन् ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप यजन करने योग्य, हवि ग्रहण करने वाले एवं स्तुति करने योग्य हैं। देवों में प्रथम पूज्य हे अग्निदेव ! दिव्य धन की इच्छा से यज्ञानुष्ठान करने वाले प्रत्वग्गण आपको ही सर्वप्रथम आहूत करते हैं। आप यज्ञ वेदी पर प्रतिष्ठित हों ॥२॥

वृतेव यन्तं बहुभिर्वसव्यैस्त्वे रयिं जागृवांसो अनु ग्मन् ।
रुशन्तमग्निं दर्शतं बृहन्तं वपावन्तं विश्वहा दीदिवांसम् ॥३॥

तेजस्वी, दर्शनीय है अग्निदेव ! आप सर्वदा ज्योतित रहते एवं आहुतियों को ग्रहण करते हैं। आप वसुओं के मार्ग से गमन करते हैं । ऐश्वर्य के इच्छुक साधक ही आपका अनुगमन करते हैं ॥३॥

पदं देवस्य नमसा व्यन्तः श्रवस्यवः श्रव आपन्नमृक्तम् ।
नामानि चिद्दधिरे यज्ञियानि भद्रायां ते रणयन्त संदृष्टौ ॥४॥

यश-वैभव प्राप्ति की कामना करने वाले याजक, स्तोत्रों से अग्निदेव को प्रसन्न करते हुए यज्ञशाला में उनका आवाहन करते हैं। हे अग्निदेव ! वे आपका दर्शन पाकर, आनन्दित होकर, स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं और इच्छित पदार्थ प्राप्त करते हैं ॥४॥

त्वां वर्धन्ति क्षितयः पृथिव्यां त्वां राय उभयासो जनानाम् ।
त्वं त्राता तरणे चेत्यो भूः पिता माता सदमिन्मानुषाणाम् ॥५॥

हे अग्निदेव ! यज्ञ वेदी पर प्रतिष्ठित करके यजमान आपको अच्छी तरह प्रज्वलित करते हैं । अध्वर्युगण भी दोनों (लौकिक एवं दैवी) सम्पदाओं को प्राप्त करने की इच्छा से आपको बढ़ाते (प्रज्वलित करते हैं। हे। दुःखनाशक अग्निदेव ! आप स्तुतियों से प्रसन्न होकर माता एवं पिता की तरह अनुदान एवं संरक्षण प्रदान करें ॥५॥

सपर्येण्यः स प्रियो विक्ष्वग्निर्होता मन्द्रो नि षसादा यजीयान् ।
तं त्वा वयं दम आ दीदिवांसमुप ज्ञुबाधो नमसा सदेम ॥६॥

प्रजाजनों के हित में यज्ञ कर्म सम्पन्न करने वाले, दान देने में समर्थ, पूज्य, यजनीय अग्निदेव को हम वेदी पर स्थापित करते हैं। हे अग्निदेव ! आप घर को देदीप्यमान करने वाले हैं। हम स्तोत्रों से आपकी स्तुति करते हुए वन्दना करते हैं ॥६॥

तं त्वा वयं सुध्यो नव्यमग्ने सुम्नायव ईमहे देवयन्तः ।
त्वं विशो अनयो दीद्यानो दिवो अग्ने बृहता रोचनेन ॥७॥

हे अग्निदेव ! हम सद्बुद्धि सम्पन्न सुख की कामना से आपकी स्तुति करते हैं। हे अग्निदेवे ! आप तेज को धारण करने वाले हैं। आप सूर्यदेव के समान देदीप्यमान होकर हमें दिव्यलोक तक ले चलें ॥७॥

विशां कविं विश्पतिं शश्वतीनां नितोशनं वृषभं चर्षणीनाम् ।
प्रेतीषणिमिषयन्तं पावकं राजन्तमग्निं यजतं रयीणाम् ॥८॥

प्रजापालक, ज्ञानी, शत्रुहन्ता, परम बलशाली, कामनाओं की पूर्ति करने वाले, अन्न दान करने वाले तथा प्रज्ञाजनों के पास जाने वाले हे तेजस्वी अग्निदेव ! हम आपकी स्तुति करते हैं। आप हमें अन्न, धन एवं तेजस्विता प्रदान करें ॥८॥

सो अग्न ईजे शशमे च मर्तो यस्त आनट् समिधा हव्यदातिम् ।
य आहुतिं परि वेदा नमोभिर्विश्वेत्स वामा दधते त्वोतः ॥९॥

हे अग्निदेव ! याजकगण स्तुति करते हुए आपके निमित्त हवि प्रदान करते हुए यजन करते हैं। वे आपकी कृपा के द्वारा इच्छानुसार धन प्राप्त करें ॥९॥

अस्मा उ ते महि महे विधेम नमोभिरग्ने समिधोत हव्यैः ।
वेदी सूनो सहसो गीर्भिरुक्थैरा ते भद्रायां सुमतौ यतेम ॥१०॥

हे अग्निदेव ! आप महान् हैं । हम आपको नमस्कार करते हैं, आपका स्तवन करते हैं और आपके निमित्त हवि प्रदान करते हैं। यज्ञ स्थल पर अपनी वाणियों तथा स्तोत्रों द्वारा हम आपका पूजन करते हैं । आपकी कृपा से हम सुमति को धारण करें, जिससे हमारी प्रगति हो ॥१०॥

आ यस्ततन्थ रोदसी वि भासा श्रवोभिश्च श्रवस्यस्तरुत्रः ।
बृहद्भिर्वाजैः स्थविरेभिरस्मे रेवद्भिरग्ने वितरं वि भाहि ॥११॥

हे अग्निदेव ! आपने अपनी दीप्ति को द्यावा-पृथिवी में विशेष रूप से विस्तृत किया है। आप तारक हैं, हम स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं। आप समीपस्थ वेदों पर प्रदीप्त होकर हमारे लिए अन्न और धन के प्रदाता बनें ॥११॥

नृवद्वसो सदमिद्धेह्यस्मे भूरि तोकाय तनयाय पश्वः ।
पूर्वीरिषो बृहतीरारेअघा अस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु ॥१२॥

हे अग्निदेव ! हमारा घर पुत्र-पौत्रों और परिजनों से परिपूर्ण रहे । आप ऐश्वर्यवान् से प्राप्त ऐश्वर्य द्वारा हमारे पुत्र-पौत्रों तथा परिजनों का पोषण एवं कल्याण करें तथा हमें ऐसी शक्ति प्रदान करें, जिससे हम निष्पाप और कल्याण के मार्ग पर चलते हुए यशस्वी बने ॥१२॥

पुरूण्यग्ने पुरुधा त्वाया वसूनि राजन्वसुता ते अश्याम् ।

पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्त्यग्ने वसु विधते राजनि त्वे ॥१३॥

हे ज्योतिस्वरूप अग्निदेव ! हमें आप अश्व , गौ सहित धन प्रदान करें । हे अग्निदेव ! आप ऐश्वर्यवान् , रमणीय एवं वरणीय हैं । आप प्रचुर धन के स्वामी हैं ॥१३॥

सूक्त २

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – अनुष्टुप, ११ शक्करी

त्वं हि क्षैतवद्यशोऽग्ने मित्रो न पत्यसे ।
त्वं विचर्षणे श्रवो वसो पुष्टिं न पुष्यसि ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप सभी के मित्र हैं, अन्न और तेज के अधिपति हैं । हे अग्निदेव ! आप सर्वद्रष्टा हैं, पोषक पदार्थों से हमें पुष्ट बनाएँ ॥१॥

त्वां हि ष्मा चर्षणयो यज्ञेभिर्गीर्भिरीळते ।
त्वां वाजी यात्यवृको रजस्तूर्विश्वचर्षणिः ॥२॥

हे अग्निदेव ! हव्य और स्तोत्रों द्वारा याजकगण आपकी ही पूजा करते हैं । कुटिलता रहित, लोकों को तारने वाले, विश्वद्रष्टा (सूर्य) आपको ही प्राप्त करते हैं ॥२॥

सजोषस्त्वा दिवो नरो यज्ञस्य केतुमिन्धते ।
यद्ध स्य मानुषो जनः सुम्नायुर्जुह्वे अध्वरे ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञ के शिरोमणि ध्वज की तरह हैं। मनु पुत्र सुख-समृद्धि की इच्छा से, बिना किसी पारस्परिक द्वेष के यज्ञशाला में आपका आवाहन करते हैं। आप अपने दिव्य तेज सहित प्रदीप्त होने की कृपा करें ॥३॥

ऋधद्यस्ते सुदानवे धिया मर्तः शशमते ।
ऊती ष बृहतो दिवो द्विषो अंहो न तरति ॥४॥

उदार मन वाले हे अग्निदेव ! जो मनुष्य बुद्धिपूर्वक आपकी स्तुति करते हैं, वे सम्पन्न बनते हैं । हे तेजस्वी अग्निदेव ! आपके संरक्षण एवं साधनों को प्राप्त कर साधक पापों के समान द्वेष करने वालों को नष्ट करके, उन्नतिशील होता है ॥४॥

समिधा यस्त आहुतिं निशितिं मर्त्यो नशत् ।
वयावन्तं स पुष्यति क्षयमग्ने शतायुषम् ॥५॥

हे अग्निदेव ! जो याजक समिधा सहित पवित्र आहुतियाँ आपके प्रति निवेदित करता है, वह सुसंतति से भरे-पूरे परिवार में आनन्दपूर्वक रहते हुए शतायु होता है ॥५॥

त्वेषस्ते धूम ऋण्वति दिवि षञ्छुक्र आततः ।
सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोचसे ॥६॥

प्रदीप्त होने के पश्चात् अग्नि का धवल धूम्र अंतरिक्ष में फैलकर दृष्टिगोचर होता है । हे पावन अग्निदेव ! स्तुति के प्रभाव से आप प्रकाशित होते हैं ॥६॥

अधा हि विक्ष्वीड्योऽसि प्रियो नो अतिथिः ।
रण्वः पुरीव जूर्यः सूनुर्न त्रययाय्यः ॥७॥

हे अग्निदेव ! आप स्तुत्य हैं । आप अतिथि की तरह परम प्रिय हैं। नगरवासी, हितैषी, उपदेशक वृद्ध की तरह आश्रय योग्य हैं एवं पुत्रवत् पालनीय हैं ॥७॥

क्रत्वा हि द्रोणे अज्यसेऽग्ने वाजी न कृत्व्यः ।
परिज्मेव स्वधा गयोऽत्यो न ह्वार्यः शिशुः ॥८॥

हे अग्निदेव ! हम आपको अरणिमन्थन क्रिया द्वारा प्राप्त करते हैं । आप वायु के समान सर्वत्रगमनशील हैं। आप अश्वरूप होकर हवि को लक्ष्य तक पहुँचाते हैं । बालवत् पवित्र स्वभाव वाले हे अग्निदेव ! आप हमें अन्न और निवास प्रदान करें ॥८॥

त्वं त्या चिदच्युताग्ने पशुर्न यवसे ।
धामा ह यत्ते अजर वना वृश्चन्ति शिक्वसः ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप कठिन काष्ठों को उसी प्रकार आत्मसात् कर लेते हैं, जैसे अश्व आदि पशु घास का भक्षण कर लेते हैं। हे तेजस्वी अग्निदेव ! आपकी तेजस्वी शिखाएँ वन (समूहों) को भस्म करने में समर्थ हैं ॥९॥

वेषि ह्यध्वरीयतामग्ने होता दमे विशाम् ।
समृधो विश्पते कृणु जुषस्व हव्यमङ्गिरः ॥१०॥

हे अग्निदेव ! आप यज्ञ करने के इच्छुक याजक के घर होता रूप में प्रवेश करते हैं। हे अग्निदेव ! आप हमारी आहुतियों को ग्रहण करें । आप पालक हैं, हमें समृद्धिशाली बनाएँ ॥१०॥

अच्छा नो मित्रमहो देव देवानग्ने वोचः सुमतिं रोदस्योः ।
वीहि स्वस्तिं सुक्षितिं दिवो नृन्द्विषो अंहांसि दुरिता तरेम ता तरेम तवावसा तरेम ॥११॥

हे दिव्यगुण सम्पन्न अग्निदेव ! शांत और विकराल दोनों गुणों वाले आप, द्यावा-पृथिवी में संव्याप्त हैं । आप हमारी वाणी (स्तुतियों) और आहुतियों को देवताओं तक पहुँचाएँ । हम स्तुतिकर्ताओं को सुव्यवस्थित आवास तथा सौभाग्य प्रदान करें। हमें शत्रुओं, संकटों और पापों से बचाएँ । हे अग्निदेव ! आप द्वारा रक्षित हम निर्विघ्न जीवनयापन करें ॥११॥

सूक्त ३

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

अग्ने स क्षेषदृतपा ऋतेजा उरु ज्योतिर्नशते देवयुष्टे ।
यं त्वं मित्रेण वरुणः सजोषा देव पासि त्यजसा मर्तमंहः ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप उनको दीर्घायुष्य प्रदान करें, जो यज्ञ से उत्पन्न और यज्ञपालक याजक हैं। आप मित्र और वरुण जैसी प्रीति करने वाले हैं। देवत्व प्राप्ति की कामना वाले याजक को, आप अपने तेज के द्वारा पापों से बचाते हैं और उनकी सब प्रकार रक्षा करते हैं ॥१॥

ईजे यज्ञेभिः शशमे शमीभिर्ऋधद्वारायाग्नये ददाश ।
एवा चन तं यशसामजुष्टिर्नांहो मर्तं नशते न प्रदप्तिः ॥२॥

श्रेष्ठ वैभवशाली अग्निदेव के निमित्त आहुति देने वाले याजक को पुत्रादि प्राप्त होते हैं। वह पापरहित और निरभिमानी होकर श्रेष्ठ जीवनयापन करता है ॥२॥

सूरो न यस्य दृशतिररेपा भीमा यदेति शुचतस्त आ धीः ।
हेषस्वतः शुरुधो नायमक्तोः कुत्रा चिद्रण्वो वसतिर्वनेजाः ॥३॥

जिन (अग्निदेव) का दर्शन सूर्यदेव की तरह दोष मुक्त करने वाला है, उनकी प्रज्वलित (प्रखर) धी (मेधा अथवा ऊर्जा) सब ओर (दोषों-पापों के लिए भयानक होकर फैलती है। रात्रि में शोक (अथवा अंधकार) रोधक गंभीर शब्द करते हुए वे सबको आवास देने वाले अग्निदेव वनों में अथवा कहीं भी शोभा पाते हैं ॥३॥

तिग्मं चिदेम महि वर्पो अस्य भसदश्वो न यमसान आसा ।
विजेहमानः परशुर्न जिह्वां द्रविर्न द्रावयति दारु धक्षत् ॥४॥

इन (अग्निदेव) का मार्ग (कार्य करने का ढंग) तीक्ष्ण है और स्वरूप तेजस्वी है । वे कुठार की तरह अपनी जिह्वा (ज्वालाओं) को दारु (कठोर वस्तुओं) पर प्रयुक्त करते हैं । गलाई करने वाले (धातु कर्मी) की तरह (पदार्थों को) गला देती हैं ॥४॥

स इदस्तेव प्रति धादसिष्यञ्छिशीत तेजोऽयसो न धाराम् ।
चित्रध्रजतिररतिर्यो अक्तोर्वेर्न द्रुषद्वा रघुपत्मजंहाः ॥५॥

बाण चलाने वाला जैसे प्रतिघात करता है, वैसे ही अग्निदेव भी, परशु की तरह तीक्ष्ण ज्वालाओं द्वारा लक्ष्य वेधन करते हैं। तीवगामी पक्षी जैसे शीघ्रता से वृक्ष की शाखा, पर बैठ जाता है, वैसे ही शीघ्रता से अग्नि भी लकड़ी (समिधा) पर बैठ, लकड़ी को जलाती है और प्रदीप्त होकर रात्रि के अन्धकार का नाश करती हैं ॥५॥

स ईं रेभो न प्रति वस्त उस्राः शोचिषा रारपीति मित्रमहाः ।
नक्तं य ईमरुषो यो दिवा नृनमर्त्यो अरुषो यो दिवा नृन् ॥६॥

स्तुति करने योग्य अग्निदेव भी सूर्यदेव के समान अपनी ज्वालाओं की दीप्ति फैलाते हैं । मित्रवत् प्रकाश को फैलाते हुए शब्द भी करते हैं । वे अमर अग्निदेव प्रदीप्त ज्वालाओं सहित प्रज्वलित रहें ॥६॥

दिवो न यस्य विधतो नवीनोद्वृषा रुक्ष ओषधीषु नूनोत् ।
घृणा न यो ध्रजसा पत्मना यन्ना रोदसी वसुना दं सुपत्नी ॥७॥

सूर्य के समान तेजस्वी, बलवान् अग्निदेव, प्रदीप्त होकर ओषधियुक्त काष्ठादि को जलाते समय विशेष शब्द करते हैं। जो धधकते हुए तेज के साथ इधर-उधर तथा ऊर्ध्वगमन करते हैं, वे हमारे शत्रुओं को पराजित करते हुए द्यावा-पृथिवी को धन से समृद्ध करें ॥७॥

धायोभिर्वा यो युज्येभिरर्कैर्विद्युन्न दविद्योत्स्वेभिः शुष्मैः ।
शर्धो वा यो मरुतां ततक्ष ऋभुर्न त्वेषो रभसानो अद्यौत् ॥८॥

जो अग्निदेव, हविवाहक एवं रथ-नियोजित अश्व के समान कान्तियुक्त (शक्तियुक्त) हैं, वे स्वयं के तेज से विद्युत् के समान देदीप्यमान होने वाले तथा मरुद्गणों से भी अधिक बलशाली हैं। ऐसे सूर्यदेव के समान कान्ति युक्त अग्निदेव वेग से प्रदीप्त होते है ॥८॥

सूक्त ४

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

यथा होतर्मनुषो देवताता यज्ञेभिः सूनो सहसो यजासि ।
एवा नो अद्य समना समानानुशन्नग्न उशतो यक्षि देवान् ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप देवगणों को आहूत करने में समर्थ, बल के पुत्र हैं । इस यज्ञ में अपने समान बलशाली इन्द्रादि देवगणों का हवि द्वारा वैसे ही यजन करें, जैसे कि विज्ञजनों के यज्ञ में करते हैं ॥१॥

स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारु वेद्यश्चनो धात् ।
विश्वायुर्यो अमृतो मर्त्येषूषर्भुद्भूदतिथिर्जातवेदाः ॥२॥

वे अग्निदेव हमें यशस्वी एवं धन-सम्पन्न बनाएँ, जो सूर्यदेव के समान तेजस्वी, प्रकाशक, अमर, बुद्धि से जानने योग्य, अतिथिरूप एवं उषा के समय प्रदीप्त होते हैं ॥२॥

द्यावो न यस्य पनयन्त्यभ्वं भासांसि वस्ते सूर्यो न शुक्रः ।
वि य इनोत्यजरः पावकोऽश्नस्य चिच्छिश्नथत्पूर्व्याणि ॥३॥

जो सूर्यदेव के समान उज्ज्वल प्रकाश के विस्तार करने वाले, पवन बनाने वाले, अपने अजर (सदैव प्रखर) प्रकाश के द्वारा समस्त पदार्थों को दृष्टिगोचर करने वाले, शत्रु को पराजित करने वाले एवं शत्रु नगरों को ध्वस्त करने वाले हैं, उन्हीं अग्निदेव के महान् कर्मों का यशोगान स्तोतागण करते हैं ॥३॥

वह्मा हि सूनो अस्यह्मसद्वा चक्रे अग्निर्जनुषाज्मान्नम् ।
स त्वं न ऊर्जसन ऊर्जं धा राजेव जेरवृके क्षेष्यन्तः ॥४॥

सर्वप्रेरक है अग्निदेव ! आप स्तुति करने योग्य हैं। आप याजक द्वारा प्रदत्त आहुतियों से प्रसन्न होकर उन्हें अन्न और आवास प्रदान करते हैं । हे अन्नदाता अग्निदेव ! आप यज्ञ वेदी पर प्रतिष्ठित होकर हमें अन्न प्रदान करें और शत्रुओं का संहार करें ॥४॥

नितिक्ति यो वारणमन्नमत्ति वायुर्न राष्ट्र्यत्येत्यक्तून् ।
तुर्याम यस्त आदिशामरातीरत्यो न हुतः पततः परिह्रुत् ॥५॥

जो अग्निदेव अपने तमोनाशक तेजस्वी प्रकाश को और प्रखर करते हैं, वे अग्निदेव रात्रि को भी पार करते हैं। वे हवि ग्रहण करने वाले हैं। वायुदेव प्राणरूप हो, जैसे सब पर शासन करते हैं, वैसे ही अग्निदेव सभी पर शासन करें । यज्ञीय अनुशासन को न मानने वालों पर हम विजय प्राप्त करें (अर्थात् प्रेरणा देकर यज्ञीय अनुशासन में चलाएँ । हे अग्निदेव ! आप तीव्रगामी अश्व के समान आक्रामकों का संहार करें ॥५॥

आ सूर्यो न भानुमद्भिरर्कैरग्ने ततन्थ रोदसी वि भासा ।
चित्रो नयत्परि तमांस्यक्तः शोचिषा पत्मन्नौशिजो न दीयन् ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप द्यावा-पृथिवी में अपनी कान्ति से उसी तरह व्याप्त होते हैं, जिस प्रकार सूर्यदेव अपनी तेजस्वी किरणों से व्याप्त हैं। आकाश मार्गगामी सूर्यदेव जैसे अन्धकार को नष्ट करते हैं, वैसे ही तेजस्वी अद्भुत अग्निदेव अन्धकार को दूर करते हैं ॥६॥

त्वां हि मन्द्रतममर्कशोकैर्ववृमहे महि नः श्रोष्यग्ने ।
इन्द्रं न त्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति राधसा नृतमाः ॥७॥

हे आनन्ददायक, पूजनीय अग्निदेव ! हम आपकी स्तुति करते हैं। आप हमारे श्रेष्ठ स्तोत्रों को सुनें । नेतृत्व करने में समर्थ आपको (याजक) हव्य द्वारा वायु एवं इन्द्रदेवों की भाँति ही तुष्ट करते हैं ॥७॥

नू नो अग्नेऽवृकेभिः स्वस्ति वेषि रायः पथिभिः पर्ष्यंहः ।
ता सूरिभ्यो गृणते रासि सुम्नं मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥८॥

हे अग्निदेव ! हम आपकी कृपा से अहिंसापूर्वक उत्तम मार्गों से सुख एवं धन-सम्पदा प्राप्त करें। हमें पाप कर्मों से बचाएँ। आप विज्ञजनों को जो सुख देते हैं, वहीं सुख हम स्तोताओं को प्रदान करें । हम सौ वर्षों तक सुसन्तति सहित आनन्दपूर्वक रहें ॥८॥

सूक्त ५

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

हुवे वः सूनुं सहसो युवानमद्रोघवाचं मतिभिर्यविष्ठम् ।
य इन्वति द्रविणानि प्रचेता विश्ववाराणि पुरुवारो अध्रुक् ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप बल के पुत्र, द्रोह शून्य, चिरयुवा, मेधावी एवं स्तुति करने योग्य हैं । ऐसे गुण-सम्पन्न अग्निदेव का स्तोत्रों द्वारा हम आवाहन करते हैं। वे अग्निदेव स्तुति करने वाले मनु पुत्रों को इच्छित धन और यश प्रदान करते हैं ॥१॥

त्वे वसूनि पुर्वणीक होतर्दोषा वस्तोरेरिरे यज्ञियासः ।
क्षामेव विश्वा भुवनानि यस्मिन्त्सं सौभगानि दधिरे पावके ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप बहुत सी ज्वालाओं वाले और देवताओं को आहूत करने में समर्थ हैं । यज्ञकर्ता यजमान रात और दिन आपके लिए ही हविष्यान्न प्रदान करते रहते हैं। जिस तरह पृथ्वी पर सभी प्राणी स्थित हैं, उसी तरह अग्निदेव समस्त धन-ऐश्वर्य धारण करते हैं ॥२॥

त्वं विक्षु प्रदिवः सीद आसु क्रत्वा रथीरभवो वार्याणाम् ।

अत इनोषि विधते चिकित्वो व्यानुषग्जातवेदो वसूनि ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से श्रेष्ठ इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। आप उत्तम सम्पत्तिवानों में प्रमुख हैं। हे ज्ञान स्वरूप देव ! आप अपने याजकों को सदैव ऐश्वर्य प्रदान करें ॥३॥

यो नः सनुत्यो अभिदासदग्ने यो अन्तरो मित्रमहो वनुष्यात् ।
तमजरेभिर्वृषभिस्तव स्वैस्तपा तपिष्ठ तपसा तपस्वान् ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप उन दोनों प्रकार के शत्रुओं का संहार करें, जो छिपकर अथवा अन्दर प्रविष्ट होकर हमारा नाश करना चाहते हैं । आपका तेज चिरयुवा एवं पर्जन्य को कारण रूप हैं ॥४॥

यस्ते यज्ञेन समिधा य उक्थैरर्केभिः सूनो सहसो ददाशत् ।
स मर्त्येष्वमृत प्रचेता राया द्युम्नेन श्रवसा वि भाति ॥५॥

हे अग्निदेव ! जो याजक हव्य पदार्थों द्वारा यज्ञ करके आपकी सेवा करता है एवं स्तोत्रों से स्तवन करता है, वह यजमान श्रेष्ठ ज्ञान, अन्न एवं धन प्राप्त कर मनु पुत्रों में सुशोभित होता हैं ॥५॥

स तत्कृधीषितस्तूयमग्ने स्पृधो बाधस्व सहसा सहस्वान् ।
यच्छस्यसे द्युभिरक्तो वचोभिस्तज्जुषस्व जरितुर्घोषि मन्म ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप प्रकाशमान तेज से युक्त एवं शक्तिशाली हैं। अतएव अपनी उस शक्ति के द्वारा हमारे शत्रुओं का नाश करें । श्रेष्ठ वाणियों द्वारा की जा रही स्तुति को स्वीकार करें। आप कृपा करके,

उस कार्य को पूर्ण करें, जिसके निमित्त आप नियुक्त किये गये हैं ॥६॥

अश्याम तं काममग्ने तवोती अश्याम रयिं रयिवः सुवीरम् ।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तोऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते ॥७॥

हे अग्निदेव ! आपकी कृपा से हमारी कामनाएँ पूर्ण हों । ऐश्वर्यों के स्वामी हे अग्निदेव ! हम सुसंतति से युक्त एवं ऐश्वर्यवान् हों । हे अन्नदाता ! हमें अन्न प्रदान करें । हे अग्निदेव ! आप अजर हैं, अपने तेजस्वी अमर यश से हमें यशस्वी बनायें ॥७॥

ऋग्वेद – षष्ठं मंडल

सूक्त ६

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

प्र नव्यसा सहसः सूनुमच्छा यज्ञेन गातुमव इच्छमानः ।
वृश्चद्वनं कृष्णयामं रुशन्तं वीती होतारं दिव्यं जिगाति ॥१॥

सुरक्षा की कामना करने वाले याजक, यज्ञीय जीवनयापन करते हुए, स्तुति के योग्य एवं बल-पुत्र अग्निदेव के निकट जाते हैं। वे अग्निदेव, कृष्ण (धूम्रो मार्ग वाले, तेजस्वी, वनों को भस्म करने में समर्थ तथा दिव्य होता हैं ॥१॥

स श्वितानस्तन्यतू रोचनस्था अजरेभिर्नानदद्भिर्यविष्ठः ।
यः पावकः पुरुतमः पुरूणि पृथून्यग्निरनुयाति भर्वन् ॥२॥

अग्निदेव, श्वेत (उज्ज्वल) वर्ण वाले, अनेक किरणों वाले तेजस्वी, प्रकाश फैलाने वाले तथा, चिरयुवा हैं। बहुत शब्द करते हुए वे पवित्र अग्निदेव बड़ी समिधाओं का भक्षण करते हुए गमन करते हैं ॥२॥

वि ते विष्वग्वातजूतासो अग्ने भामासः शुचे शुचयश्चरन्ति ।
तुविम्रक्षासो दिव्या नवग्वा वना वनन्ति धृषता रुजन्तः ॥३॥

हे अग्निदेव ! आपकी ज्वालाएँ वायु से और अधिक प्रखर होकर काष्ठों को जलाती हैं। वे वनों को भी भस्म करने में समर्थ होती हैं । प्रज्वलित अग्नि शिखाएँ गति करती हुईं सर्वत्र व्याप्त होती हैं ॥३॥

ये ते शुक्रासः शुचयः शुचिष्मः क्षां वपन्ति विषितासो अश्वाः ।
अध भ्रमस्त उर्विया वि भाति यातयमानो अधि सानु पृश्नेः ॥४॥

हे अग्निदेव ! आपकी ज्वालाएँ छोड़े गये अश्वों जैसी सर्वत्र गति करती हुईं पृथ्वी पर क्रीड़ा करती हैं। वे वनों को भी जलाने में समर्थ हैं ॥४॥

अध जिह्वा पापतीति प्र वृष्णो गोषुयुधो नाशनिः सृजाना ।
शूरस्येव प्रसितिः क्षातिरग्नेर्दुर्वर्तुर्भीमो दयते वनानि ॥५॥

बलशाली अग्निदेव की लपलपाती अग्नि शिखाएँ ऐसे प्रतीत होती हैं, जैसे कि इन्द्रदेव अपने वज्र को बार-बार उठा रहे हों। शूरवीर के द्वारा फेंके गये पाश के समान निर्बाध गति करती हुई अग्नि की ज्वालाएँ वनों को जला डालती हैं ॥५॥

आ भानुना पार्थिवानि ज्रयांसि महस्तोदस्य धृषता ततन्थ ।
स बाधस्वाप भया सहोभिः स्पृधो वनुष्यन्वनुषो नि जूर्व ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप अपने प्रकाश की प्रेरक किरणों द्वारा सम्पूर्ण पृथ्वी को आच्छादित करें और हमसे (अर्थात् यज्ञकर्ता देव वृत्तिवालों से) द्वेष करने वाले शत्रुओं को अपनी शक्ति से नष्ट करें ॥६॥

स चित्र चित्रं चितयन्तमस्मे चित्रक्षत्र चित्रतमं वयोधाम् ।

चन्द्रं रयिं पुरुवीरं बृहन्तं चन्द्र चन्द्राभिर्गृणते युवस्व ॥७॥

हे अग्निदेव ! हम स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं। आप अद्‌भुत रूप वाले, यशदाता तथा अन्न को देने वाले हैं। आप हमें पुत्र-पौत्रादि एवं ऐश्वर्य प्रदान करें ॥७॥

सूक्त ७

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – वैश्वानरोऽग्नि: । छंद – त्रिष्टुप, ६-७ जगती

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥१॥

सर्वोपरि द्युलोकवासी, भूलोक के स्वामी, वैश्वानर अग्निदेव सभी प्राणियों में स्थित हैं । वे ज्ञानी अतिथि तुल्य एवं पूज्य देवों के मुख रूप अग्निदेव, देवों द्वारा प्रकट किये गये हैं ॥१॥

नाभिं यज्ञानां सदनं रयीणां महामाहावमभि सं नवन्त ।
वैश्वानरं रथ्यमध्वराणां यज्ञस्य केतुं जनयन्त देवाः ॥२॥

यज्ञ के केन्द्रस्थल, धन के भण्डार, महान् आहुतियों से युक्त, समस्त विश्व के नेता, अहिंसक यज्ञ के संचालक, यज्ञ की पताकारूपी अग्नि को याज्ञिकों ने मन्थन द्वारा उत्पन्न किया। उसकी हम सभी वन्दना करते हैं ॥२॥

त्वद्विप्रो जायते वाज्यग्ने त्वद्वीरासो अभिमातिषाहः ।
वैश्वानर त्वमस्मासु धेहि वसूनि राजन्त्स्पृहयाय्याणि ॥३॥

हे तेजस्वी वैश्वानर अग्निदेव ! आप हमें पर्याप्त धन दें । हे देव ! हविष्यान्न से यजन करने वाले को आप दिव्य ज्ञान देते हैं और योद्धा आपकी कृपा से ही प्राप्त सामर्थ्य द्वारा शत्रुओं को पराजित करते हैं ॥३॥

त्वां विश्वे अमृत जायमानं शिशुं न देवा अभि सं नवन्ते ।
तव क्रतुभिरमृतत्वमायन्वैश्वानर यत्पित्रोरदीदेः ॥४॥

हे अमृतस्वरूप अग्निदेव ! समस्त देवमानव उत्पन्न होते हुए आपको, बालक के समान आदरणीय मानते हैं। हे विश्व के नायक ! जब द्युलोक और भूलोक के मध्य आप दीप्तिमान् हुए, तब यजमानों ने आपके द्वारा सम्पादित यज्ञ से देवत्व (अमरत्व) को प्राप्त किया ॥४॥

वैश्वानर तव तानि व्रतानि महान्यग्ने नकिरा दधर्ष ।
यज्जायमानः पित्रोरुपस्थेऽविन्दः केतुं वयुनेष्वह्नाम् ॥५॥

हे वैश्वानर (विश्व के नेता) अग्निदेव ! आपने जब पितरों (द्यावा-पृथिवी अथवा दो अरणियों) के मध्य जन्म लिया, तब यज्ञकर्म में प्रतिष्ठित होकर दिन के केतु (सूर्य अथवा ज्वालाओं) को प्राप्त किया। आपके इन महान् कर्मों में कोई बाधा नहीं डाल सकता ॥५॥

वैश्वानरस्य विमितानि चक्षसा सानूनि दिवो अमृतस्य केतुना ।
तस्येदु विश्वा भुवनाधि मूर्धनि वया इव रुरुहुः सप्त विस्रुहः ॥६॥

सर्वहितकारी अथवा प्रकाशक वैश्वानर के अमृत केतु से द्युलोक के शिखर प्रकाशित होते हैं। उसके मूर्धा भाग से ही शाखाओं की भाँति सप्त धाराएँ प्रवाहित होती हैं ॥६॥

वि यो रजांस्यमिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो वि दिवो रोचना कविः ।
परि यो विश्वा भुवनानि पप्रथेऽदब्धो गोपा अमृतस्य रक्षिता ॥७॥

श्रेष्ठ कर्मों के सम्पादक ये अग्निदेव समस्त भुवनों के निर्माता हैं । द्युलोक से भी परे नक्षत्रों को भी उन्होंने ही प्रकाशित किया है। समस्त भुवनों के विस्तारकर्ता, अजेय और अमृत के संरक्षक ये अग्निदेव ही हैं ॥७॥

ऋग्वेद – षष्ठं मंडल

सूक्त ८

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – वैश्वानरोऽग्नि: । छंद – जगती, ७ त्रिष्टुप

पृक्षस्य वृष्णो अरुषस्य नू सहः प्र नु वोचं विदथा जातवेदसः ।
वैश्वानराय मतिर्नव्यसी शुचिः सोम इव पवते चारुरग्नये ॥१॥

दीप्तिमान् , तेजस्वी, सर्वव्यापी अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं। याज्ञिक कृत्यों में अग्नि के लिए बोले जाने वाले ये पवित्र और सुन्दर स्तोत्र, सभी होताओं के हितकारक अग्निदेव के समीप उसी प्रकार जाते हैं, जैसे यज्ञ के समीप सोम पहुँचता है ॥१॥

स जायमानः परमे व्योमनि व्रतान्यग्निर्व्रतपा अरक्षत ।
व्यन्तरिक्षममिमीत सुक्रतुर्वैश्वानरो महिना नाकमस्पृशत् ॥२॥

वे सर्वव्यापी, जगत्-हितकारी, व्रत-पालक अग्निदेव दिव्य आकाश में प्रकाशित होकर दैवी और लौकिक दोनों प्रकार के सत्कर्मों (यज्ञ कर्मों) के रक्षक एवं पालक हैं । अन्तरिक्ष के पदार्थों को बनाने वाले ये देव ही हैं। वे अपनी महिमा से स्वर्ग का स्पर्श करते हैं ॥२॥

व्यस्तभ्नाद्रोदसी मित्रो अद्भुतोऽन्तर्वावदकृणोज्ज्योतिषा तमः ।

वि चर्मणीव धिषणे अवर्तयद्बृश्वानरो विश्वमधत्त वृष्ण्यम् ॥३॥

इन अद्भुत मित्ररूप वैश्वानरदेव ने द्युलोक एवं पृथ्वी को यथा स्थान स्थापित किया तथा अपने तेज से अन्धकार को नष्ट किया। उन्होंने पृथ्वी की त्वचा के रूप में अन्तरिक्ष को फैलाया। उन वैश्वानरदेव ने ही विश्व के समस्त बलों (अथवा वर्षण क्षमताओं) को धारण कर रखा है ॥३॥

अपामुपस्थे महिषा अगृभ्णत विशो राजानमुप तस्थुर्ऋग्मियम् ।
आ दूतो अग्निमभरद्विवस्वतो वैश्वानरं मातरिश्वा परावतः ॥४॥

दूत के रूप में मातरिश्वा (वायु) दूरस्थ आदित्य मण्डल से वैश्वानर अग्निदेव को इस लोक में ले आयें ।महान् कर्मवाले मरुद्गणों ने उन्हें अन्तरिक्ष में जल के बीच धारण किया। विज्ञमनुष्यों ने उन श्रेष्ठ स्वामी की स्तुति की ॥४॥

युगेयुगे विदथ्यं गृणद्भ्योऽग्ने रयिं यशसं धेहि नव्यसीम् ।
पव्येव राजन्नघशंसमजर नीचा नि वृश्च वनिनं न तेजसा ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप उन्हें यशस्वी सन्तान एवं धन-ऐश्वर्य प्रदान करें, जो यज्ञ करते समय नवीन स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं। हे अजर (सदैव-प्रखर) तेजस्वी अग्निदेव ! आप हमारे शत्रु को उसी प्रकार नष्ट करें, जैसे वज्र वृक्ष को नष्ट कर देता हैं ॥५॥

अस्माकमग्ने मघवत्सु धारयानामि क्षत्रमजरं सुवीर्यम् ।
वयं जयेम शतिनं सहस्रिणं वैश्वानर वाजमग्ने तवोतिभिः ॥६॥

हे अग्निदेव !आप हविष्यान्न एवं धन-ऐश्वर्य से समृद्ध जनों में कभी न झुकने वाला, चिर-युवा श्रेष्ठ बल, वीर्ययुक्त क्षात्रबल स्थापित करें । हे वैश्वानर अग्निदेव ! आपके संरक्षण में हम हजार गुना अधिक सामर्थ्य-ऐश्वर्य आदि प्राप्त करें ॥६॥

अदब्धेभिस्तव गोपाभिरिष्टेऽस्माकं पाहि त्रिषधस्थ सूरीन् ।
रक्षा च नो ददुषां शर्धो अग्ने वैश्वानर प्र च तारीः स्तवानः ॥७॥

हे त्रिलोक में स्थित अग्निदेव ! आप अविनाशी हैं। हे वैश्वानर अग्निदेव ! आप स्तोताओं और याजकों की, अपने संरक्षक बल द्वारा रक्षा करें और कृपा कर हमारे दुःखों को दूर करें ॥७॥

सूक्त ९

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – वैश्वानरोऽग्नि: । छंद – जगती, त्रिष्टुप ७ प्रस्तारपंक्ति

अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च वि वर्तेते रजसी वेद्याभिः ।
वैश्वानरो जायमानो न राजावातिरज्ज्योतिषाग्निस्तमांसि ॥१॥

कृष्ण वर्ण रात्रि एवं शुक्ल वर्ण दिवस अपने वर्षों से संसार को नियमित रूप से रंगते रहते हैं । हे वैश्वानर अग्निदेव ! आप तेजस्वी स्वामी के तुल्य प्रकट होकर अन्धकार को नष्ट करते हैं ॥१॥

नाहं तन्तुं न वि जानाम्योतुं न यं वयन्ति समरेऽतमानाः ।
कस्य स्वित्पुत्र इह वक्त्वानि परो वदात्यवरेण पित्रा ॥२॥

हम सीधे अथवा तिरछे (तिर्यक) तन्तुओं (ताने-बाने) को नहीं जानते हैं। सतत प्रयत्नशीलों द्वारा बुने गए वस्त्रों के सम्बन्ध में भी अज्ञानी हैं । इस लोक में किसका पुत्र श्रेष्ठ होकर, अपने पिता से मिलकर इस अव्यक्त (विश्व एवं जीवन के ताने-बाने) के सम्बन्ध में सुनिश्चित ढंग से कह सकता है? ॥२॥

स इत्तन्तुं स वि जानात्योतुं स वक्त्वान्यृतुथा वदाति ।

य ईं चिकेतदमृतस्य गोपा अवश्चरन्परो अन्येन पश्यन् ॥३॥

वे वैश्वानर अग्निदेव सीधा (ताना) और तिरछा (बाना) दोनों को जानते हैं । ऋतु के अनुसार कर्मों का उपदेश वहीं करते हैं। जो अग्निदेव अमरता के रक्षक होकर भूलोक में विचरण करते हैं, वे ही दूर आकाश में रहकर आदित्यरूप से सबके द्रष्टा हैं ॥३॥

अयं होता प्रथमः पश्यतेममिदं ज्योतिरमृतं मर्त्येषु ।
अयं स जज्ञे ध्रुव आ निषत्तोऽमर्त्यस्तन्वा वर्धमानः ॥४॥

ये वैश्वानर अग्निदेव ही प्रथम होता हैं । हे मनु पुत्रो ! इन्हें भली-भाँति जानो । वे अग्निदेव अविनाशी, स्थिर, सर्वत्र व्याप्त एवं शरीर से नित्य बढ़ने वाले हैं। वे ही मरणधर्मा प्राणियों के बीच अमर-ज्योति स्वरूप हैं ॥४॥

ध्रुवं ज्योतिर्निहितं दृशये कं मनो जविष्ठं पतयत्स्वन्तः ।
विश्वे देवाः समनसः सकेता एकं क्रतुमभि वि यन्ति साधु ॥५॥

स्थिर रहते हुए भी मन की अपेक्षा तीव्रगामी वैश्वानर अग्निदेव, समस्त प्राणियों में आनन्ददायक मार्गों को दिखाने के निमित्त निवास करते हैं। समस्त देवगण, एक मन एवं समान प्रज्ञा वाले होकर, श्रेष्ठं कर्म करने वाले वैश्वानरदेव के सम्मुख आते हैं ॥५॥

वि मे कर्णा पतयतो वि चक्षुर्वीदं ज्योतिर्हृदय आहितं यत् ।
वि मे मनश्चरति दूरआधीः किं स्विद्वक्ष्यामि किमु नू मनिष्ये ॥६॥

हे वैश्वानर अग्निदेव ! हमारे कान आपके गुणों को सुनने के लिए एवं हमारे नेत्र आपके दिव्य दर्शन के निमित्त लालायित हैं । अन्तः स्थित ज्योति, बुद्धि आपके स्वरूप को जानने की कामना करती हैं। दूरस्थ ज्योति का विचार करने वाला यह मन इधर-उधर फिरता है । हम और अधिक क्या सोचें और क्या कहें ? ॥६॥

विश्वे देवा अनमस्यन्भियानास्त्वामग्ने तमसि तस्थिवांसम् ।
वैश्वानरोऽवतूतये नोऽमर्त्योऽवतूतये नः ॥७॥

हे वैश्वानर अग्निदेव ! अन्धकार में (ज्योति की तरह) निवास करने वाले आपको समस्त देवगण प्रणाम करते हैं। अन्धकार से डरे हुए हम सबकी रक्षा ये अमर वैश्वानर अग्निदेव करें ॥७॥

सूक्त १०

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप, ७ द्विपदा विराट

पुरो वो मन्द्रं दिव्यं सुवृक्तिं प्रयति यज्ञे अग्निमध्वरे दधिध्वम् ।
पुर उक्थेभिः स हि नो विभावा स्वध्वरा करति जातवेदाः ॥१॥

हे विज्ञजनो ! आप लोग इस यज्ञ को निर्दोष एवं निर्विघ्न सम्पन्न करने के लिए स्तोत्रों का गान करते हुए कल्याणकारी अग्निदेव को अपने सम्मुख स्थापित करें । वे देदीप्यमान अग्निदेव हमारे यज्ञों को सफल बनाते हैं ॥१॥

तमु द्युमः पुर्वणीक होतरग्ने अग्निभिर्मनुष इधानः ।
स्तोमं यमस्मै ममतेव शूषं घृतं न शुचि मतयः पवन्ते ॥२॥

अनेक देदीप्यमान ज्वालाओं वाले हे अग्निदेव ! आप देवगणों का आवाहन करने वाले हैं । हे अग्निदेव ! आप अन्य अग्नियों के सहित प्रज्वलित होकर, सुखकर, पवित्र एवं घी की भाँति बल बढ़ाने में समर्थ, परम श्रेष्ठ स्तोत्रको सुनें । इन स्तोत्रों का बुद्धिमान् स्तोताओं द्वारा आत्मीयतापूर्वक उच्चारण किया जाता है ॥२॥

पीपाय स श्रवसा मर्त्येषु यो अग्नये ददाश विप्र उक्थैः ।
चित्राभिस्तमूतिभिश्चित्रशोचिर्व्रजस्य साता गोमतो दधाति ॥३॥

अग्निदेव के निमित्त स्तोत्रगान सहित हवि अर्पित करने वाले मनुष्यों को अग्निदेव समृद्धि प्रदान करते हैं। वे अद्‌भुत रक्षा साधनों सहित गौओं (पोषक प्रवाहों अथवा इन्द्रियों) के समूह हेतु सहायक बनते हैं ॥३॥

आ यः पप्रौ जायमान उर्वी दूरेदृशा भासा कृष्णाध्वा ।
अध बहु चित्तम ऊर्म्यायास्तिरः शोचिषा ददृशे पावकः ॥४॥

कृष्णमार्ग (धुएँ के साथ उत्पन्न होने वाले अग्निदेव प्रकट होकर दूर से दिखाई देने वाली कान्ति के द्वारा द्यावा-पृथिवी को आच्छादित करते हैं । वे अग्निदेव रात्रि के गहन अन्धकार को अपने प्रकाश से दूर करते दिखाई देते हैं ॥४॥

नू नश्चित्रं पुरुवाजाभिरूती अग्ने रयिं मघवद्भ्यश्च धेहि ।
ये राधसा श्रवसा चात्यन्यान्त्सुवीर्येभिश्चाभि सन्ति जनान् ॥५॥

हे अग्निदेव ! हम हविष्यान्न सम्पदा वालों के लिए आप प्रचुर धन एवं संरक्षण प्रदान करें। अन्न, धन, यश एवं पराक्रमी पुत्र प्रदान करें, जो अन्य मनुष्यों से श्रेष्ठ हो ॥५॥

इमं यज्ञं चनो धा अग्न उशन्यं त आसानो जुहुते हविष्मान् ।
भरद्वाजेषु दधिषे सुवृक्तिमवीर्वाजस्य गध्यस्य सातौ ॥६॥

हे अग्निदेव ! हविष्यान्न आपको प्रिय है । आपके लिए याजक जो हविष्यान्न युक्त हवि अर्पित करते हैं, आप उसे ग्रहण करें । उन यजमानों पर कृपा करके उन्हें अनेकानेक अन्न प्रदान करें ॥६॥

वि द्वेषांसीनुहि वर्धयेळां मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥७॥

हे अग्निदेव ! आप हमसे द्वेष करने वाले हमारे शत्रुओं को दूर करें । हमारे अन्न को बढ़ाये । हम उत्तम पराक्रमी पुत्र-पौत्रादि से युक्त होकर सौ हेमन्त तक आनन्द से रहें ॥७॥

सूक्त ११

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

यजस्व होतरिषितो यजीयानग्ने बाधो मरुतां न प्रयुक्ति ।
आ नो मित्रावरुणा नासत्या द्यावा होत्राय पृथिवी ववृत्याः ॥१॥

हे देवगणों को बुलाने वाले तेजस्वी अग्निदेव ! आप हमारे द्वारा पूजित होकर मरुद्गणों को संगठित करें तथा मित्र, वरुण, ऋतदेवों, अश्विनीकुमारों तथा द्यावा-पृथिवी को हमारे यज्ञ में आहूत करें ॥१॥

त्वं होता मन्द्रतमो नो अध्रुगन्तर्देवो विदथा मर्त्येषु ।
पावकया जुह्वा वह्निरासाग्ने यजस्व तन्वं तव स्वाम् ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप पूजनीय हैं, हम मनुष्यों के प्रति द्रोहरहित हैं। आप आहुतियों को ले जाने वाले एवं आनन्ददाता हैं। देवगणों के मुखरूपी हे अग्निदेव ! आप हविग्रहण करके अपने शरीर का भी पोषण करें ॥२॥

धन्या चिद्धि त्वे धिषणा वष्टि प्र देवाञ्जन्म गृणते यजध्यै ।
वेपिष्ठो अङ्गिरसां यद्ध विप्रो मधु च्छन्दो भनति रेभ इष्टौ ॥३॥

हे अग्निदेव ! धन की इच्छुक बुद्धि आपकी भक्ति करती है । इन्द्रादि देवों की प्रसन्नता के लिए किए जाने वाले यज्ञ आपके प्रसन्न (प्रज्वलित) होने पर ही सफल होते हैं। अङ्गिरा ऋषि, सर्वोत्तम प्रेकार से आपकी स्तुति करते हैं एवं विद्वान् भारद्वाज मधुर छन्दों का गान करते है ॥३॥

अदिद्युतत्स्वपाको विभावाग्ने यजस्व रोदसी उरूची ।
आयुं न यं नमसा रातहव्या अञ्जन्ति सुप्रयसं पञ्च जनाः ॥४॥

बुद्धिमान् और आभायुक्त अग्निदेव अति विशिष्ट प्रकार से शोभायुक्त हो रहे हैं। आप विस्तृत द्युलोक एवं भूलोक का आहुतियों द्वारा पोषण करते हैं । पाँचों वर्ण के लोग अतिथि जैसे सत्कार सहित, श्रेष्ठ हवि ग्रहण करने वाले अग्निदेव को हविष्यान्न द्वारा तृप्त करें ॥४॥

वृञ्जे ह यन्नमसा बर्हिरग्नावयामि सुग्घृतवती सुवृक्तिः ।
अम्यक्षि सद्म सदने पृथिव्या अश्रायि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः ॥५॥

जब पृथ्वी पर यज्ञशाला में यज्ञवेदी की रचना करके श्रेष्ठ निर्दोष घृत से युक्त सुचा आदि साधन तैयार किये जाते हैं, तब अन्न की आहुतियाँ प्रदान की जाती हैं। जैसे सूर्य से नेत्र आश्रय पाते हैं (सूर्य प्रकाश में देखते हैं) जैसे ही याजक द्वारा किये गये यजन से यज्ञदेव वृद्धि प्राप्त करते हैं ॥५॥

दशस्या नः पुर्वणीक होतर्देवेभिरग्ने अग्निभिरिधानः ।
रायः सूनो सहसो वावसाना अति स्रसेम वृजनं नांहः ॥६॥

अनेकानेक अग्नि शिखाओं वाले एवं देवताओं का आवाहन करने वाले हे. अग्निदेव ! आप विविधं दिव्य अग्नियों सहित प्रसन्न होकर हमें धन प्रदान करें । हे बल उत्पादक अग्निदेव ! आप हम हवि प्रदानकर्ताओं को शत्रुवत् पाप से भी बचाएँ ॥६॥

सूक्त १२

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

मध्ये होता दुरोणे बर्हिषो राळग्निस्तोदस्य रोदसी यजध्यै ।
अयं स सूनुः सहस ऋतावा दूरात्सूर्यो न शोचिषा ततान ॥१॥

देवताओं के आवाहनकर्ता एवं यज्ञपालक अग्निदेव द्यावा-पृथिवी को पुष्ट करने के लिए याजक के घर में प्रतिष्ठित होते हैं । वे बलोत्पादक यज्ञकर्ता अग्निदेव अपने तेज से सम्पूर्ण जगत को उसी तरह प्रकाशित करते हैं जिस तरह सूर्यदेव दूर से ही सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित करते हैं ॥१॥

आ यस्मिन्त्वे स्वपाके यजत्र यक्षद्राजन्त्सर्वतातेव नु द्यौः ।
त्रिषधस्थस्ततरुषो न जंहो हव्या मघानि मानुषा यजध्यै ॥२॥

हे तेजस्वी पूज्य यज्ञशील अग्निदेव ! आप मनुष्यों द्वारा दिये गये हव्य पदार्थों को तीनों लोकों में तारक सूर्यदेव की तरह व्याप्त होकर देवताओं तक पहुँचाते हैं । (अतएव) हम सभी योजक श्रद्धा सहित हवि अर्पित करते हैं ॥३॥

तेजिष्ठा यस्यारतिर्वनेराट् तोदो अध्वन्न वृधसानो अद्यौत् ।
अद्रोघो न द्रविता चेतति त्मन्नमर्त्योऽवर्त्र ओषधीषु ॥३॥

वे अग्निदेवे दीप्ति के बढ़ने से सूर्यदेव के समान ही अपने मार्ग को प्रकाशित करते हैं। जो सर्वव्यापी अति-दीप्त ज्वालाओं के द्वारा वन में प्रज्वलित होते हैं, वे अमर, द्रोह रहित, न रोके जा सकें, ऐसे अग्निदेव सभी 'का कल्याण करते हुए समस्त जगत् को प्रकाशित करें ॥३॥

सास्माकेभिरेतरी न शूषैरग्निः ष्टवे दम आ जातवेदाः ।
द्रवन्नो वन्वन्क्रत्वा नार्वास्रः पितेव जारयायि यज्ञैः ॥४॥

ये ज्ञानी अग्निदेव यज्ञकर्ताओं के द्वारा गाये गये गायन (स्तोत्र) से जिस प्रकार प्रसन्न होते हैं, उसी प्रकार हमारे द्वारा गाये जा रहे उत्तम स्तोत्रों से प्रसन्न होते हैं । बल में वृषभ के समान गति में अश्व के समान तथा वृक्षों को भस्म करने वाले अग्निदेव की यजनकर्ता मनुष्य स्तुति करते हैं ॥४॥

अध स्मास्य पनयन्ति भासो वृथा यत्तक्षदनुयाति पृथ्वीम् ।
सद्यो यः स्यन्द्रो विषितो धवीयानृणो न तायुरति धन्वा राट् ॥५॥

जब अग्निदेव सहज ही जङ्गलों को जलाकर पृथ्वी पर विचरते हैं, पृथ्वी पर प्रकाशित होने वाले अति वेग से व बिना प्रतिबन्ध के भ्रमण करते हैं, तब उन अग्निदेव की आभा की स्तुति इस लोक के स्तोता मनुष्य करते हैं ॥५॥

स त्वं नो अर्वन्निदाया विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिधानः ।

वेषि रायो वि यासि दुच्छुना मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥६॥

हे शत्रुनाशक अग्निदेव ! आप अपनी विविध अग्नियों सहित प्रकट होते हैं। आप निन्दाओं से हमारी रक्षा करें तथा हमें सम्पत्ति प्रदान करें। हम श्रेष्ठ योद्धा पुत्र-पौत्रादि से सम्पन्न होकर शत्रुओं की सेना का नाश कर, सौ हेमन्त ऋतुओं तक आनन्द सहित जीवन यापन करें ॥६॥

सूक्त १३

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप

त्वद्विश्वा सुभग सौभगान्यग्ने वि यन्ति वनिनो न वयाः ।
श्रुष्टी रयिर्वाजो वृत्रतूर्ये दिवो वृष्टिरीड्यो रीतिरपाम् ॥१॥

हे श्रेष्ठ भाग्यवान् अग्निदेव ! आप समस्त ऐश्वर्यों के उत्पादक हैं । जैसे वृक्ष से विभिन्न शाखाएँ उत्पन्न होती है, वैसे ही शत्रु को जीतने वाला बल, धन एवं पर्जन्य की वर्षा आप से उत्पन्न होती है । आकाश से वर्षा के लिए पानी लाने वाले आप स्तुति करने योग्य हैं ॥१॥

त्वं भगो न आ हि रत्नमिषे परिज्मेव क्षयसि दस्मवर्चाः ।
अग्ने मित्रो न बृहत ऋतस्यासि क्षत्ता वामस्य देव भूरेः ॥२॥

हे भाग्यवान् अग्निदेव ! आप हमें सुन्दर धन प्रदान करें। आप वायु के समान सर्वव्यापी और मित्र के समान सन्मार्ग पर ले जाने वाले हैं। हे तेजस्वी ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२॥

स सत्पतिः शवसा हन्ति वृत्रमग्ने विप्रो वि पणेर्भर्ति वाजम् ।
यं त्वं प्रचेत ऋतजात राया सजोषा नप्त्रापां हिनोषि ॥३॥

श्रेष्ठ ज्ञान सम्पन्न, सत्पुरुषों के पालक हे अग्ने ! आप जिस ऋतजात (यज्ञ से उत्पन्न) ऐश्वर्य को जल न गिरने देने वाले मेघों से संयुक्त होने की प्रेरणा प्रदान करते हैं, वहीं पणि (वर्षा में बाधक असुर तत्व) को नष्ट करता है ॥३॥

यस्ते सूनो सहसो गीर्भिरुक्थैर्यज्ञैर्मर्तो निशितिं वेद्यानट् ।
विश्वं स देव प्रति वारमग्ने धत्ते धान्यं पत्यते वसव्यैः ॥४॥

हे बल के के पुत्र, तेजस्वी अग्निदेव ! जो यज्ञ क्रिया एवं स्तुतियों द्वारा आप (यज्ञ भगवान्) की उपासना करते हुए आपके तेज (दर्शन एवं विज्ञान) को धारण करता है, वह अन्न, धन तथा ऐश्वर्य को प्राप्त करता है ॥४॥

ता नृभ्य आ सौश्रवसा सुवीराग्ने सूनो सहसः पुष्यसे धाः ।
कृणोषि यच्छवसा भूरि पश्वो वयो वृकायारये जसुरये ॥५॥

हे बल के पुत्र अग्निदेव ! आपने जो पशु और अन्न क्रूर, द्वेषकर्ता शत्रुओं (यज्ञ के विरोधी) को प्रदान किया हैं । हे अग्निदेव ! वह सब हम श्रेष्ठ शौर्यवानों के निमित्त प्रदान करें ॥५॥

वह्मा सूनो सहसो नो विहाया अग्ने तोकं तनयं वाजि नो दाः ।
विश्वाभिर्गीर्भिरभि पूर्तिमश्यां मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥६॥

हे बल के पुत्र एवं ज्ञानी अग्निदेव ! आप हमें हितकारी उपदेश करें । हमारी उत्तम कामनाओं की पूर्ति होती रहे । हम धन, अन्न, तथा ऐश्वर्य युक्त पुत्र-पौत्रादि सहित सौ हेमन्त पर्यन्त जीवनयापन करें ॥६॥

सूक्त १४

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – त्रिष्टुप , ५ शक्करी

अग्ना यो मर्त्यो दुवो धियं जुजोष धीतिभिः ।
भसन्नु ष प्र पूर्व्य इषं वुरीतावसे ॥१॥

जो मनुष्य स्तुति सहित यज्ञ करता है एवं सद्बुद्धि प्रेरित कर्म करता है, वह अग्रणी-यशस्वी होता है और सुरक्षा के निमित्त पर्याप्त धन-धान्य प्राप्त करता है ॥१॥

अग्निरिद्धि प्रचेता अग्निर्वेधस्तम ऋषिः ।
अग्निं होतारमीळते यज्ञेषु मनुषो विशः ॥२॥

अग्निदेव ही श्रेष्ठ ज्ञानी एवं सत्कर्म प्रेरक सर्वद्रष्टा हैं । मनुष्य पुत्रादि सहित यज्ञ में इन्हीं की स्तुति करते हैं॥२॥

नाना ह्यग्नेऽवसे स्पर्धन्ते रायो अर्यः ।
तूर्वन्तो दस्युमायवो व्रतैः सीक्षन्तो अव्रतम् ॥३॥

हे अग्निदेव ! जो आपका यजन करता है, वह यज्ञ न करने वालों को पराजित करता है एवं शत्रुओं का धन, ऐश्वर्य उनसे पृथक् होकर (याजको स्तुतिकर्ता को प्राप्त होता हैं ॥३॥

अग्निरप्सामृतीषहं वीरं ददाति सत्पतिम् ।
यस्य त्रसन्ति शवसः संचक्षि शत्रवो भिया ॥४॥

अग्निदेव स्तुति करने वाले स्तोताओं के लिए सन्मार्गगामी, सत्कर्म रक्षक (यज्ञ की रक्षा करने वाले), शत्रुजयी, श्रेष्ठ पुत्र प्रदान करते हैं, जिससे शत्रु भी भयभीत रहते हैं ॥४॥

अग्निर्हि विद्मना निदो देवो मर्तमुरुष्यति ।
सहावा यस्यावृतो रयिर्वाजेष्ववृतः ॥५॥

अग्निदेव ही अपने तेजस्वी ज्ञान, बल के द्वारा निन्दा से याजक की रक्षा करते हैं एवं युद्धकाल में धन को सुरक्षित करते हैं ॥५॥

अच्छा नो मित्रमहो देव देवानग्ने वोचः सुमतिं रोदस्योः ।
वीहि स्वस्तिं सुक्षितिं दिवो नृन्द्विषो अंहांसि दुरिता तरेम ता तरेम तवावसा तरेम ॥६॥

हे मित्र के समान रक्षा करने वाले, तेजस्वी, गुण-सम्पन्न अग्निदेव ! आप द्यावा-पृथिवी में संव्याप्त होकर स्तोताओं द्वारा की जाने वाली स्तुति को देवगणों तक पहुँचाते हैं। आप ही अपने रक्षा साधनों से, पापों से, कष्टों से एवं शत्रुओं से हमारी रक्षा करते हैं। हमें उत्तम आवासादि प्रदान करें ॥६॥

सूक्त १५

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाजो, वीतहव्य अंगिरसो
देवता – अग्नि: । छंद – जगती, ३, २५, शक्करी, ६ अति शक्करी, १०-१४, १६, १९ त्रिष्टुप, १७ अनुष्टुप, १८ वृहती

इममू षु वो अतिथिमुषर्बुधं विश्वासां विशां पतिमृञ्जसे गिरा ।
वेतीद्दिवो जनुषा कच्चिदा शुचिर्ज्योक्चिदत्ति गर्भो यदच्युतम् ॥१॥

जो अग्निदेव अतिथि जैसे पूज्य, प्रजापालक स्वभावतः पवित्र एवं उषाकाल में प्रज्वलित होने वाले हैं, वे-द्युलोक से उत्पन्न होकर द्यावा-पृथिवी के मध्य विचरते हुए निवेदित हवि को ग्रहण करते हैं। हे विज्ञज़न ! ऐसे अग्निदेव की स्तुति कर आप उन्हें प्रसन्न करें ॥१॥

मित्रं न यं सुधितं भृगवो दधुर्वनस्पतावीड्यमूर्ध्वशोचिषम् ।
स त्वं सुप्रीतो वीतहव्ये अद्भुत प्रशस्तिभिर्महयसे दिवेदिवे ॥२॥

हे अरणियों में व्याप्त, स्तुति योग्य, मित्रवत् अग्निदेव ! आपको भृगु आदि ऋषियों ने भी स्थापित किया है । हे अद्भुत अग्निदेव ! आप ऊर्ध्वगामी ज्वालाओं वाले हैं । विज्ञजन प्रतिदिन उत्तम स्तोत्रों से आपकी स्तुति करते हैं । हे अग्निदेव ! आप कृपा करने वाले हैं ॥२॥

स त्वं दक्षस्यावृको वृधो भूरर्यः परस्यान्तरस्य तरुषः ।
रायः सूनो सहसो मर्त्येष्वा छर्दिर्यच्छ वीतहव्याय सप्रथो भरद्वाजाय सप्रथः ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप दयालु होकर चतुर मनुष्यों की सुरक्षा करते हैं। हे अग्निदेव ! आप महान् हैं । हे बल पुत्र ! आप भारद्वाज वंशीय को धन, अन्न एवं निवास प्रदान करें ॥३॥

द्युतानं वो अतिथिं स्वर्णरमग्निं होतारं मनुषः स्वध्वरम् ।
विप्रं न द्युक्षवचसं सुवृक्तिभिर्हव्यवाहमरतिं देवमृञ्जसे ॥४॥

हे विज्ञजनो ! आप देदीप्यमान, दिव्य-गुणयुक्त, हविवाहक, अतिथि के समान पूज्य, मनुष्य यज्ञ में देवगणों को बुलाने वाले, स्वर्ग तक पहुँचाने वाले, उत्तम यज्ञ करने वाले, विद्वानों जैसे कान्तिवान् अग्निदेव को श्रेष्ठ स्तुतियों द्वारा प्रसन्न करें ॥४॥

पावकया यश्चितयन्त्या कृपा क्षामन्नुरुच उषसो न भानुना ।
तूर्वन्न यामन्नेतशस्य नू रण आ यो घृणे न ततृषाणो अजरः ॥५॥

उषा के प्रकाश की आँति अग्निदेव पृथिवीं को पवित्रता एवं चेतना से युक्त करते हुए अपनी तेजस्विता से शोभायमान होते हैं । हे वीतहव्य ! आप उन अग्निदेव की अर्चना करें जो ऐतश ऋषि के रक्षार्थ रणभूमि में शीघ्र चैतन्य होने वाले, सर्वभक्षी तथा अजर हैं ॥५॥

अग्निमग्निं वः समिधा दुवस्यत प्रियम्प्रियं वो अतिथिं गृणीषणि ।
उप वो गीर्भिरमृतं विवासत देवो देवेषु वनते हि वार्यं देवो देवेषु वनते हि नो दुवः ॥६॥

हे स्तोताओ ! आप अतिथि के समान पूज्य एवं अत्यन्त प्रिय अग्निदेव की समिधाओं द्वारा सेवा करें । वे अमर अग्निदेव, देवों में वरणीय सम्पत्ति धारण करते हैं और हमारी अर्चना स्वीकार करते हैं । अस्तु उन अविनाशी अग्निदेव की सेवा वाणी (स्तोत्रों द्वारा करें ॥६॥

समिद्धमग्निं समिधा गिरा गृणे शुचिं पावकं पुरो अध्वरे ध्रुवम् ।
विप्रं होतारं पुरुवारमद्रुहं कविं सुम्नैरीमहे जातवेदसम् ॥७॥

समिधाओं द्वारा प्रकट अग्निदेव की हम वाणी (स्तुतियों) से अर्चना करते हैं । शुद्ध स्थिर और पावन बनाने वाले अग्निदेव को यज्ञ में अग्निम स्थान पर प्रतिष्ठित करते हैं । (विप्र) विशिष्ट ज्ञान सम्पन्न तथा विदाता सभी द्वारा धारण करने योग्य, द्रोह मुक्त, ज्ञानवान् और सर्वज्ञाता अग्निदेव की ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए हम स्तुति करते हैं ॥७॥

त्वां दूतमग्ने अमृतं युगेयुगे हव्यवाहं दधिरे पायुमीड्यम् ।
देवासश्च मर्तासश्च जागृविं विभुं विश्पतिं नमसा नि षेदिरे ॥८॥

हे अग्निदेव ! अमर देवता और मनुष्य प्रत्येक शुभ यज्ञ में, हविदाता, रक्षक और स्तुति योग्य आपको दूतरूप में नियुक्त करते हैं तथा जागृति प्रधान, विस्तारशील और प्रजाजनों की रक्षा में सहायक मानकर मनुष्यगण आप को प्रणाम करते हुए उपासना करते हैं ॥८॥

विभूषन्नग्न उभयाँ अनु व्रता दूतो देवानां रजसी समीयसे ।
यत्ते धीतिं सुमतिमावृणीमहेऽध स्मा नस्त्रिवरूथः शिवो भव ॥९॥

देव एवं मनुष्य दोनों को महिमा-मण्डित करते हुए अनुशासन प्रिय व्रतशील देवों के दूत बनकर दिव्यलोक एवं इस लोक में हवि ले जाने वाले हे अग्निदेव ! हम आपकी स्तुतियाँ करते हैं। तीनों स्थानों (पृथिवी, अन्तरिक्ष, द्युलोक) में विचरणशील आप हमें सुख प्रदान करें ॥९॥

तं सुप्रतीकं सुदृशं स्वञ्चमविद्वांसो विदुष्टरं सपेम ।
स यक्षद्विश्वा वयुनानि विद्वान्प्र हव्यमग्निरमृतेषु वोचत् ॥१०॥

मनोहर रूप वाले, गमनशील, सर्वज्ञ एवं शोभनाङ्ग अग्निदेव का हम अल्पज्ञ मानव यजन करें । वे सर्वकर्म ज्ञाता हमारी हवियों का वर्णन देवताओं से करें एवं देवगणों के निमित्त यज्ञ सम्पन्न करें ॥१०॥

तमग्ने पास्युत तं पिपर्षि यस्त आनट् कवये शूर धीतिम् ।
यज्ञस्य वा निशितिं वोदितिं वा तमित्पृणक्षि शवसोत राया ॥११॥

हे शौर्यवान् अग्निदेव ! जो बुद्धिमान मनुष्य आपके निमित्त कर्म करते हैं, आप उनकी रक्षा करते हुए उनकी श्रेष्ठ कामनाओं की पूर्ति करें । जो याजक संस्कारवान् रहकर प्रगति करते हुए यज्ञ करते हैं, उन्हें आप प्रचुर बल प्रदान करें ॥११॥

त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात् ।
सं त्वा ध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री ॥१२॥

हे पराक्रमी अग्निदेव ! आप हमारी शत्रुओं एवं पापों से रक्षा करें, हमारे द्वारा अर्पित हवि को ग्रहण करें एवं स्तुति करने वालों को स्पृहा करने योग्य सहस्र प्रकार का ऐश्वर्य प्रदान करें ॥१२॥

अग्निर्होता गृहपतिः स राजा विश्वा वेद जनिमा जातवेदाः ।
देवानामुत यो मर्त्यानां यजिष्ठः स प्र यजतामृतावा ॥१३॥

तेजस्वी, सर्वज्ञ, देवगणों का आवाहन करने वाले, सब प्राणियों के ज्ञाता अग्निदेव हमारे घरों के स्वामी हैं। जो अग्निदेव मनुष्यों और देवताओं में श्रेष्ठ याजक हैं, वे सत्यवान् अग्निदेव सविधि यज्ञ करें ॥१३॥

अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः पावकशोचे वेष्टुं हि यज्वा ।
ऋता यजासि महिना वि यद्भूर्हव्या वह यविष्ठ या ते अद्य ॥१४॥

हे पावन ज्वालाओं वाले यज्ञकर्ता अग्निदेव ! आप देवताओं के निमित्त यज्ञ करने वाले हैं। आप इस यज्ञ में देवताओं का यज्ञ करें एवं इस समय याजक जिस इच्छा से यज्ञ करता है उसकी इच्छा पूर्ण करें। हे चिरयुवा अग्निदेव ! आप स्वयं की महानता के कारण ही मह्मन् हैं । आप हमारी हवियों को ग्रहण करें ॥१४॥

अभि प्रयांसि सुधितानि हि ख्यो नि त्वा दधीत रोदसी यजध्यै ।
अवा नो मघवन्वाजसातावग्ने विश्वानि दुरिता तरेम ता तरेम तवावसा तरेम ॥१५॥

है अग्निदेव ! याजक ने द्यावा-पृथिवी के निमित्त यज्ञ करने के लिए आपको प्रतिष्ठित किया है । आप वेदी पर अच्छी तरह से रखे गये हवि को देखें । हे अग्निदेव ! संग्राम में आप हमारी रक्षा करें ताकि समस्त दु:खों से हम बच जायें ॥१५॥

अग्ने विश्वेभिः स्वनीक देवैरूर्णावन्तं प्रथमः सीद योनिम् ।

कुलायिनं घृतवन्तं सवित्रे यज्ञं नय यजमानाय साधु ॥१६॥

ये अग्निदेव समस्त देवगणों में अग्रणी हैं । है सुन्दर ज्वालाओं वाले अग्निदेव ! आप ऊन के आसन एवं घृतयुक्त यज्ञ वेदी पर विराजमान होकर हवि देने वाले यजमान के यज्ञ को उत्तम प्रकार से देवताओं तक पहुँचाएँ ॥१६॥

इममु त्यमथर्ववदग्निं मन्थन्ति वेधसः ।
यमङ्कूयन्तमानयन्नमूरं श्याव्याभ्यः ॥१७॥

कर्म (यज्ञ) कर्ता, ज्ञान, ऋत्विग्गण अथर्वा अषि के जैसा मंथन करके अग्नि को उत्पन्न करते हैं । इधर-उधर भ्रमणशील ज्ञानी अग्निदेव को उस अंधेरे स्थान से लाकर, यहाँ (यज्ञवेदी) पर स्थापित करते हैं ॥१७॥

जनिष्वा देववीतये सर्वताता स्वस्तये ।
आ देवान्वक्ष्यमृताँ ऋतावृधो यज्ञं देवेषु पिस्पृशः ॥१८॥

हे अग्निदेव ! आप अरणिर्मथन द्वारा प्रकट होकर देवताओं की कामना वाले यजमान के कल्याण को सुस्थिर करें । आप यज्ञवर्धक अमर देवगणों का यज्ञ में आवाहन करें और हमारे यज्ञ को देवताओं तक पहुँचाएँ ॥१८॥

वयमु त्वा गृहपते जनानामग्ने अकर्म समिधा बृहन्तम् ।
अस्थूरि नो गार्हपत्यानि सन्तु तिग्मेन नस्तेजसा सं शिशाधि ॥१९॥

हे यज्ञरक्षक अग्निदेव ! हम समिधाओं द्वारा प्राणियों के मध्य आपको प्रदीप्त करते हैं । गार्हपत्य अग्निदेव हमें पुत्र, पशु और अनेक ऐश्वर्य प्रदान करें। आप हमें तेजस्विता प्रदान करें ॥१९॥

सूक्त १६

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – अग्नि: । छंद – गायत्री, १,६ वर्धमाना, २७, ४७ -४८
अनुष्टुप, ४६ त्रिष्टुप

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः ।
देवेभिर्मानुषे जने ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप होता और देवगणों के आवाहनकर्ता हैं । आप मनुष्यों के यज्ञ में देवताओं द्वारा होता निर्धारित किये गये हैं ॥१॥

स नो मन्द्राभिरध्वरे जिह्वाभिर्यजा महः ।
आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी महान् ज्वालाओं सहित इस यज्ञ में देवगणों की स्तुति करें एवं इन्द्रादि देवताओं का आवाहन करके उन्हें हवि प्रदान करें ॥२॥

वेत्था हि वेधो अध्वनः पथश्च देवाञ्जसा ।
अग्ने यज्ञेषु सुक्रतो ॥३॥

हे नियन्ता, श्रेष्ठकर्मा अग्निदेव ! आप यज्ञ के निकटस्थ एवं दूरस्थ (प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष) सभी मार्गों के ज्ञाता हैं। आप याजकों को उचित मार्गदर्शन करें ॥३॥

त्वामीळे अध द्विता भरतो वाजिभिः शुनम् ।
ईजे यज्ञेषु यज्ञियम् ॥४॥

हे तेजरूप अग्निदेव ! भरत अनेक ऋत्विजों के साथ मिलकर लौकिक एवं अलौकिक दोनों प्रकार के सुख प्राप्त करने के लिए आपकी स्तुति करते हैं। हे यजनीय ! आपके द्वारा ही अनिष्टों का शमन एवं इच्छाओं की पूर्ति होती है। हम आपकी स्तुति और यज्ञ करते हैं ॥४॥

त्वमिमा वार्या पुरु दिवोदासाय सुन्वते ।
भरद्वाजाय दाशुषे ॥५॥

हे अग्निदेव ! आपने सोम सिद्धकर्ता 'दिवोदास' को बहुत सा ऐश्वर्य प्रदान किया था, उसी प्रकार 'भरद्वाज (हवि देने वाले को भी धन-ऐश्वर्य प्रदान करें ॥५॥

त्वं दूतो अमर्त्य आ वहा दैव्यं जनम् ।
शृण्वन्विप्रस्य सुष्टुतिम् ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप अमर हैं, आप दूत हैं ; (अतः) विद्वान् भरद्वाज द्वारा की जा रही स्तुति को सुनने के लिए देवगणों का हमारे यज्ञ में आवाहन करें ॥६॥

त्वामग्ने स्वाध्यो मर्तासो देववीतये ।
यज्ञेषु देवमीळते ॥७॥

वल अर्थात् घर्षण से प्रकट होने वाले सौन्दर्यवान् हे अग्निदेव ! हम याजकगण धन-धान्य एवं आपका सान्निध्य प्राप्त करने की कामना से वन्दना करते हैं ॥७॥

तव प्र यक्षि संदृशमुत क्रतुं सुदानवः ।
विश्वे जुषन्त कामिनः ॥८॥

स्वर्ण सदृश जाज्वल्यमान हे अग्निदेव ! छाया में मिलने वाली शीतलता की तरह हम आपके संरक्षण में रहकर सुख प्राप्त करें ॥८॥

त्वं होता मनुर्हितो वह्निरासा विदुष्टरः ।
अग्ने यक्षि दिवो विशः ॥९॥

बैल के सींग की भाँति तेजस्वी ज्वालाओं वाले, वीर धनुर्धर के समान पराक्रमी हे अग्निदेव ! आपने दुष्टों के आश्रय-स्थलों को नष्ट किया है ॥९॥

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥१०॥

हे अग्निदेव ! हे प्रकाशक एवं सर्वव्यापक देव ! हवि को गति देने (वीति के लिए आप पधारें। सब आपकी स्तुति करते हैं । यज्ञ में हम

आपका आवाहन करते हैं, क्योंकि आप सब पदार्थों को प्रदान करने वाले हैं ॥१०॥

तं त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि ।
बृहच्छोचा यविष्ठ्य ॥११॥

हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन् ! हम आपको समिधाओं तथा घृत द्वारा प्रदीप्त करते हैं। अतः हे सामर्थ्यवान् ! आप अधिक प्रखर हों ॥११॥

स नः पृथु श्रवाय्यमच्छा देव विवाससि ।
बृहदग्ने सुवीर्यम् ॥१२॥

हे अग्निदेव ! आप ऐसी कृपा करें कि हम महान् पराक्रम और श्रेष्ठ यशस्वी सामर्थ्य प्राप्त हो ॥१२॥

त्वामग्ने पुष्करादध्यथर्वा निरमन्थत ।
मूर्ध्नो विश्वस्य वाघतः ॥१३॥

परम श्रेष्ठ, अखिल विश्व के धारणकर्ता हे अग्निदेव ! अथर्वा (विज्ञानवेत्ता अथवा प्रधान पुरोहित) ने आपको विश्व के महानतम आधार के रूप में अरणि मन्थन द्वारा प्रकट किया ॥१३॥

तमु त्वा दध्यङ्ङृषिः पुत्र ईधे अथर्वणः ।
वृत्रहणं पुरंदरम् ॥१४॥

हे अग्निदेव ! 'अथर्वा' के पुत्र 'दध्यङ्' ऋषि ने आपको प्रथम प्रदीप्त किया। आप शत्रुसंहारक एवं उनके नगरों को नष्ट करने वाले हैं ॥१४॥

तमु त्वा पाथ्यो वृषा समीधे दस्युहन्तमम् ।
धनंजयं रणेरणे ॥१५॥

हे अग्निदेव !"पाथ्य वृषा" (इस नाम के अंष अथवा सन्मार्गगामी बलवान्) ने आपको प्रदीप्त किया । आप असुर संहारक तथा युद्ध में जीतने वाले हैं ॥१५॥

एह्यू षु ब्रवाणि तेऽग्न इत्थेतरा गिरः ।
एभिर्वर्धास इन्दुभिः ॥१६॥

हम आपके लिए ही स्तुति करते हैं। आप इन्हें सुनकर प्रकट हों और इस सोमरस से अपनी महानता का विस्तार करें ॥१६॥

यत्र क्व च ते मनो दक्षं दधस उत्तरम् ।
तत्रा सदः कृणवसे ॥१७॥

हे अग्निदेव ! आप जिस क्षेत्र एवं याजक से प्रसन्न होते हैं, वहाँ अधिकाधिक बल धारण कराते हैं और वहीं आवास भी बनाते हैं ॥१७॥

नहि ते पूर्तमक्षिपद्भुवन्नेमानां वसो ।
अथा दुवो वनवसे ॥१८॥

हे अग्निदेव ! आपका तेज़ चक्षुओं के लिए हानिकारक नहीं है । हे व्रतपालक मानवो के स्वामी ! आप हमारी प्रार्थना स्वीकार करें ॥१८॥

आग्निरगामि भारतो वृत्रहा पुरुचेतनः ।
दिवोदासस्य सत्पतिः ॥१९॥

वे अग्निदेव आहुतियों के अधिपति और वे ही दिवोदास के शत्रुओं के संहारक हैं । हे याजको ! वे अग्निदेव रक्षक एवं सर्वज्ञ हैं । हम स्तुतियों द्वारा अग्निदेव का आवाहन करते हैं ॥१९॥

स हि विश्वाति पार्थिवा रयिं दाशन्महित्वना ।
वन्वन्नवातो अस्तृतः ॥२०॥

जो अग्निदेव अपराजित, शत्रुनाशक और अहिंसित हैं। वे अग्निदेव ही अपनी सामर्थ्य से हमें पृथ्वी पर श्रेष्ठ धन-ऐश्वर्य प्रदान करते हैं ॥२०॥

स प्रत्नवन्नवीयसाग्ने द्युम्नेन संयता ।
बृहत्ततन्थ भानुना ॥२१॥

हे अग्निदेव ! आप इस विस्तार वाले अन्तरिक्ष को अपने संयमित एवं नवीन तेज से वैसे ही प्रकाशित कर रहे हैं, जैसे कि पहले प्रकाशित करते थे ॥२१॥

प्र वः सखायो अग्नये स्तोमं यज्ञं च धृष्णुया ।
अर्च गाय च वेधसे ॥२२॥

हे ऋत्विजो ! आप ईश्वर के समान शक्तिमान् और शत्रुविनाशक अग्निदेव को आहुतियों एवं उत्तम स्तुतियों द्वारा प्रसन्न करें ॥२२॥

स हि यो मानुषा युगा सीदद्धोता कविक्रतुः ।
दूतश्च हव्यवाहनः ॥२३॥

जो अग्निदेव मेधावी, हविवाहक एवं यज्ञकर्म में देवदूत और देवों का आवाहन करते हैं, वे अग्निदेव हमारे इस यज्ञ में कुशाओं पर प्रतिष्ठित हों ॥२३॥

ता राजाना शुचिव्रतादित्यान्मारुतं गणम् ।
वसो यक्षीह रोदसी ॥२४॥

हे अग्निदेव ! आप इस यज्ञ में आएँ और प्रसिद्ध, शुभकर्म करने वाले मित्रावरुण, मरुत् एवं द्यावा-पृथिवी के लिए यजन करें। आप श्रेष्ठ निवास प्रदान करते हैं ॥२४॥

वस्वी ते अग्ने संदृष्टिरिषयते मर्त्याय ।
ऊर्जो नपादमृतस्य ॥२५॥

हे अग्निदेव ! आप अमर एवं बलशाली हैं। आप की सतेज दृष्टि (कृपा) अन्न की इच्छा वाले याजकों को अन्न-धन प्रदान कराती है ॥२५॥

क्रत्वा दा अस्तु श्रेष्ठोऽद्य त्वा वन्वन्त्सुरेक्णाः ।
मर्त आनाश सुवृक्तिम् ॥२६॥

हे अग्निदेव ! आज याजक आपकी सेवा (यज्ञ) करने वाले एवं श्रेष्ठकर्म करने वाले बनें वे सदैव ही उत्तम सम्भाषण करें ॥२६॥

ते ते अग्ने त्वोता इषयन्तो विश्वमायुः ।
तरन्तो अर्यो अरातीर्वन्वन्तो अर्यो अरातीः ॥२७॥

हे अग्निदेव ! आपकी स्तुति करने वाले आपकी सुरक्षा में रहकर, शत्रुओं की सेना को जीतकर, शत्रुओं का नाश करते हैं एवं पूर्ण आयु तक अन्नादि सहित सुखों से पूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं ॥२७॥

अग्निस्तिग्मेन शोचिषा यासद्विश्वं न्यत्रिणम् ।
अग्निर्नो वनते रयिम् ॥२८॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी प्रज्वलित, तीक्ष्ण ज्वालाओं से विघ्नकारक तत्त्वों (शत्रुओं) को नष्ट करें और जो आपकी उपासना तथा स्तुति करते हैं, उनको बल एवं ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२८॥

सुवीरं रयिमा भर जातवेदो विचर्षणे ।
जहि रक्षांसि सुक्रतो ॥२९॥

हे सर्वज्ञाता अग्निदेवे ! आप दुष्टों का संहारकर , हमें श्रेष्ठ सन्तानयुक्त ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२९॥

त्वं नः पाह्यंहसो जातवेदो अघायतः ।
रक्षा णो ब्रह्मणस्कवे ॥३०॥

हे ज्ञानी अग्निदेव ! आप ज्ञान के द्रष्टा हैं । आप पाप और पापी शत्रुओं से हमारी रक्षा करें ॥३०॥

यो नो अग्ने दुरेव आ मर्तो वधाय दाशति ।
तस्मान्नः पाह्यंहसः ॥३१॥

हे अग्निदेव ! आप हमें उस मनुष्य से बचाएँ, जो दुर्भावनापूर्वक हमें मारने के लिए प्रयत्न करता है । पापों से भी हमारी रक्षा करें ॥३१॥

त्वं तं देव जिह्वया परि बाधस्व दुष्कृतम् ।
मर्तो यो नो जिघांसति ॥३२॥

हे अग्निदेव !आप अपनी तेजस्विता बढ़ाकर उनका संहार करें, जो दुष्ट हमें मारने का अभिप्राय रखते हैं ॥३२॥

भरद्वाजाय सप्रथः शर्म यच्छ सहन्त्य ।
अग्ने वरेण्यं वसु ॥३३॥

हे अग्निदेव !आप तेजस्वी हैं, आप भरद्वाज को सबै प्रकार का यशस्वी निवास प्रदान करें तथा श्रेष्ठ धन दें ॥३३॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनद्द्रविणस्युर्विपन्यया ।
समिद्धः शुक्र आहुतः ॥३४॥

सत्प्रयासों से प्रसन्न होकर याजकों को प्रसन्नता प्रदान करने वाले हे प्रदीप्त अग्निदेव ! हमें बन्धन में रखने वाली दुष्ट वृत्तियों का विनाश करें ॥३४॥

गर्भे मातुः पितुष्पिता विदिद्युतानो अक्षरे ।
सीदन्नृतस्य योनिमा ॥३५॥

पृथ्वी माता के गर्भ में विशेष रूप से देदीप्यमान एवं अन्तरिक्ष में संरक्षक की भूमिका में नियुक्त अग्निदेव यज्ञवेदी पर विराजमान हैं ॥३५॥

ब्रह्म प्रजावदा भर जातवेदो विचर्षणे ।
अग्ने यद्दीदयद्दिवि ॥३६॥

सब जानने वाले दिव्य-द्रष्टा, हे अग्निदेव ! अन्तरिक्षलोक में देवों को प्राप्त सुख, ऐश्वर्य एवं सन्तान आदि से हमें भी सम्पन्न करें ॥३६॥

उप त्वा रण्वसंदृशं प्रयस्वन्तः सहस्कृत ।
अग्ने ससृज्महे गिरः ॥३७॥

हे बल-पुत्र अग्निदेव !आप रमणीय दिखाई देते हैं। हम हविष्यान्न अर्पित करते हुए आपकी स्तुति करते हैं ॥३७॥

उप च्छायामिव घृणेरगन्म शर्म ते वयम् ।
अग्ने हिरण्यसंदृशः ॥३८॥

हे अग्निदेव ! आप स्वर्णमयी आभा वाले हैं। आपके सामीप्य से हमें वैसा ही सुख मिलता है, जैसा कि थके हुए प्राणियों को छाया में मिलता है ॥३८॥

य उग्र इव शर्यहा तिग्मशृङ्गो न वंसगः ।
अग्ने पुरो रुरोजिथ ॥३९॥

हे अग्निदेव ! आप महान योद्धा के बाणों एवं बैल के तीक्ष्ण सींगों के समान शत्रुओं का संहार करते हैं। हे देव ! आपने ही असुरों के तीन नगरों को नष्ट किया है ॥३९॥

आ यं हस्ते न खादिनं शिशुं जातं न बिभ्रति ।
विशामग्निं स्वध्वरम् ॥४०॥

(अरणि मन्थन से उत्पन्न) अग्नि को अध्वर्युगण नवजात शिशु की तरह (प्रेमभाव से) हाथ में धारण करते हैं । हे ऋत्विजो ! आप हिंसक पशु की भाँति सावधानी से अग्नि की परिचर्या करें ॥४०॥

प्र देवं देववीतये भरता वसुवित्तमम् ।
आ स्वे योनौ नि षीदतु ॥४१॥

हे अध्वर्यो ! आप देवगणों के निमित्त, इन तेजस्वी एवं ऐश्वर्यवान् अग्निदेव को यज्ञवेदी पर स्थापित करते हुए हव्य अर्पित करें ॥४१॥

आ जातं जातवेदसि प्रियं शिशीतातिथिम् ।
स्योन आ गृहपतिम् ॥४२॥

हे अध्वर्यो ! आप अतिथि जैसे पूज्य, गृहपति अग्निदेव को यज्ञवेदी पर स्थापित कर, ज्ञानी, सुखकर अग्निदेव को उत्तम हवि अर्पित करें ॥४२॥

अग्ने युक्ष्वा हि ये तवाश्वासो देव साधवः ।
अरं वहन्ति मन्यवे ॥४३॥

हे ज्योतिर्मान् अग्निदेव ! आप उन समस्त श्रेष्ठ एवं कुशल अश्वों (ऊर्जा धाराओं) को नियोजित करें, जो आपको यज्ञ हेतु वहन करते हैं ॥४३॥

अच्छा नो याह्या वहाभि प्रयांसि वीतये ।
आ देवान्त्सोमपीतये ॥४४॥

हे अग्निदेव ! हवि ग्रहण करने और सोमपान करने के निमित्त आप हमारी ओर उन्मुख हों और देवों को भी प्रकट करें ॥४४॥

उदग्ने भारत द्युमदजस्रेण दविद्युतत् ।
शोचा वि भाह्यजर ॥४५॥

संसार का भरण-पोषण करने वाले हे अग्निदेव ! आप प्रज्वलित होकर उन्नत हों, कभी क्षीण न होने वाले अपने तेज से प्रकाशित हों और जगत् में प्रकाश फैलाएँ ॥४५॥

वीती यो देवं मर्तो दुवस्येदग्निमीळीताध्वरे हविष्मान् ।
होतारं सत्ययजं रोदस्योरुत्तानहस्तो नमसा विवासेत् ॥४६॥

हव्य पदार्थ से युक्त इन अग्निदेव को हवि अर्पित कर इष्ट (किसी भी) देव का यजन करते हैं, जो अग्निदेव सत्य रूप हवि से यजन करने योग्य , द्युलोक एवं भूलोक के देवगणों का आवाहन करने वाले हैं,

याजक उन अग्निदेव की हाथ उठाकर नमस्कारपूर्वक सेवा करें ॥४६॥

आ ते अग्न ऋचा हविर्हृदा तष्टं भरामसि ।
ते ते भवन्तूक्षण ऋषभासो वशा उत ॥४७॥

हे अग्निदेव ! हम मन्त्रों सहित संस्कारित हवि को आपके निमित्त हृदय से अर्पित करते हैं । यह (हवि) समर्थ बैल, गौ के रूप में प्राप्त हो ॥४७॥

अग्निं देवासो अग्रियमिन्धते वृत्रहन्तमम् ।
येना वसून्याभृता तृव्व्हा रक्षांसि वाजिना ॥४८॥

जो अग्निदेव, यज्ञ में बाधक राक्षसों को मारने वाले, दुष्टों के धन का हरण करने वाले हैं, उन वृत्रासुर संहारक अनिदेव को मेधावीजन प्रदीप्त करें ॥४८॥

सूक्त १७

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप , १५ द्विपदा त्रिष्टुप

पिबा सोममभि यमुग्र तर्द ऊर्वं गव्यं महि गृणान इन्द्र ।
वि यो धृष्णो वधिषो वज्रहस्त विश्वा वृत्रममित्रिया शवोभिः ॥१॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आपने पराक्रम द्वारा शत्रुओं का संहार किया । हे वज्रिन् ! आपने चोरी गई गौओं को खोज लिया। अंगिरा ने आपकी स्तुति की एवं सोम प्रेषित किया । हे इन्द्रदेव ! आप सोमपान करें ॥१॥

स ईं पाहि य ऋजीषी तरुत्रो यः शिप्रवान्वृषभो यो मतीनाम् ।
यो गोत्रभिद्वज्रभृद्यो हरिष्ठाः स इन्द्र चित्राँ अभि तृन्धि वाजान् ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप पहाड़ों को तोड़ने वाले तथा अश्वों के संयोजक हैं । आप शत्रुओं से रक्षा करने वाले हैं। हे सोमपान करने वाले देव ! आप सोमपान करें एवं स्तुति करने वालों को श्रेष्ठ धन प्रदान करें ॥२॥

एवा पाहि प्रत्नथा मन्दतु त्वा श्रुधि ब्रह्म वावृधस्वोत गीर्भिः ।
आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषो जहि शत्रूँरभि गा इन्द्र तृन्धि ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तुति सुनकर हमारी वृद्धि करें आपने जैसे पहले सोमपान किया था, वैसे ही सोमरस का पान करें। यह आपको पुष्ट करे । आप सूर्यदेव को प्रकट करके हमें अन्न प्रदान करें । पणियों द्वारा चुराई गई गौओं को खोजें एवं शत्रुओं का नाश करें ॥३॥

ते त्वा मदा बृहदिन्द्र स्वधाव इमे पीता उक्षयन्त द्युमन्तम् ।
महामनूनं तवसं विभूतिं मत्सरासो जर्हृषन्त प्रसाहम् ॥४॥

हे ऋषिगण ! इन्द्रदेव ! आप तेजस्वी एवं अन्न से युक्त हैं; सोमरस पान कर आप आनन्दित हों। आप अत्यन्त गुणवान् एवं महान् हैं। आप हमारे शत्रुओं का नाश करें ॥४॥

येभिः सूर्यमुषसं मन्दसानोऽवासयोऽप दव्ह्यानि दर्द्रत् ।
महामद्रिं परि गा इन्द्र सन्तं नुत्था अच्युतं सदसस्परि स्वात् ॥५॥

सोमरस से तृप्त हुए हे इन्द्रदेव ! आपने सूर्य और उषा के द्वारा अन्धकार का नाश किया। आपने अति स्थिर रक्षक गिरि को तोड़कर पणियों द्वारा चुराई गई गौएँ पायीं ॥५॥

तव क्रत्वा तव तद्दंसनाभिरामासु पक्वं शच्या नि दीधः ।
और्णोर्दुर उस्रियाभ्यो वि दव्ह्योदूर्वाद्गा असृजो अङ्गिरस्वान् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आपने बुद्धि-कौशल, कर्म-कौशल एवं पराक्रम से गौओं को निकलने के लिए मार्ग बनाया है। आपने ही उन्हें दुग्धवती बनाया। अंगिराओं के सहयोग से आपने ही गौओं को छुड़ाया ॥६॥

पप्राथ क्षां महि दंसो व्युर्वीमुप द्यामृष्वो बृहदिन्द्र स्तभायः ।
अधारयो रोदसी देवपुत्रे प्रत्ने मातरा यह्वी ऋतस्य ॥७॥

हे इन्द्रदेव !आप महान् हैं ।आपने कर्म करके पृथ्वी के विस्तृत क्षेत्र को और विस्तृत किया । आपने दिव्यलोक को गिरने से बचाने के लिए स्तब्ध किया।देवता जिनके पुत्र हैं, उन द्यावा-पृथिवी को आपने धारण किया ॥७॥

अध त्वा विश्वे पुर इन्द्र देवा एकं तवसं दधिरे भराय ।
अदेवो यदभ्यौहिष्ट देवान्त्स्वर्षाता वृणत इन्द्रमत्र ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपने मरुद्गणों की युद्ध के समय सहायता की थी । वृत्रासुर से जब युद्ध हुआ था, तब आप ही देवगणों में नायक थे। आप महान् पराक्रमी हैं ॥८॥

अध द्यौश्चित्ते अप सा नु वज्राद्वितानमद्भियसा स्वस्य मन्योः ।
अहिं यदिन्द्रो अभ्योहसानं नि चिद्विश्वायुः शयथे जघान ॥९॥

जब इन्द्रदेव ने सब शक्तियों से सम्पन्न होकर, वृत्रासुर को सोई अवस्था में ही पूर्णत: नष्ट कर दिया, तब इन्द्रदेव के क्रोध, वज्रयुक्त पराक्रम को देखकर द्युलोक भी भय से स्तब्ध रह गया ॥९॥

अध त्वष्टा ते मह उग्र वज्रं सहस्रभृष्टिं ववृतच्छताश्रिम् ।
निकाममरमणसं येन नवन्तमहिं सं पिणगृजीषिन् ॥१०॥

हे सोमपायी पराक्रमी इन्द्रदेव ! त्वष्टादेव द्वारा निर्मित शत सन्धि एवं सहस्रधारयुक्त वज्र से ही आपने वृत्रासुर का संहार किया ॥१०॥

वर्धान्यं विश्वे मरुतः सजोषाः पचच्छतं महिषाँ इन्द्र तुभ्यम् ।
पूषा विष्णुस्त्रीणि सरांसि धावन्वृत्रहणं मदिरमंशुमस्मै ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी वृद्धि के लिए, मरुद्गण श्रेष्ठ स्तुति करते हैं। पूषादेव आपके लिए बलवर्धक अन्न पकाते हैं एवं विष्णुदेव तीन पात्रों में वृत्रासुर के मारने की शक्ति बढ़ाने वाला सोमरस भरते हैं ॥११॥

आ क्षोदो महि वृतं नदीनां परिष्ठितमसृज ऊर्मिमपाम् ।
तासामनु प्रवत इन्द्र पन्थां प्रार्दयो नीचीरपसः समुद्रम् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आपने उन नदियों के जल को प्रवाहित किया, जिनको वृत्रासुर अवरुद्ध किये था । समुद्र की ओर जाकर मिलने वाली नदियों के वेगवान् जल की तरङ्गों को स्वतन्त्र किया ॥१२॥

एवा ता विश्वा चकृवांसमिन्द्रं महामुग्रमजुर्यं सहोदाम् ।
सुवीरं त्वा स्वायुधं सुवज्रमा ब्रह्म नव्यमवसे ववृत्यात् ॥१३॥

है इन्द्रदेव ! आप चिर युवा, बलशाली, ऐश्वर्यवान् , ओजस्वी, श्रेष्ठ कर्म के सम्पादक एवं वज्रधारी हैं । हमारे नवीन स्तोत्र से प्रसन्न होकर प्रवर्धमान हों और हमारी रक्षा करें ॥१३॥

स नो वाजाय श्रवस इषे च राये धेहि द्युमत इन्द्र विप्रान् ।
भरद्वाजे नृवत इन्द्र सूरीन्दिवि च स्मैधि पार्ये न इन्द्र ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे निमित्त अन्न, बल एवं धन को धारण करें, ताकि हमें अन्न, बल एवं धन प्राप्त हो । हमें सेवकों से युक्त करें ।

हम ज्ञानी हैं; हमें भविष्य में भी पुत्र-पौत्रादि सहित सुख-सम्पन्न बनायें ॥१४॥

अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! आप हम स्तोताओं को अन्नादि से युक्त करें । हम वीर पुत्र-पौत्रों से युक्त होकर शतायु हों तथा सुखमय जीवनयापन करें ॥१५॥

सूक्त १८

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

तमु ष्टुहि यो अभिभूत्योजा वन्वन्नवातः पुरुहूत इन्द्रः ।
अषाळ्हमुग्रं सहमानमाभिर्गीर्भिर्वर्ध वृषभं चर्षणीनाम् ॥१॥

हे भरद्वाज ! आप शत्रुनाशक, तेजस्वी एवं आहूत इन्द्रदेव की श्रेष्ठ स्तुति करें । आप उन इन्द्रदेव को बढ़ायें, जो स्तुति से प्रसन्न होकर मनुष्यों की इच्छा को पूर्ण करते हैं ॥१॥

स युध्मः सत्वा खजकृत्समद्वा तुविम्रक्षो नदनुमाँ ऋजीषी ।
बृहद्रेणुश्च्यवनो मानुषीणामेकः कृष्टीनामभवत्सहावा ॥२॥

बलशाली, दानी, सोमरस पान करने वाले, सहयोगी एवं सदैव युद्ध कर्म करने वाले इन्द्रदेव मनुष्यों की रक्षा करते हैं ॥२॥

त्वं ह नु त्यददमायो दस्यूँरेकः कृष्टीरवनोरार्याय ।
अस्ति स्विन्नु वीर्यं तत्त इन्द्र न स्विदस्ति तदतुथा वि वोचः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप याजकों को पुत्र एवं सेवक प्रदान करते हैं। जो यज्ञ नहीं करते उन्हें जीत लें । हे इन्द्रदेव ! अपने बल का परिचय देने के लिए कभी-कभी अपना पराक्रम प्रकट करें ॥३॥

सदिद्धि ते तुविजातस्य मन्ये सहः सहिष्ठ तुरतस्तुरस्य ।
उग्रमुग्रस्य तवसस्तवीयोऽरध्रस्य रध्रतुरो बभूव ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप पराक्रमी, ओजस्वी, बली, अजेय तथा शत्रुहन्ता हैं । आप अनेक यज्ञों में उपस्थित हुए हैं। आप हमारे शत्रुओं का संहार करें ॥४॥

तन्नः प्रत्नं सख्यमस्तु युष्मे इत्था वदद्भिर्वलमङ्गिरोभिः ।
हन्नच्युतच्युद्दस्मेषयन्तमृणोः पुरो वि दुरो अस्य विश्वाः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपने स्तुतिकर्ता अंगिराओं के शत्रु 'वल' नामक असुर का संहार किया और नगरों के द्वारों को खोल दिया था । हे इन्द्रदेव ! हमारा सखा भाव सुदृढ़ बने ॥५॥

स हि धीभिर्हव्यो अस्त्युग्र ईशानकृन्महति वृत्रतूर्ये ।
स तोकसाता तनये स वज्री वितन्तसाय्यो अभवत्समत्सु ॥६॥

स्तुति करने वालों ने, सामर्थ्य बढ़ाने वाले इन्द्रदेव की स्तुति द्वारा आवाहन किया। उनका आवाहन पुत्र प्राप्ति के लिए किया जाता है, वे वज्रधारी इन्द्रदेव रणभूमि में नमस्कार के योग्य हैं ॥६॥

स मज्मना जनिम मानुषाणाममर्त्येन नाम्नाति प्र सर्स्रे ।
स द्युम्नेन स शवसोत राया स वीर्येण नृतमः समोकाः ॥७॥

वे इन्द्रदेव शत्रुओं को बल से झुकाने वाले, यश, धन, बले और वीर्य में सर्वश्रेष्ठ हैं । वे मनुष्यों में श्रेष्ठ और सर्वोत्तम पद तथा स्थान को प्राप्त करें ॥७॥

स यो न मुहे न मिथू जनो भूत्सुमन्तुनामा चुमुरिं धुनिं च ।
वृणक्पिप्रुं शम्बरं शुष्णमिन्द्रः पुरां च्यौत्नाय शयथाय नू चित् ॥८॥

जो व्यर्थ की वस्तुओं को पैदा नहीं करते, वे सुमन्त नाम वाले वीर इन्द्रदेव युद्ध क्षेत्र में कुशल योद्धा के रूप में प्रसिद्ध हैं । वे इन्द्रदेव, उन राक्षसों का संहार करने को सदैव तत्पर रह कर क्रियाशील होते हैं, जो राक्षस सर्वभक्षी, सबके धन का हरण करने वाले, जल को रोकने वाले तथा शोषण करने वाले हैं ॥८॥

उदावता त्वक्षसा पन्यसा च वृत्रहत्याय रथमिन्द्र तिष्ठ ।
धिष्व वज्रं हस्त आ दक्षिणत्राभि प्र मन्द पुरुदत्र मायाः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप ऊर्ध्वगति वाले हैं। रक्षक एवं शत्रुओं का संहार करने वाले हैं। आप शत्रु के संहार के लिए प्रशंसनीय बलयुक्त अपने रथ पर आरूढ़ होते हैं ॥९॥

अग्निर्न शुष्कं वनमिन्द्र हेती रक्षो नि धक्ष्यशनिर्न भीमा ।
गम्भीरय ऋष्वया यो रुरोजाध्वानयद्दुरिता दम्भयच्च ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं का वैसे हीं संहार करें, जैसे कि अग्नि शुष्क वनों को भस्म करती है । गर्जन करने वाले, दुष्टों को छिन्न-भिन्न करने

वाले, हे इन्द्रदेव ! आप वज्र से, बिजली की तरह राक्षसों को जलायें (नष्ट करें) ॥१०॥

आ सहस्रं पथिभिरिन्द्र राया तुविद्युम्न तुविवाजेभिरर्वाक् ।
याहि सूनो सहसो यस्य नू चिददेव ईशे पुरुहूत योतोः ॥११॥

है इन्द्रदेव आपको असुर बलहीन नहीं कर सकते हैं। आपका, अनेकों द्वारा आवाहन किया जाता है। आप सहस्रों प्रकार के मार्गों से ऐश्वर्ययुक्त होकर हमारे समक्ष आएँ ॥११॥

प्र तुविद्युम्नस्य स्थविरस्य घृष्वेर्दिवो ररप्शे महिमा पृथिव्याः ।
नास्य शत्रुर्न प्रतिमानमस्ति न प्रतिष्ठिः पुरुमायस्य सह्योः ॥१२॥

इन्द्रदेव की महिमा द्युलोक और भूलोक से भी बड़ी है । वे इन्द्रदेव अति तेजोमय,धनवान्, श्रेष्ठ एवं शत्रु का नाश करने वाले हैं। प्रज्ञावान् एवं शान्ति, सुखदायक, पराक्रमी इन्द्रदेव का कोई शत्रु नहीं है । इनकी बराबरी का भी अन्य कोई नहीं है ॥१२॥

प्र तत्ते अद्या करणं कृतं भूल्कुत्सं यदायुमतिथिग्वमस्मै ।
पुरू सहस्रा नि शिशा अभि क्षामुत्तूर्वयाणं धृषता निनेथ ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने वज्र के द्वारा 'शम्बर' का वध करके, 'शम्बर' का बहुत-सा धन "अतिथिग्व" को प्रदान किया। 'कुत्स' की 'शुष्ण' से रक्षा की तथा शत्रुओं से 'आयु' और 'दिवोदास' की रक्षा की। भूमि पर तीव्रगामी 'दिवोदास' को कष्टों से सुरक्षित किया ॥१३॥

अनु त्वाहिघ्ने अध देव देवा मदन्विश्वे कवितमं कवीनाम् ।

करो यत्र वरिवो बाधिताय दिवे जनाय तन्वे गृणानः ॥१४॥

हे प्रकाशमान इन्द्रदेव !'अहि असुर को मारने वाले सभी देवगण आज आपके अनुकूल हैं एवं प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं। आप सर्वश्रेष्ठ ज्ञानी हैं। आप स्तोताओं से प्रसन्न होकर तेजस्वी यजमानों एवं पुत्रों को धन आदि देकर सुखी बनाएँ ॥१४॥

अनु द्यावापृथिवी तत्त ओजोऽमर्त्या जिहत इन्द्र देवाः ।
कृष्वा कृत्नो अकृतं यत्ते अस्त्युक्थं नवीयो जनयस्व यज्ञैः ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! आपके बल का अमर देवगण तथी द्यावा-पृथिवी अनुसरण करते हैं। हे कर्मवीर इन्द्रदेव ! आप नवीन यज्ञ कर्म करें तथा अभिनव स्तोत्रों को प्रकट करें ॥१५॥

सूक्त १९

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

महाँ इन्द्रो नृवदा चर्षणिप्रा उत द्विबर्हा अमिनः सहोभिः ।
अस्मद्र्यग्वावृधे वीर्यायोरुः पृथुः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ॥१॥

स्तोताओं एवं प्रजाओं का पालन करने वाले हे महान् इन्द्रदेव ! आप हमारे पास आएँ। दोनों लोकों में अनेक शक्तियों के कारण अहिंसित पराक्रमी, वीरता के कार्य करके बड़ी सामर्थ्य वाले इन्द्रदेव हमारे सामने आएँ । विशाल शरीर एवं उत्तम गुण-सम्पन्न इन्द्रदेव कर्म करने की अपनी सामर्थ्य के कारण ही पूजनीय हैं ॥१॥

इन्द्रमेव धिषणा सातये धाद्बृहन्तमृष्वमजरं युवानम् ।
अषाळ्हेन शवसा शूशुवांसं सद्यश्चिद्यो वावृधे असामि ॥२॥

जो प्रगतिशील, महान् दाता, अजर, चिरयुवा तथा अपरिमित बलशाली हैं एवं जो इन्द्रदेव तत्काल प्रवर्धमान होने वाले (सामर्थ्य को शीघ्र बढ़ाने वाले हैं, ऐसे इन्द्रदेव को हमारी बुद्धि धारण करती है ॥२॥

पृथू करस्ना बहुला गभस्ती अस्मद्र्यक्सं मिमीहि श्रवांसि ।

यूथेव पश्वः पशुपा दमूना अस्माँ इन्द्राभ्या ववृत्स्वाजौ ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आष शान्त मन वाले हैं। आप उत्तम कर्म में कुशल एवं बहुत दान देने वाले अपने हाथों को, हमारे कल्याण के लिए (अभय मुद्रा में) , हमारे सामने लाएँ। जिस प्रकार पशु पालन करने वाला पशुओं को प्रेरित करता है, वैसे ही संग्राम में आप हमें प्रेरित करें ॥३॥

तं व इन्द्रं चतिनमस्य शाकैरिह नूनं वाजयन्तो हुवेम ।
यथा चित्पूर्वे जरितार आसुरनेद्या अनवद्या अरिष्टाः ॥४॥

अन्न के इच्छुक हम स्तोता, शत्रुहन्ता इन्द्रदेव का इस यज्ञ में सहायक मरुद्गणों सहित आवाहन करते हैं। हे इन्द्रदेव ! जैसे पुरातन काल में स्तोतागण, पापमुक्त, अनिन्द्य और अहिंमत स्थिति में थे, वैसे ही हम भी बने ॥४॥

धृतव्रतो धनदाः सोमवृद्धः स हि वामस्य वसुनः पुरुक्षुः ।
सं जग्मिरे पथ्या रायो अस्मिन्त्समुद्रे न सिन्धवो यादमानाः ॥५॥

स्तुतिकर्ताओं का अन्न एवं धन इन्द्रदेव के निमित्त वैसे ही पहुँचता है, जैसे नदियों का जल समुद्र में गिरता है । वे इन्द्रदेव सोमपायी, ऐश्वर्यवान् एवं कर्म कुशल हैं ॥५॥

शविष्ठं न आ भर शूर शव ओजिष्ठमोजो अभिभूत उग्रम् ।
विश्वा द्युम्ना वृष्ण्या मानुषाणामस्मभ्यं दा हरिवो मादयध्यै ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं। आप हमें उत्तम बल एवं तेजस्विता प्रदान करें । हमें शक्ति, तेज एवं मनुष्योपयोगीं ऐश्वर्य प्रदान करें ॥६॥

यस्ते मदः पृतनाषाळमृध्र इन्द्र तं न आ भर शूशुवांसम् ।
येन तोकस्य तनयस्य सातौ मंसीमहि जिगीवांसस्त्वोताः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं को जीतने वाला बल हमें प्रदान करें, ताकि आपके द्वारा प्रदत्त रक्षा साधनों से हम शत्रु को जीतें । जीतने पर हमें वही सुख प्राप्त हो, जो पुत्र-प्राप्ति पर मिलता हैं ॥७॥

आ नो भर वृषणं शुष्मिन्द्र धनस्पृतं शूशुवांसं सुदक्षम् ।
येन वंसाम पृतनासु शत्रून्त्वोतिभिरुत जार्मीरजामीन् ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें बल बढ़ाने वाला, धन देने वाला कुशल पराक्रम प्रदान करें। आपकी सुरक्षा से सुरक्षित हम युद्ध स्थल में उसी बल से शत्रुओं का नाश करें ॥८॥

आ ते शुष्मो वृषभ एतु पश्चादोत्तरादधरादा पुरस्तात् ।
आ विश्वतो अभि समेत्वर्वाङिन्द्र द्युम्नं स्वर्वद्धेह्यस्मे ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें सामर्थ्य बढ़ाने वाला बल, पूर्व पश्चिम, उत्तर, दक्षिण चारों ओर से प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! आप हमें सुखयुक्त धन प्रदान करें ॥९॥

नृवत्त इन्द्र नृतमाभिरूती वंसीमहि वामं श्रोमतेभिः ।
ईक्षे हि वस्व उभयस्य राजन्धा रत्नं महि स्थूरं बृहन्तम् ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! यशस्वी, प्रशंसनीय वीरों से युक्त धन का आपके आश्रय में हम उपयोग करें दोनों (लौकिक एवं पारलौकिक) धनों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आप हमें प्रचुर धन प्रदान करें ॥१०॥

मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं शासमिन्द्रम् ।
विश्वासाहमवसे नूतनायोग्रं सहोदामिह तं हुवेम ॥११॥

इस यज्ञ में हम याजक अभिनव रक्षा के निमित्त इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं। वे इन्द्रदेव मरुद्गणों के सहयोग से अतिबलशाली, तेजस्वी, वर्धमान, शत्रुजयी और दिव्य शासक हैं ॥११॥

जनं वज्रिन्महि चिन्मन्यमानमेभ्यो नृभ्यो रन्धया येष्वस्मि ।
अधा हि त्वा पृथिव्यां शूरसातौ हवामहे तनये गोष्वप्सु ॥१२॥

हे वजिन् ! हम मनुष्यों में से मिथ्याभिमानी (अपने को सर्वश्रेष्ठ मानने वाले मनुष्य) को आप वश में करें । हम संग्राम काल में तथा पशु, पुत्र एवं जल प्राप्ति के निमित्त आपका आवाहन करते हैं ॥१२॥

वयं त एभिः पुरुहूत सख्यैः शत्रोःशत्रोरुत्तर इत्स्याम ।
घ्नन्तो वृत्राण्युभयानि शूर राया मदेम बृहता त्वोताः ॥१३॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आपके आश्रय में रहकर हम धन-ऐश्वर्य से सम्पन्न एवं सुखी हों । हे इन्द्रदेव ! आप अनेकों द्वारा आहूत हैं। हम स्तुति जैसे मित्रतापूर्ण कार्य सम्पादित करके आपकी सहायता से शत्रुओं का नाश करें । हम शत्रुओं से अधिक बल-सम्पन्न बनें ॥१३॥

सूक्त २०

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप, ७ विराट

द्यौर्न य इन्द्राभि भूमार्यस्तस्थौ रयिः शवसा पृत्सु जनान् ।
तं नः सहस्रभरमुर्वरासां दद्धि सूनो सहसो वृत्रतुरम् ॥१॥

हे संघर्ष के लिए विख्यात इन्द्रदेव ! आप हमें सूर्यदेव की तरह कान्तियुक्त , शत्रुओं पर आक्रमण करने वाला, डटकर मुकाबला करने वाला, सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य (धन) वाला एवं भूमि को उर्वरक बनाने वाला पुत्र प्रदान करें ॥१॥

दिवो न तुभ्यमन्विन्द्र सत्रासुर्यं देवेभिर्धायि विश्वम् ।
अहिं यद्वृत्रमपो वव्रिवांसं हन्नृजीषिन्विष्णुना सचानः ॥२॥

हे सोमपायी ! आपने विष्णुदेव के साथ मिलकर जल अवरोधक असुर वृत्र' का नाश किया था । हे इन्द्रदेव ! स्तोताओं ने प्राणशक्ति एवं बल बढ़ाने वाले स्तोत्रों को आपके निमित्त भेंट किया ॥२॥

तूर्वन्नोजीयान्तवसस्तवीयान्कृतब्रह्मेन्द्रो वृद्धमहाः ।
राजाभवन्मधुनः सोम्यस्य विश्वासां यत्पुरां दर्त्तुमावत् ॥३॥

जब इन्द्रदेव ने समस्त पुरों को नष्ट करने वाला वज्र पाया, तभी उन्होंने मधुर सोमरस भी प्राप्त किया था। वे इन्द्रदेव हिंसकों के हिंसक, पराक्रमी, अन्नदाता, ओजस्वी एवं तेजस्वी हैं ॥३॥

शतैरपद्रन्पणय इन्द्रात्र दशोणये कवयेऽर्कसातौ ।
वधैः शुष्णस्याशुषस्य मायाः पित्वो नारिरेचीत्किं चन प्र ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आपके सहायक, अन्नदाता 'कुत्स' से युद्ध में भयभीत होकर 'पणि' सेनाओं सहित भाग गया। आपने शुष्ण की (आसुरी) माया को नष्ट कर उसके अन्न का हरण किया ॥४॥

महो द्रुहो अप विश्वायु धायि वज्रस्य यत्पतने पादि शुष्णः ।
उरु ष सरथं सारथये करिन्द्रः कुत्साय सूर्यस्य सातौ ॥५॥

जब 'शुष्ण' वज्र गिरने से मर गया, तब द्रोही 'शुष्ण' के समस्त बलों को नष्ट करने वाले इन्द्रदेव ने सूर्योपासना के निमित्त सारथिरूप कुत्स को रथारूढ़ होने के लिए कहा ॥५॥

प्र श्येनो न मदिरमंशुमस्मै शिरो दासस्य नमुचेर्मथायन् ।
प्रावन्नमीं साप्यं ससन्तं पृणग्राया समिषा सं स्वस्ति ॥६॥

श्येन पक्षी द्वारा लाये गये, सोम को पीकर तृप्त हुए इन्द्रदेव ने दुष्ट नमुचि के सिर को काट डाला । उन्होंने सोये हुए साप्य (सप के पुत्र अथवा संधि-सहमतिपूर्वक रहने वालों की रक्षा करके उन्हें पशु, धन एवं अन्न प्रदान किया ॥६॥

वि पिप्रोरहिमायस्य दृव्ह्राः पुरो वज्रिञ्छवसा न दर्दः ।

सुदामन्तद्रेक्णो अप्रमृष्यमृजिश्वने दात्रं दाशुषे दाः ॥७॥

है वज्रिन् ! आपने मायावी 'पित्रु' के किले को ध्वस्त किया । हे उत्तम दानदाता ! 'ऋजिश्वा' को आपने धन प्रदान किया। उन्होंने हविरन्न अर्पित किया था ॥७॥

स वेतसुं दशमायं दशोणिं तूतुजिमिन्द्रः स्वभिष्टिसुम्नः ।
आ तुग्रं शश्वदिभं द्योतनाय मातुर्न सीमुप सृजा इयध्यै ॥८॥

इष्ट सुखदाता इन्द्रदेव ने वेतसु आदि असुरों को द्योतमान' के पास जाने के लिए एवं सदा उन्हीं के अधीन रहने के लिए उसी तरह विवश किया, जिस तरह माता पुत्र को वश में करती है ॥८॥

स ईं स्पृधो वनते अप्रतीतो बिभ्रद्वज्रं वृत्रहणं गभस्तौ ।
तिष्ठद्धरी अध्यस्तेव गर्ते वचोयुजा वहत इन्द्रमृष्वम् ॥९॥

शत्रु-विनाशक, वज्र को हाथ में धारण करने वाले इन्द्रदेव स्पर्धा करने वाले शत्रुओं का संहार करते हैं। वे शूरवीर रथ पर चढ़ते हैं। उनके अश्व वचन मात्र से जुत जाने वाले एवं संकेत मात्र से इन्द्रदेव को गन्तव्य तक ले जाने वाले हैं ॥९॥

सनेम तेऽवसा नव्य इन्द्र प्र पूरवः स्तवन्त एना यज्ञैः ।
सप्त यत्पुरः शर्म शारदीर्दर्द्धन्दासीः पुरुकुत्साय शिक्षन् ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! हम उपासक आपके द्वारा सुरक्षित होकर नवीन धन पाने के लिए उपासना करते हैं । यज्ञ करते समय याजक आपकी स्तुतियाँ करते हैं ॥१०॥

त्वं वृध इन्द्र पूर्व्यो भूर्वरिवस्यन्नुशने काव्याय ।
परा नववास्त्वमनुदेयं महे पित्रे ददाथ स्वं नपातम् ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! धन के इच्छुक 'उशना' का आप कल्याण करें । आपने 'नववास्त्व' नामक असुर को संहार किया था और शक्ति-सम्पन्न 'उशना' के समक्ष देयपुत्र को उपस्थित किया था ॥११॥

त्वं धुनिरिन्द्र धुनिमतीर्ऋणोरपः सीरा न स्रवन्तीः ।
प्र यत्समुद्रमति शूर पर्षि पारया तुर्वशं यदुं स्वस्ति ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं को भयभीत करते हैं। रुके जल को प्रवाहित करते हैं । हे पराक्रमी ! जब आप समुद्र को पार करते हैं, तब 'तुर्वश' तथा 'यदु' को कल्याणपूर्वक पार कर दें ॥१२॥

तव ह त्यदिन्द्र विश्वमाजौ सस्तो धुनीचुमुरी या ह सिष्वप् ।
दीदयदित्तुभ्यं सोमेभिः सुन्वन्दभीतिरिध्मभृतिः पक्थ्यर्कैः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने 'धुनी' और 'चुमुरी' नाम के असुरों को युद्ध में मार गिराया । यह सब युद्ध में करना आपकी ही सामर्थ्य से सम्भव है। आपके निमित्त अन्न को पकाने वाले, सोमरस बनाने वाले एवं समिधावान् 'दभीति' ने हवि प्रदान कर आपका सत्कार किया था ॥१३॥

सूक्त ११

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र:, १, ११, विश्वे देवा: । छंद – त्रिष्टुप

इमा उ त्वा पुरुतमस्य कारोर्हव्यं वीर हव्या हवन्ते ।
धियो रथेष्ठामजरं नवीयो रयिर्विभूतिरीयते वचस्या ॥१॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप रथारूढ़, अजर और नूतन स्वरूप वाले हैं । हवियाँ आपको प्राप्त होती हैं। बहुत कार्य करने की इच्छा वाले भरद्वाज की उत्तम स्तुतियाँ आपका आवाहन करती हैं ॥१॥

तमु स्तुष इन्द्रं यो विदानो गिर्वाहसं गीर्भिर्यज्ञवृद्धम् ।
यस्य दिवमति मह्ना पृथिव्याः पुरुमायस्य रिरिचे महित्वम् ॥२॥

प्रज्ञावान् इन्द्रदेव की महिमा द्युलोक एवं पृथ्वी से भी महान् हैं । वे सर्वज्ञ और यज्ञ से विवर्धमान हैं, ऐसे स्तुति द्वारा आवाहनीय इन्द्रदेव की हम वन्दना करते हैं ॥२॥

स इत्तमोऽवयुनं ततन्वत्सूर्येण वयुनवच्चकार ।
कदा ते मर्ता अमृतस्य धामेयक्षन्तो न मिनन्ति स्वधावः ॥३॥

इन्द्रदेव ने सघन अन्धकार को सूर्यदेव के प्रकाश से दूर किया । हे स्वधारक शक्तियुक्त इन्द्रदेव ! आपके अमर स्थान की कामना करने वाले मनुष्य अवध्य (सुरक्षित) रहते हैं ॥३॥

यस्ता चकार स कुह स्विदिन्द्रः कमा जनं चरति कासु विक्षु ।
कस्ते यज्ञो मनसे शं वराय को अर्क इन्द्र कतमः स होता ॥४॥

जिन्होंने वृत्रादि असुरों का संहार किया, वे इन्द्रदेव अभी कहाँ हैं ? किस लोक और किन प्रजाओं के बीच वे विचरण करते हैं? आपके लिए सुखदायी यज्ञ कौन सा है? आपको वरण करने हेतु समर्थ मन्त्र कौन सा है? कौन सा होता आपको बुलाने में समर्थ है ? ॥४॥

इदा हि ते वेविषतः पुराजाः प्रत्नास आसुः पुरुकृत्सखायः ।
ये मध्यमास उत नूतनास उतावमस्य पुरुहूत बोधि ॥५॥

बहुकर्मा एवं अनेकों द्वारा प्रार्थित हे इन्द्रदेव !प्राचीन काल तथा वर्तमान काल में उत्पन्न साधक आपके मित्र बनकर रहें । मध्यकाल में भी आपके स्तोता उत्पन्न हुए परन्तु हे इन्द्रदेव ! आप हमारी इस समय की स्तुति को सुनें ॥५॥

तं पृच्छन्तोऽवरासः पराणि प्रत्ना त इन्द्र श्रुत्यानु येमुः ।
अर्चामसि वीर ब्रह्मवाहो यादेव विद्म तात्त्वा महान्तम् ॥६॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आज के मनुष्य आपसे ही पूछते हैं । आपके पूर्व के श्रेष्ठ कार्यों को सुनकर उनका वर्णन करते हैं। जितना हमें विदित है, उसी आधार पर ही हम आपका सत्कार करते हैं ॥६॥

अभि त्वा पाजो रक्षसो वि तस्थे महि जज्ञानमभि तत्सु तिष्ठ ।
तव प्रत्नेन युज्येन सख्या वज्रेण धृष्णो अप ता नुदस्व ॥७॥

हे शत्रुओं के उत्पीड़क इन्द्रदेव ! आप अपने पुराने, सुयोग्य, सदा सहायक वज्र से शत्रु सेना को दूर करें । हे इन्द्रदेव ! असुरों का बल चारों ओर बढ़ता हुआ आपके समक्ष है, आप भी शत्रु के बल का अनुमान करके उससे अधिक बल से प्रतिरोध करें ॥७॥

स तु श्रुधीन्द्र नूतनस्य ब्रह्मण्यतो वीर कारुधायः ।
त्वं ह्यापिः प्रदिवि पितृणां शश्वद्बभूथ सुहव एष्टौ ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन, श्रेष्ठ आवाहनकर्ता अंगिराओं के मित्र हैं। आप स्तोताओं के पालक हैं। हम आज के स्तोतागण नवीन स्तोत्र के इच्छुक हैं । आप हम लोगों की प्रार्थना सुनें ॥८॥

प्रोतये वरुणं मित्रमिन्द्रं मरुतः कृष्वावसे नो अद्य ।
प्र पूषणं विष्णुमग्निं पुरंधिं सवितारमोषधीः पर्वताँश्च ॥९॥

हे भरद्वाज ! आप हम सबकी रक्षा एवं इच्छापूर्ति के लिए वरुण, मित्र, इन्द्र, मरुत्, पूषा, विष्णु, अग्नि, सविता, ओषधियों और पर्वतादि देवों की स्तुति करें ॥९॥

इम उ त्वा पुरुशाक प्रयज्यो जरितारो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
श्रुधी हवमा हुवतो हुवानो न त्वावाँ अन्यो अमृत त्वदस्ति ॥१०॥

हे अति पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप जैसा अन्य कोई देव नहीं हैं, अतः हम स्तोता श्रेष्ठ स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं। आप हमारी स्तुति को सुनें ॥१०॥

नू म आ वाचमुप याहि विद्वान्विश्वेभिः सूनो सहसो यजत्रैः ।
ये अग्निजिह्वा ऋतसाप आसुर्ये मनुं चक्रुरुपरं दसाय ॥११॥

हे बल पुत्र इन्द्रदेव ! आप सर्वज्ञ हैं । जो देवगण अग्निरूपी जिह्वा वाले सत्य के उपासक हैं, और जो यज्ञाहुति ग्रहण करते हैं, शत्रुओं का नाश करने के निमित्त राजर्षि मनु ने, जिन्हें सर्वोपरि स्थापित किया था, आप उन्हीं के साथ यहाँ पधारें ॥११॥

स नो बोधि पुरएता सुगेषूत दुर्गेषु पथिकृद्विदानः ।
ये अश्रमास उरवो वहिष्ठास्तेभिर्न इन्द्राभि वक्षि वाजम् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप मेधावी हैं। आप मार्ग नियन्ता हैं । अत: सुगम एवं दुर्गम मार्गों में हमारे मार्गदर्शक बने । आप अपने न थकने वाले एवं तीव्रगामी घोड़ों के द्वारा हमारे लिए बल बढ़ाने वाला अन्न लाएँ ॥१२॥

सूक्त ११

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

य एक इद्धव्यश्चर्षणीनामिन्द्रं तं गीर्भिरभ्यर्च आभिः ।
यः पत्यते वृषभो वृष्ण्यावान्त्सत्यः सत्वा पुरुमायः सहस्वान् ॥१॥

इन्द्रदेव संकट काल में मनुष्यों द्वारा आवाहन करने योग्य हैं । वे स्तुतियाँ करने पर आते हैं । इच्छा पूर्ति करने वाले पराक्रमी, ज्ञानी, सत्यवादी एवं शत्रुओं को पीड़ा देने वाले इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं ॥१॥

तमु नः पूर्वे पितरो नवग्वाः सप्त विप्रासो अभि वाजयन्तः ।
नक्षद्दाभं ततुरिं पर्वतेष्ठामद्रोघवाचं मतिभिः शविष्ठम् ॥२॥

अङ्गिरा आदि प्राचीन ऋषियों ने इन्द्रदेव को पराक्रमी और प्रवर्द्धमान बनाने के लिए नौं मासीय यज्ञानुष्ठान किया तथा स्तुति की । वे इन्द्रदेव सभी के शासक, तीव्रगामी एवं शत्रुओं के संहारकर्ता हैं ॥२॥

तमीमह इन्द्रमस्य रायः पुरुवीरस्य नृवतः पुरुक्षोः ।
यो अस्कृधोयुरजरः स्ववान्तमा भर हरिवो मादयध्यै ॥३॥

हे अश्वपति इन्द्रदेव ! हम पुत्र-पौत्रादि स्वजनों, सेवकों, पशुओं एवं प्रसन्नतादायक धन की आप से याचना करते हैं। आप हमें सुखकारी ऐश्वर्य प्रदान करने यहाँ आएँ ॥३॥

तन्नो वि वोचो यदि ते पुरा चिज्जरितार आनशुः सुम्नमिन्द्र ।
कस्ते भागः किं वयो दुध्र खिद्वः पुरुहूत पुरूवसोऽसुरघ्नः ॥४॥

हे शत्रुजयी, पराक्रमी अनेकों द्वारा आहूत ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप दुष्ट असुरों का नाश करने की सामर्थ्य वाले हैं। आपको यज्ञ में कौन सा भाग मिला है ? हे इन्द्रदेव ! आप हमें वहीं सुख प्रदान करें, जो आपने पहले भी स्तोताओं को दिया है ॥४॥

तं पृच्छन्ती वज्रहस्तं रथेष्ठामिन्द्रं वेपी वक्करी यस्य नू गीः ।
तुविग्राभं तुविकूर्मिं रभोदां गातुमिषे नक्षते तुम्रमच्छ ॥५॥

हाथ में वज्र धारण करने वाले, रथारूढ़, बहुकर्मा, अनेक शत्रुओं को एक साथ पकड़ने वाले इन्द्रदेव की गुण-गाथा का गान करते हुए, जो यजमान् यज्ञकर्म और स्तुति करता है, वह शत्रुओं को हराने वाला एवं सुख प्राप्त करने वाला होता है ॥५॥

अया ह त्यं मायया वावृधानं मनोजुवा स्वतवः पर्वतेन ।
अच्युता चिद्वीळिता स्वोजो रुजो वि दव्ह्या धृषता विरप्शिन् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्वयं के बल से युक्त हैं। आपने अपने मनोवेगी वज्र से उस बढ़ते हुए मायावी वृत्रासुर का संहार किया है । हे तेजस्वी

इन्द्रदेव ! आपने अचल, सुदृढ़ एवं शक्तिशाली पुरियों को नष्ट किया है ॥६॥

तं वो धिया नव्यस्या शविष्ठं प्रत्नं प्रत्नवत्परितंसयध्यै ।
स नो वक्षदनिमानः सुवह्नेन्द्रो विश्वान्यति दुर्गहाणि ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप प्राचीन एवं पराक्रमी हैं। प्राचीनकालीन ऋषयों के समान हम भी नवीन स्तोत्रों से आपको प्रवर्धमान करते हैं-ऐसे शोभनीय इन्द्रदेव हमारी रक्षा करें ॥७॥

आ जनाय द्रुह्वणे पार्थिवानि दिव्यानि दीपयोऽन्तरिक्षा ।
तपा वृषन्विश्वतः शोचिषा तान्ब्रह्मद्विषे शोचय क्षामपश्च ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप अभीष्ट की वर्षा करने वाले हैं । द्युलोक, पृथ्वी एवं अंतरिक्ष में सर्वत्र व्याप्त होकर अपने तीव्र तेज से तृप्त करके सज्जनों के शत्रुओं (दुष्टों) को भस्म करें ॥८॥

भुवो जनस्य दिव्यस्य राजा पार्थिवस्य जगतस्त्वेषसंदृक् ।
धिष्व वज्रं दक्षिण इन्द्र हस्ते विश्वा अजुर्य दयसे वि मायाः ॥९॥

हे तेजस्वी, अजर इन्द्रदेव ! आप देवलोकवासी एवं पृथ्वीवासी सभी लोगों के राजा हैं । आप दाहिने हाथ में वज्र को धारण करके विश्व के मायावियों का नाश करें ॥९॥

आ संयतमिन्द्र णः स्वस्तिं शत्रुतूर्याय बृहतीममृध्राम् ।
यया दासान्यार्याणि वृत्रा करो वज्रिन्त्सुतुका नाहुषाणि ॥१०॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं का संहार करने के लिए अक्षुण्ण, संयमित एवं कल्याणकारी धन प्रचुर मात्रा में हमें प्रदान करें। जिससे दासों (इन्द्रियों के दास, कुमार्गगामियों) को आर्य (श्रेष्ठ मार्गगामी) बनाया जा सके और मनुष्य के शत्रुओं का नाश हो सके ॥१०॥

स नो नियुद्भिः पुरुहूत वेधो विश्ववाराभिरा गहि प्रयज्यो ।
न या अदेवो वरते न देव आभिर्याहि तूयमा मद्यद्रिक् ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप पूजनीय एवं अनेकों द्वारा आहूत हैं । आप सभी लोगों द्वारा प्रशंसा किये गये घोड़ों से हमारे पास आएँ । जिन अश्वों की गति को देवता एवं असुर भी नहीं रोक सकते हैं, उन अश्वों के साथ आप हमारे पास आएँ ॥११॥

सूक्त २३

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

सुत इत्त्वं निमिश्ल इन्द्र सोमे स्तोमे ब्रह्मणि शस्यमान उक्थे ।
यद्वा युक्ताभ्यां मघवन्हरिभ्यां बिभ्रद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र यासि ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! सोमरस निकालने पर, उत्तम स्तोत्रों का ज्ञान होने पर, स्तुतियाँ सुनकर आप अश्वों को (रथ में) नियोजित करते हैं। आप हाथ में वज्र धारण करके आगमन करते हैं ॥१॥

यद्वा दिवि पार्ये सुष्विमिन्द्र वृत्रहत्येऽवसि शूरसातौ ।
यद्वा दक्षस्य बिभ्युषो अबिभ्यदरन्धयः शर्धत इन्द्र दस्यून् ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप भयभीत यजमानों के कर्म (यज्ञ) विरोधी असुरों को जीतकर एवं युद्ध क्षेत्र में स्तोता-याजक के सहयोगी होकर, उनकी रक्षा करके उन्हें धैर्यवान् बनाएँ ॥२॥

पाता सुतमिन्द्रो अस्तु सोमं प्रणेनीरुग्रो जरितारमूती ।
कर्ता वीराय सुष्वय उ लोकं दाता वसु स्तुवते कीरये चित् ॥३॥

वे इन्द्रदेव सोमरस पीकर, सोमरस तैयार करने वाले को अच्छा निवास(गृह प्रदान करते हैं। वे ही इन्द्रदेव स्तोताओं से प्रसन्न होकर, उन्हें सहज मार्ग एवं धन प्रदान करते हैं ॥३॥

गन्तेयान्ति सवना हरिभ्यां बभ्रिर्वज्रं पपिः सोमं ददिर्गाः ।
कर्ता वीरं नर्यं सर्ववीरं श्रोता हवं गृणतः स्तोमवाहाः ॥४॥

वे इन्द्रदेव वज्र को धारण करते हैं। वे अभिषुत सोमरस का पान करते हैं। वे इन्द्रदेव दोनों अश्वों के साथ तीनों सवनों में पहुँचते हैं । वे गोदानकर्ता को पुत्र प्रदान करते हैं तथा स्तोताओं की स्तुति का श्रवण करते हैं ॥४॥

अस्मै वयं यद्वावान तद्विविष्म इन्द्राय यो नः प्रदिवो अपस्कः ।
सुते सोमे स्तुमसि शंसदुक्थेन्द्राय ब्रह्म वर्धनं यथासत् ॥५॥

हम उन प्राचीन इन्द्रदेव को प्रिय लगने वाले स्तोत्रों का गायन करते हैं, वे हमारी रक्षा करें । सोमरस अभिषवण के पश्चात् हम इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं। स्तुति करते हुए याजक इन्द्रदेव को प्रवृद्ध करने के लिए हवि प्रदान करें ॥५॥

ब्रह्माणि हि चकृषे वर्धनानि तावत्त इन्द्र मतिभिर्विविष्मः ।
सुते सोमे सुतपाः शंतमानि राण्ड्या क्रियास्म वक्षणानि यज्ञैः ॥६॥

हे सोमपायी इन्द्रदेव ! आपके लिए सोम तैयार करने के पश्चात् अब हम हवियों सहित स्तुति करते हैं। आपके निमित्त हम उन स्तोत्रों को मनोयोगपूर्वक अर्पित करते हैं । ये स्तोत्र इन्द्रदेव के उत्कर्ष के कारक हैं ॥६॥

स नो बोधि पुरोळाशं रराणः पिबा तु सोमं गोऋजीकमिन्द्र ।
एदं बर्हिर्यजमानस्य सीदोरुं कृधि त्वायत उ लोकम् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप आनन्दित होकर हमारे द्वारा प्रेषित पुरोडाश को ग्रहण करें । गौ के दूध-दही मिले सोमरस का पान करें। यजमान द्वारा बिछाये गए आसन पर आप विराजें एवं आपके अनुगामी हम लोगों के स्थान का विस्तार करें ॥७॥

स मन्दस्वा ह्यनु जोषमुग्र प्र त्वा यज्ञास इमे अश्नुवन्तु ।
प्रेमे हवासः पुरुहूतमस्मे आ त्वेयं धीरवस इन्द्र यम्याः ॥८॥

हे उग्र बल-सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप निज इच्छानुसार प्रसन्न होकर सोमरस का पान करें। आप बहुतों द्वारा बुलाये गये हैं। हमारे द्वारा की जाने वाली स्तुति आप तक पहुँचे । इससे प्रसन्न होकर आप हमारी रक्षा करें ॥८॥

तं वः सखायः सं यथा सुतेषु सोमेभिरीं पृणता भोजमिन्द्रम् ।
कुवित्तस्मा असति नो भराय न सुष्विमिन्द्रोऽवसे मृधाति ॥९॥

हे मित्रो ! सोमरस अभिषुत करके, अन्नदाता इन्द्रदेव को सोमरस से तृप्त करें। उन इन्द्रदेव को अपनी सहायता के लिए प्रसन्न करने का यह अच्छा साधन है । वे इन्द्रदेव हमारा पोषण करें एवं हमारी सुरक्षा करें ॥९॥

एवेदिन्द्रः सुते अस्तावि सोमे भरद्वाजेषु क्षयदिन्मघोनः ।
असद्यथा जरित्र उत सूरिरिन्द्रो रायो विश्ववारस्य दाता ॥१०॥

हविरन्नयुक्त यजमान के स्वामी इन्द्रदेव सोमरस के तैयार होने से (प्रसन्न होकर) सर्वाधिक प्रशंसा के योग्य धन प्रदान करते हैं । जो स्तोताओं को ज्ञानी बनाते हैं, ऐसे इन्द्रदेव की भरद्वाजों द्वारा स्तुति की गई है ॥१०॥

सूक्त २४

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

वृषा मद इन्द्रे श्लोक उक्था सचा सोमेषु सुतपा ऋजीषी ।
अर्चत्र्यो मघवा नृभ्य उक्थैर्द्युक्षो राजा गिरामक्षितोतिः ॥१॥

सोमपान के पश्चात् हर्षित होने से इन्द्रदेव का बल बढ़ता है । सोमपान के समय सामगान से वे इन्द्रदेव प्रसन्न होते हैं। सोमपायी, धनवान् एवं तीव्रगामी इन्द्रदेव मनुष्यों द्वारा स्तुतिपूर्वक अर्चना करने योग्य हैं। ये द्युलोक निवासी स्तुतियों के स्वामी इन्द्रदेव सदैव (याजकों की रक्षा करते हैं ॥१॥

ततुरिर्वीरो नर्यो विचेताः श्रोता हवं गृणत उर्व्यूतिः ।
वसुः शंसो नरां कारुधाया वाजी स्तुतो विदथे दाति वाजम् ॥२॥

वे ज्ञानी, बलशाली, शत्रु-संहारक, भक्त की प्रार्थना सुनने वाले, अच्छे निवास देने वाले, स्तोताओं के संरक्षक, शिल्पकलाविदों के पोषक एवं यशस्वी अन्नदाता इन्द्रदेव हमें प्रसन्न होकर अन्न प्रदान करें ॥२॥

अक्षो न चक्र्योः शूर बृहन्म्र ते मह्ना रिरिचे रोदस्योः ।

वृक्षस्य नु ते पुरुहूत वया व्यूतयो रुरुहुरिन्द्र पूर्वीः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप बहुतों द्वारा आहूत हैं । चक्कों (पहियों, चक्रों) की धुरी जिस प्रकार चक्कों को सुस्थिर किये रहती है, उसी प्रकार आपकी महिमा से द्युलोक एवं भूलोक स्थिर हैं । वृक्ष की अनेक शाखाओं की तरह आपकी रक्षक शक्तियों फैलती हैं ॥३॥

शचीवतस्ते पुरुशाक शाका गवामिव स्रुतयः संचरणीः ।
वत्सानां न तन्तयस्त इन्द्र दामन्वन्तो अदामानः सुदामन् ॥४॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! सर्व संचारी गो-मार्ग की तरह आपकी शक्तियाँ भी सर्वत्र कर्म करने में समर्थ हैं। हे उत्तम दानदाता इन्द्रदेव ! आपकी शक्तियाँ बछड़ों की (बाँधने वाली) डोरियों की भाँति अनेक शत्रुओं को बाँध लेती हैं ॥४॥

अन्यदद्य कर्वरमन्यदु श्वोऽसच्च सन्मुहुराचक्रिरिन्द्रः ।
मित्रो नो अत्र वरुणश्च पूषार्यो वशस्य पर्येतास्ति ॥५॥

इन्द्रदेव प्रतिदिन, उत्तरोत्तर नवीन अद्भुत कार्य करते हैं। वे सत् एवं असत् (स्थायीं और अस्थायी कर्मों) को बार-बार करते हैं । इन्द्र, वरुण, मित्र, पूषा एवं सवितादेव हमारे मनोरथों को पूर्ण करें ॥५॥

वि त्वदापो न पर्वतस्य पृष्ठादुक्थेभिरिन्द्रानयन्त यज्ञैः ।
तं त्वाभिः सुष्टुतिभिर्वाजयन्त आजिं न जग्मुर्गिर्वाहो अश्वाः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! पर्वत के पृष्ठभाग से जिस प्रकारे जल प्रवाहित होता है, वैसे ही यज्ञ कर्म एवं स्तुति करने से मनुष्यों को आपके द्वारा

मनोवांछित फल प्राप्त होता है । हे स्तुतियों से पूजनीय इन्द्रदेव ! जिस प्रकार युद्ध क्षेत्र में अश्व तीव्र वेग से जाते हैं, उसी प्रकार अन्न प्राप्ति की इच्छा वाले भरद्वाज आदि आपके पास पहुँचते हैं ॥६॥

न यं जरन्ति शरदो न मासा न द्याव इन्द्रमवकर्शयन्ति ।
वृद्धस्य चिद्वर्धतामस्य तनूः स्तोमेभिरुक्थैश्च शस्यमाना ॥७॥

जो इन्द्रदेव संवत्सर, महीनों एवं दिनों के द्वारा क्षीण नहीं होते । ऐसे इन्द्रदेव की काया स्तुतियों द्वारा पूजित होकर विकसित हो ॥७॥

न वीळवे नमते न स्थिराय न शर्धते दस्युजूताय स्तवान् ।
अज्रा इन्द्रस्य गिरयश्चिदृष्वा गम्भीरे चिद्भवति गाधमस्मै ॥८॥

स्तुति किये जाने पर भी इन्द्रदेव दस्युओं (क्रूर पुरुषों) के वशीभूत नहीं होते । सुदृढ़ शरीर वाले इन्द्रदेव जब गमन करते हैं, तो ऊँचे-ऊँचे पहाड़ भी सुगम हो जाते हैं । अगाध (गहरे) स्थान भी सहज हो जाते हैं ॥८॥

गम्भीरेण न उरुणामत्रिन्प्रेषो यन्धि सुतपावन्वाजान् ।
स्था ऊ षु ऊर्ध्व ऊती अरिषण्यन्नक्तोर्व्युष्टौ परितक्म्यायाम् ॥९॥

हे सोमपायी एवं पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप गम्भीर और महान् हृदय से बल एवं अन्न प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! आप दिन-रात तत्पर रहकर हमारी सुरक्षा करें ॥९॥

सचस्व नायमवसे अभीक इतो वा तमिन्द्र पाहि रिषः ।
अमा चैनमरण्ये पाहि रिषो मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप पास रहें या दूर रहें । यहाँ या वहाँ, जहाँ भी रहें, वहाँ से स्तुति करने वालों की रक्षा रण क्षेत्र में, घर में, जंगल में सब जगह करें। हमें वीर पुत्रादि प्रदान करके शतायु बनाये ॥१०॥

सूक्त २५

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

या त ऊतिरवमा या परमा या मध्यमेन्द्र शुष्मिन्नस्ति ।
ताभिरू षु वृत्रहत्येऽवीर्न एभिश्च वाजैर्महान्न उग्र ॥१॥

हे बलवान् इन्द्रदेव !आपके पास जो भी सुरक्षा के उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ साधन हैं, उन सभी रक्षा साधनों से संग्राम में हमारी अच्छी प्रकार रक्षा करें । आप स्वयं महान् होकर हमें भी महान् बनाएँ एवं अन्न प्रदान करें ॥१॥

आभिः स्पृधो मिथतीररिषण्यन्नमित्रस्य व्यथया मन्युमिन्द्र ।
आभिर्विश्वा अभियुजो विषूचीरार्याय विशोऽव तारीर्दासीः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप इनसे (उत्तम, मध्यम एवं कनिष्ठ रक्षा साधनों के द्वारा) शत्रु सेना का संहार करने वाली हमारी सेना की रक्षा करते हुए शत्रु की सेना के मन्यु को नष्ट करें एवं यज्ञ जैसे श्रेष्ठ कर्म करने वाले मनुष्यों के शत्रुओं को भी नष्ट करें ॥२॥

इन्द्र जामय उत येऽजामयोऽर्वाचीनासो वनुषो युयुज्रे ।

त्वमेषां विथुरा शवांसि जहि वृष्ण्यानि कृणुही पराचः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे उन शत्रुओं का संहार करें, जो सन्मुख प्रकट होकर, निकट या दूर रहकर हमें मारना चाहते हैं। अपने बल से इनके बल को पराजित करके, इन्हें हमसे दूर हटा दें ॥३॥

शूरो वा शूरं वनते शरीरैस्तनूरुचा तरुषि यत्कृण्वैते ।
तोके वा गोषु तनये यदप्सु वि क्रन्दसी उर्वरासु ब्रवैते ॥४॥

जब पुत्र, पौत्र, गौ, जल एवं उर्वर भूमि के लिए परस्पर विवाद हो जाता हैं और युद्ध होते हैं, तब युद्धरत उन योद्धाओं में से आपके कृपा पात्र की विजय होती है ॥४॥

नहि त्वा शूरो न तुरो न धृष्णुर्न त्वा योधो मन्यमानो युयोध ।
इन्द्र नकिष्ट्वा प्रत्यस्त्येषां विश्वा जातान्यभ्यसि तानि ॥५॥

आज तक जो भी, जितने भी सामर्थ्यशाली पैदा हुए हैं, उन्हें युद्ध में इन्द्रदेव ने जीता हैं; अतः कोई भी धर्षक एवं घमण्डी, शूरवीर जिसने भले ही शत्रुओं का नाश किया हो, आपसे युद्ध नहीं करता । आप सर्वश्रेष्ठ योद्धा हैं ॥५॥

स पत्यत उभयोर्नृम्णमयोर्यदी वेधसः समिथे हवन्ते ।
वृत्रे वा महो नृवति क्षये वा व्यचस्वन्ता यदि वितन्तसैते ॥६॥

शत्रुओं को रोकने वाले, युद्ध या दास युक्त उत्तम घर के लिए युद्ध में परस्पर दो योद्धाओं में वही विजयी होगा, जिसके लिए ऋत्विग्गणों ने यज्ञ में इन्द्रदेव के निमित्त आहुति प्रदान की हो ॥६॥

अध स्मा ते चर्षणयो यदेजानिन्द्र त्रातोत भवा वरूता ।
अस्माकासो ये नृतमासो अर्य इन्द्र सूरयो दधिरे पुरो नः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! अपनी भयभीत प्रजा की आप रक्षा करें । हे इन्द्रदेव ! आप उन उत्तम व्यक्तियों की दुःखों से रक्षा करें, जो आपको प्राप्त करते हैं । हे देव ! जिन स्तोताओं ने हमें अग्रिम स्थान प्रदान किया है; आप उन सबकी भी रक्षा करें ॥७॥

अनु ते दायि मह इन्द्रियाय सत्रा ते विश्वमनु वृत्रहत्ये ।
अनु क्षत्रमनु सहो यजत्रेन्द्र देवेभिरनु ते नृषह्ये ॥८॥

है इन्द्रदेव ! आप महान् वीर हैं । शत्रुनाशक समस्त सामर्थ्य आप में स्थित है । हे इन्द्रदेव ! देवगणों ने आपको उत्तम बल प्रदान किया है, जिसके द्वारा आप संसार में शत्रुओं को पराजित कर सकें ॥८॥

एवा नः स्पृधः समजा समत्स्विन्द्र रारन्धि मिथतीरदेवीः ।
विद्याम वस्तोरवसा गृणन्तो भरद्वाजा उत त इन्द्र नूनम् ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! इस प्रकार आप शत्रु-सेना का नाश करने की प्रेरणा हमारी सेना को प्रदान करें एवं हमारे हित साधन के निमित्त दुष्ट हिंसक आसुरी सेना का नाश करें । हे इन्द्रदेव !हम (भरद्वाज) स्तोता अन्न सहित आवास प्राप्त करें ॥९॥

सूक्त २६

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

श्रुधी न इन्द्र ह्वयामसि त्वा महो वाजस्य सातौ वावृषाणाः ।
सं यद्विशोऽयन्त शूरसाता उग्रं नोऽवः पार्ये अहन्दाः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! (सोम से) सिंचन करते हुए बहुत अन्न की कामना वाले हम आपका आवाहन करते हैं, आप हम सबकी इस प्रार्थना को सुनें । जब वीर योद्धा संग्राम क्षेत्रों में जाते हैं, तब उन निर्णायक दिनों में उन्हें संरक्षण एवं शक्ति प्रदान करें, जिससे शत्रु भयभीत हो जाएँ ॥१॥

त्वां वाजी हवते वाजिनेयो महो वाजस्य गध्यस्य सातौ ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं तरुत्रं त्वां चष्टे मुष्टिहा गोषु युध्यन् ॥२॥

है इन्द्रदेव ! आप दुर्जनों के नाशक एवं सज्जनों के पोषक हैं । हे देव ! श्रेष्ठ अन्न प्राप्ति के निमित्त, अन्नवान् भरद्वाज, स्तुतियों द्वारा आपका आवाहन करते हैं। गौओं के लिए युद्ध करते समय आपकी कृपा (शक्ति) से वे मुष्टिका से ही शत्रु का विनाश कर देते हैं ॥२॥

त्वं कविं चोदयोऽर्कसातौ त्वं कुत्साय शुष्णं दाशुषे वर्क् ।
त्वं शिरो अमर्मणः पराहन्नतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! अन्न की कामना के लिये 'भार्गव ऋषि' को आप प्रेरणा दें । आपने हविदाता 'कुत्स' के लिए शुष्ण' असुर का संहार किया तथा 'अतिथिग्व' को सुख देने हेतु इस 'शम्बरासुर' का शिरच्छेद किया, जो अपने को अमर मानता था ॥३॥

त्वं रथं प्र भरो योधमृष्वमावो युध्यन्तं वृषभं दशद्युम् ।
त्वं तुग्रं वेतसवे सचाहन्त्वं तुजिं गृणन्तमिन्द्र तूतोः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आपने राजा 'वृषभ' को युद्ध-सिद्धि में परम उपयोगी रथ देकर, दस दिन तक होने वाले युद्ध में शत्रुओं से उनकी रक्षा की । 'वेतस' की सहायता करते हुए 'तुग्रासुर' को मार डाला । तुज' नामक राजा को स्तुति करने पर प्रवृद्ध किया ॥४॥

त्वं तदुक्थमिन्द्र बर्हणा कः प्र यच्छता सहस्रा शूर दर्षि ।
अव गिरेर्दासं शम्बरं हन्प्रावो दिवोदासं चित्राभिरूती ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप शत्रुनाशक हैं । हे वीर इन्द्रदेव ! आपने 'शम्बर' असुर की सौ-सौ एवं सहस्रों सेनाओं को नष्ट किया। यज्ञ के दुश्मन 'शम्बरासुर' को मार करके तथा 'दिवोदास' की रक्षा करके आपने बहुत प्रशंसनीय कार्य किया ॥५॥

त्वं श्रद्धाभिर्मन्दसानः सोमैर्दभीतये चुमुरिमिन्द्र सिष्वप् ।
त्वं रजिं पिठीनसे दशस्यन्त्शष्टिं सहस्रा शच्या सचाहन् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! श्रद्धा सहित यज्ञानुष्ठान करके प्राप्त सोमपान से प्रसन्न होकर, आपने राजा 'दभीति' की सुरक्षा के लिए चुमुरि' का नाश किया । हे इन्द्रदेव ! आपने वीर 'पिठीनस' को राज्य देकर शत्रु के साठ हजार वीरों को युद्ध-कौशल से मार डाला ॥६॥

अहं चन तत्सूरिभिरानश्यां तव ज्याय इन्द्र सुम्नमोजः ।
त्वया यत्स्तवन्ते सधवीर वीरास्त्विवरूथेन नहुषा शविष्ठ ॥७॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप शत्रुजयी एवं त्रिलोक के रक्षक हैं । स्तोतागण सुख एवं सामर्थ्य के निमित्त आपसे प्रार्थना करते हैं । हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त सुख-सामर्थ्य को स्तोताओं के साथ हम (भरद्वाज) भी प्राप्त करें ॥७॥

वयं ते अस्यामिन्द्र द्युम्नहूतौ सखायः स्याम महिन प्रेष्ठाः ।
प्रातर्दनिः क्षत्रश्रीरस्तु श्रेष्ठो घने वृत्राणां सनये धनानाम् ॥८॥

हे पूजनीय इन्द्रदेव ! हम सखा भाव से आपकी स्तुति करते हैं। धन-प्राप्ति के निमित्त की जा रही इन स्तुतियों के कारण हम आपके प्रिय पात्र बने । "प्रातर्दन" के पुत्र क्षत्रश्री' को सर्वाधिक ऐश्वर्य प्रदान करें । वे शत्रुओं को मारकर धन प्राप्त करें ॥८॥

सूक्त २७

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

किमस्य मदे किम्वस्य पीताविन्द्रः किमस्य सख्ये चकार ।
रणा वा ये निषदि किं ते अस्य पुरा विविद्रे किमु नूतनासः ॥१॥

सोम से हर्षित इन्द्रदेव ने क्या किया? सोमरस पीकर क्या किया? सोमरस से मित्रता करके क्या किया? प्राचीन एवं नये स्तुति करने वालों ने आपसे क्या प्राप्त किया ? ॥१॥

सदस्य मदे सद्वस्य पीताविन्द्रः सदस्य सख्ये चकार ।
रणा वा ये निषदि सत्ते अस्य पुरा विविद्रे सदु नूतनासः ॥२॥

सोमपान से हर्षित हुए इन्द्रदेव ने श्रेष्ठ कर्म किए । सोमपान के बाद सत्कार्य । इसके साथ मित्रता करने पर भी सत्कार्य ही किए जो प्राचीन और नवीन स्तुति करने वाले हैं, उन्होंने आपके द्वारा सत्कार्य ही प्राप्त किया॥२॥

नहि नु ते महिमनः समस्य न मघवन्मघवत्त्वस्य विद्म ।
न राधसोराधसो नूतनस्येन्द्र नकिर्ददृश इन्द्रियं ते ॥३॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! हम यह नहीं जानते कि आपसे बड़ा अन्य कोई महमा वाला या ऐश्वर्यशाली होगा। आपकी सम्पूर्ण प्रशंसनीय सिद्धि और सामर्थ्य को भी हम नहीं जानते है ॥३॥

एतत्यत्त इन्द्रियमचेति येनावधीर्वरशिखस्य शेषः ।
वज्रस्य यत्ते निहतस्य शुष्मात्स्वनाच्चिदिन्द्र परमो ददार ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आपके उस पराक्रम को क्या हम नहीं जानते, जिसके द्वारा आपने 'वरक्खि ' नामक अमुर के पुत्रों का संहार किया था? हे इन्द्रदेव ! उसी पराक्रम से प्रहार के निमित्त उद्यत वज्र की घोर ध्वनि से ही शत्रु ('वरशिख' के पुत्र) विदीर्ण हो गये थे ॥४॥

वधीदिन्द्रो वरशिखस्य शेषोऽभ्यावर्तिने चायमानाय शिक्षन् ।
वृचीवतो यद्धरियूपीयायां हन्पूर्वे अर्धे भियसापरो दर्त् ॥५॥

इन्द्रदेव ने चायमान (चय की क्रिया में संलग्न रहने वाले के सहयोगी) के पुत्र अभ्यार्वर्ती (सतत आवर्तनशील), को उपयुक्त शिक्षा (परामर्श-कौशल) प्रदान करके 'वरशिख' (तेजस्वी) असुर के पुत्रों का वध किया। जब उन्होंने हरियूपिया (नगर या क्षेत्र) के पूर्व भाग में वृचीवान् (अवरोध उत्पन्न करने वाले) को मारा, तो दूसरा (असुर पुत्र) भय से विदीर्ण हो गया ॥५॥

त्रिंशच्छतं वर्मिण इन्द्र साकं यव्यावत्यां पुरुहूत श्रवस्या ।
वृचीवन्तः शरवे पत्यमानाः पात्रा भिन्दाना न्यर्थान्यायन् ॥६॥

हे बहुतों द्वारा आहूत इन्द्रदेव ! यश एवं अन्न प्राप्त करने के लिए आपसे युद्ध करने वाले, यज्ञ के पात्रों को नष्ट करने वाले एवं कवचधारी 'वरशिख' के एक सौ तीस पुत्रों को आपने युद्ध में एक समय ही मार डाला ॥६॥

यस्य गावावरुषा सूयवस्यू अन्तरू षु चरतो रेरिहाणा ।
स सृञ्जयाय तुर्वशं परादाद्वृचीवतो दैववाताय शिक्षन् ॥७॥

घास खोजती गौओं की तरह जिन इन्द्रदेव के दो कान्तिवान् अश्व अन्तरिक्ष में विचरते हैं। उन्हीं इन्द्रदेव ने 'वृचीवान' के पुत्र 'दैववात' को प्रसन्न करते हुए 'तुर्वश' को 'सृञ्जय' के अधीन कर दिया ॥७॥

द्वयाँ अग्ने रथिनो विंशतिं गा वधूमतो मघवा मह्यं सम्राट् ।
अभ्यावर्ती चायमानो ददाति दूणाशेयं दक्षिणा पार्थवानाम् ॥८॥

हे अग्निदेव ! राजसूय यज्ञ करने वाले, बहुत दान देने वाले, 'चायमान' के पुत्र अभ्यावत' ने हमें बीस गौएँ एवं रथ के साथ अनेक सेविकायें प्रदान की थी । पृथु वंश के राजा 'अभ्यावर्ती ' की यह दक्षिणा अनश्वर है ॥८॥

सूक्त २८

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – गाव:, २, ८ इन्दो गावो । छंद – त्रिष्टुप, १-४ जगती, ८ अनुष्टुप

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तु गोष्ठे रणयन्त्वस्मे ।
प्रजावतीः पुरुरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरुषसो दुहानाः ॥१॥

गौएँ हमारे घर आकर हमारा कल्याण करें । वे (गौएँ) गोशाला में रहकर हमें आनन्दित करें । इन गौओं में अनेक रंग-रूप वाली गौएँ बछड़ों से युक्त होकर, उषाकाल में इन्द्रदेव के निमित्त दुग्ध प्रदान करें ॥१॥

इन्द्रो यज्वने पृणते च शिक्षत्युपेद्ददाति न स्वं मुषायति ।
भूयोभूयो रयिमिदस्य वर्धयन्नभिन्ने खिल्ये नि दधाति देवयुम् ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप याजक एवं स्तोताओं के लिए अभिलषित अन्न-धन प्रदान करते हैं। उनके धन का कभी हरण नहीं करते; वरन् उसे निरन्तर बढ़ाते हैं। देवत्व को प्राप्त करने की इच्छा वालों को अखण्डित एवं सुरक्षित निवास देते हैं ॥२॥

न ता नशन्ति न दभाति तस्करो नासामामित्रो व्यथिरा दधर्षति ।
देवाँश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिः सह ॥३॥

वे गौएँ नष्ट नहीं होतीं, तस्कर उन्हें हानि नहीं पहुँचा पाते । शत्रु के अस्त्र उन गौओं को क्षति नहीं पहुँचा पाते । गौओं के पालक जिन गौओं से देवों का वजन करते हैं, उन्हीं गौओं के साथ चिरकाल तक सुखी रहें ॥३॥

न ता अर्वा रेणुककाटो अश्नुते न संस्कृतत्रमुप यन्ति ता अभि ।
उरुगायमभयं तस्य ता अनु गावो मर्तस्य वि चरन्ति यज्वनः ॥४॥

रेणुका (धूल) उड़ाने वाले द्रुतगामी अश्व भी उन गौओं को नहीं पा सकेंगे। इन गौओं पर वध करने के लिए आघात न करें । याजक की वे गौएँ विस्तृत क्षेत्र में निर्भय होकर विचरण करें ॥४॥

गावो भगो गाव इन्द्रो मे अच्छान्गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः ।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम् ॥५॥

गौएँ हमें धन देने वाली हों । हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौएँ प्रदान करें । गोदुग्ध प्रथम सोमरस में मिलाया जाता है। हे मनुष्यो ! ये गौएँ ही इन्द्र रूप हैं। उन्हीं इन्द्रदेव को हम श्रद्धा के साथ पाना चाहते हैं ॥५॥

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिदश्रीरं चित्कृणुथा सुप्रतीकम् ।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद्वो वय उच्यते सभासु ॥६॥

हे गौओ !आप हमें बलवान् बनाएँ। आप हमारे रुग्ण एवं कृश शरीरों को सुन्दर-स्वस्थ बनाएँ ।आप अपनी कल्याणकारी ध्वनि से हमारे

घरों को पवित्र करें । यज्ञ मण्डप में आपके द्वारा प्राप्त अन्न का ही यशोगान होता है ॥६॥

प्रजावतीः सूयवसं रिशन्तीः शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबन्तीः ।
मा वः स्तेन ईशत माघशंसः परि वो हेती रुद्रस्य वृज्याः ॥७॥

हे गौओ ! आप बछड़ों से युक्त हों । उत्तम घास एवं सुखकारक स्वच्छ जल का पान करें। आपका पालक चोरी करने वाला न हो। हिंसक पशु आपको कष्ट न दें । परमेश्वर का कालरूप अस्त्र आपके पास ही न आए ॥७॥

उपेदमुपपर्चनमासु गोषूप पृच्यताम् ।
उप ऋषभस्य रेतस्युपेन्द्र तव वीर्ये ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपके वीर्य (पराक्रम) में बलशाली का ओज संयुक्त हो । इन गौओं के उत्पादक (किरणों के प्रवाहों) के साथ उत्प्रेरक (केटेलैटिक एजेन्ट या शक्तिवर्धक तत्त्व) संयुक्त हों ॥८॥

सूक्त २९

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

इन्द्रं वो नरः सख्याय सेपुर्महो यन्तः सुमतये चकानाः ।
महो हि दाता वज्रहस्तो अस्ति महामु रण्वमवसे यजध्वम् ॥१॥

हे मनुष्यो ! आपके नेता (यज्ञ के ऋत्विक् अथवा समाज के अग्रणी) श्रेष्ठ बुद्धि वाले एवं उदार हैं । वे स्तोत्रों का गायन करते हुए, सखा भाव से इन्द्रदेव की सेवा करते हैं। वज्रधारी इन्द्रदेव बहुत धन देते हैं, अतएव रमणीय एवं महान् इन्द्रदेव का, अपनी रक्षा के लिए पूजन करें ॥१॥

आ यस्मिन्हस्ते नर्या मिमिक्षुरा रथे हिरण्यये रथेष्ठाः ।
आ रश्मयो गभस्त्योः स्थूरयोराध्वन्नश्वासो वृषणो युजानाः ॥२॥

जिन इन्द्रदेव के पास मनुष्यों का हितकारी धन है, जो स्वर्ण-रथ पर चढ़ते हैं एवं जिनके पुष्ट हाथों में घोड़ों की (नियंत्रक) लगाम है, जिन्हें रथ में जुते हुए अश्व मार्ग पर ले जाते हैं, ऐसे इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं ॥२॥

श्रिये ते पादा दुव आ मिमिक्षुर्धृष्णुर्वज्री शवसा दक्षिणावान् ।
वसानो अत्कं सुरभिं दृशे कं स्वर्ण नृतविषिरो बभूथ ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप वज्रधारण करके शत्रुओं को परास्त करते हैं । ऐश्वर्य की कामना से हम (भरद्वाज) आपके चरणों में सेवा समर्पित करते हैं । हे सर्वप्रधान इन्द्रदेव ! आप सुरभित आवरण धारण करते हैं। सबके लिए दर्शनीय आप सूर्यदेव की तरह सबका उत्साह बढ़ाते हैं ॥३॥

स सोम आमिश्लतमः सुतो भूद्यस्मिन्पक्तिः पच्यते सन्ति धानाः ।
इन्द्रं नरः स्तुवन्तो ब्रह्मकारा उक्था शंसन्तो देववाततमाः ॥४॥

इस समय पकाने योग्य पुरोड़ाश पकाये जाते हैं । लाजा तैयार किया जाता है । विगण इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं। सोमरस निकालकर उसमें दुग्धादि श्रेष्ठ पदार्थ मिलाये जाते हैं । वे स्तुति करते हुए इन्द्रदेव का सामीप्य प्राप्त करते हैं ॥४॥

न ते अन्तः शवसो धाय्यस्य वि तु बाबधे रोदसी महित्वा ।
आ ता सूरिः पृणति तूतुजानो यूथेवाप्सु समीजमान ऊती ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपका बल अनन्त हैं। द्यावा-पृथिवी आपके बल से भयभीत हो काँपते हैं। जिस तरह गो पालक गौओं को तृप्त करता है, वैसे ही हम, स्तुति करते हुए इस यज्ञ में, आपको तृप्त करने के लिए उत्तम आहुतियाँ समर्पित करते हैं ॥५॥

एवेदिन्द्रः सुहव ऋष्वो अस्तूती अनूती हिरिशिप्रः सत्वा ।
एवा हि जातो असमात्योजाः पुरू च वृत्रा हनति नि दस्यून् ॥६॥

श्रेष्ठ नासिका अथवा सुन्दर मुकुट धारण करने वाले महान् इन्द्रदेव सुखपूर्वक आहूत किये जा सकते हैं। वे स्वयं आयें अथवा न आयें, स्तोताओं को धन प्रदान करते ही हैं। इस प्रकार पराक्रमी महावीर इन्द्रदेव अनुपम तेज एवं बल से बहुत से वृत्रासुर जैसे असुरों तथा शत्रुओं का नाश करते हैं ॥६॥

सूक्त ३०

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

भूय इद्वावृधे वीर्यायँ एको अजुर्यो दयते वसूनि ।
प्र रिरिचे दिव इन्द्रः पृथिव्या अर्धमिदस्य प्रति रोदसी उभे ॥१॥

पराक्रम करने के लिए पुनः वे महावीर (इन्द्रदेव) तत्पर हैं । वे श्रेष्ठ एवं अजर इन्द्रदेव धन देते हैं। वे द्यावा-पृथिवी से भी बड़े हैं । द्यावा-पृथिवी इन्द्रदेव के आधे भाग के तुल्य हैं ॥१॥

अधा मन्ये बृहदसुर्यमस्य यानि दाधार नकिरा मिनाति ।
दिवेदिवे सूर्यो दर्शतो भूद्वि सद्मान्युर्विया सुक्रतुर्धात् ॥२॥

इन इन्द्रदेव के बल के महत्त्व को हम मानते हैं । जो कार्य इन्द्रदेव करते हैं, उनको नष्ट करने में कोई समर्थ नहीं है। उत्तम कर्म करने वाले इन्द्रदेव ने भुवनों का विस्तार किया है । इन्द्रदेव के प्रभाव से ही सूर्यदेव प्रतिदिन उदित होते हैं ॥२॥

अद्या चिन्नू चित्तदपो नदीनां यदाभ्यो अरदो गातुमिन्द्र ।
नि पर्वता अद्मसदो न सेदुस्त्वया दृव्हानि सुक्रतो रजांसि ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने ही आज भी और पहले भी नदियों के जल को प्रवाहित होने के लिए मार्गों का निर्माण किया। जिस तरह भोजन के निमित्त बैठा मनुष्य स्थिर होकर बैठता है, वैसे ही ये पर्वत आपने स्थिर किये हैं। हे श्रेष्ठ कर्म करने वाले इन्द्रदेव ! आपने सब लोक सुदृढ़ किए हैं ॥३॥

सत्यमित्तन्न त्वावाँ अन्यो अस्तीन्द्र देवो न मर्त्यो ज्यायान् ।
अहन्नहिं परिशयानमर्णोऽवासृजो अपो अच्छा समुद्रम् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आपके समान अन्य कोई देव नहीं है, यह सत्य ही है । आपके समान मनुष्य भी नहीं है। मनुष्यों में तथा देवगणों में आपसे बढ़कर कोई नहीं हैं। जल को ढंककर सोने वाले वृत्रासुर का आपने ही नाश किया था और समुद्र की ओर जल प्रवाहित किया था ॥४॥

त्वमपो वि दुरो विषूचीरिन्द्र दृव्ह्मरुजः पर्वतस्य ।
राजाभवो जगतश्चर्षणीनां साकं सूर्यं जनयन्द्यामुषासम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपने जलराशि के मार्ग चारों ओर खोलकर जल प्रवाहित किया। आपने मेघ के बन्धन खोल दिए। सूर्य, उषा एवं स्वर्ग को प्रकाशित करने वाले आप सम्पूर्ण विश्व के स्वामी बनें ॥५॥

सूक्त ३१

ऋषि: सुहोत्रो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप, ४ शकरी

अभूरेको रयिपते रयीणामा हस्तयोरधिथा इन्द्र कृष्टीः ।
वि तोके अप्सु तनये च सूरेऽवोचन्त चर्षणयो विवाचः ॥१॥

हे धनपति इन्द्रदेव ! आप ही सम्पूर्ण धनों के स्वामी हैं । आप ही स्वयं अपने बाहुबल से प्रजाओं का धारण करते हैं। मनुष्यगण शत्रुओं को परास्त करने तथा पुत्र-पौत्रादि एवं वर्षा के निमित्त आपकी स्तुति करते हैं ॥१॥

त्वद्भियेन्द्र पार्थिवानि विश्वाच्युता चिच्च्यावयन्ते रजांसि ।
द्यावाक्षामा पर्वतासो वनानि विश्वं दव्ह्यं भयते अज्मन्ना ते ॥२॥

हे. इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष में उत्पन्न मेघ, गिराने योग्य जल न होने पर भी आपके भय से जल बरसाने लगते हैं। अन्तरिक्ष, भूलोक, पर्वत, वन तथा समस्त चराचर जगत् आपके आगमन से भयभीत हा जाते हैं ॥२॥

त्वं कुत्सेनाभि शुष्णमिन्द्राशुषं युध्य कुयवं गविष्टौ ।

दश प्रपित्वे अध सूर्यस्य मुषायश्चक्रमविवे रपांसि ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने उस अति बलवान् , उग्रवीर असुर "शुष्ण" को पराजित किया। गौओं को बचाने के लिए संग्राम में कुयव का संहार किया। आपने सूर्यदेव के रथ को चक्र हर लिया और पापी राक्षसों का नाश किया ॥३॥

त्वं शतान्यव शम्बरस्य पुरो जघन्थाप्रतीनि दस्योः ।
अशिक्षो यत्र शच्या शचीवो दिवोदासाय सुन्वते सुतक्रे भरद्वाजाय गृणते वसूनि ॥४॥

हे बुद्धिमान इन्द्रदेव ! आपने सोमरस अर्पित करने वाले 'दिवोदास' को एवं स्तोता 'भरद्वाज' को प्रज्ञा सहित धन प्रदान किया । आपने 'शम्बर' असुर की सौ पुरियों को ध्वस्त किया ॥४॥

स सत्यसत्वन्महते रणाय रथमा तिष्ठ तुविनृम्ण भीमम् ।
याहि प्रपथिन्नवसोप मद्रिक्प्र च श्रुत श्रावय चर्षणिभ्यः ॥५॥

हे अक्षुण्ण सत्य-बल के धनी इन्द्रदेव ! आप महायुद्ध के लिए अपने भयंकर रथ पर चढ़े। हे सन्मार्गगामी इन्द्रदेव ! आप अपने रक्षा-साधनों सहित हमारे पास आकर, हमें यशस्वी बनायें ॥५॥

सूक्त ३१

ऋषि: सुहोत्रो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप

अपूर्व्या पुरुतमान्यस्मै महे वीराय तवसे तुराय ।
विरप्शिने वज्रिणे शंतमानि वचांस्यासा स्थविराय तक्षम् ॥१॥

शत्रुनाशक, तीव्रगामी, वज्रधारी, स्तुति के योग्य, महान् इन्द्रदेव के लिए हमने अपने सुख से अपूर्व, सुखदायी एवं विस्तृत स्तोत्रों का उच्चारण किया ॥१॥

स मातरा सूर्येणा कवीनामवासयद्रुजदद्रिं गृणानः ।
स्वाधीभिर्ऋक्वभिर्वावशान उदुस्रियाणामसृजन्निदानम् ॥२॥

वे इन्द्रदेव, ज्ञानवानों अथवा माता-पिता (द्यावा-पृथिवी) के हित के लिए मेघों को छिन्न-भिन्न करके द्यावा-पृथिवी को सूर्यदेव से प्रकाशित करते हैं। स्तुत किए जाने पर वे गौओं (किरणों) को मेघों से मुक्त करते हैं ॥२॥

स वह्निभिर्ऋक्वभिर्गोषु शश्वन्मितज्ञुभिः पुरुकृत्वा जिगाय ।
पुरः पुरोहा सखिभिः सखीयन्दव्व्हा रुरोज कविभिः कविः सन् ॥३॥

उन बहुकर्मा इन्द्रदेव नै, यज्ञकर्ता एवं स्तुति करने वाले प्रषगणों (अंगिराओं) के सहयोग से गौओं की प्राप्ति के निमित्त राक्षसों को पराजित किया। कवियों (दूरदर्शियों) के साथ मिलकर शत्रुओं के नगरों को ध्वस्त किया ॥३॥

स नीव्याभिर्जरितारमच्छा महो वाजेभिर्महद्भिश्च शुष्मैः ।
पुरुवीराभिर्वृषभ क्षितीनामा गिर्वणः सुविताय प्र याहि ॥४॥

स्तुति द्वारा उपासना के योग्य है बलवान् इन्द्रदेव ! आप महान् अन्नों और बलों से युक्त होकर, नवीन बल बढ़ाने वाले सखाओं के साथ, सुख प्राप्ति के निमित्त आयें ॥४॥

स सर्गेण शवसा तक्तो अत्यैरप इन्द्रो दक्षिणतस्तुराषाट् ।
इत्था सृजाना अनपावृदर्थं दिवेदिवे विविषुरप्रमृष्यम् ॥५॥

हिंसकों को वश में करने वाले इन्द्रदेव सदा ही अपने स्वयं के बलों से निरन्तर गमनशील तेजस्वी घोड़ों से युक्त होकर, जल-राशि को क्षोभरहित समुद्र की ओर प्रवाहित होने के लिए प्रेरित करते हैं ॥५॥

सूक्त ३३

ऋषिः शुनहोत्रो भारद्वाजः
देवता – इन्द्रः । छंद – त्रिष्टुप,

य ओजिष्ठ इन्द्र तं सु नो दा मदो वृषन्त्स्वभिष्टिर्दास्वान् ।
सौवश्व्यं यो वनवत्स्वश्वो वृत्रा समत्सु सासहदमित्रान् ॥१॥

हे बलवान् इन्द्रदेव ! आप हमें अति बलशाली, स्तुति करने वाला, यज्ञ करने वाला एवं हव्यदाता पुत्र दें । वह पुत्र घोड़े पर बैठकर युद्ध में सुन्दर अश्वों वाले विरुद्धाचारी शत्रुओं को पराजित करे ॥१॥

त्वां हीन्द्रावसे विवाचो हवन्ते चर्षणयः शूरसातौ ।
त्वं विप्रेभिर्वि पणीँरशायस्त्वोत इत्सनिता वाजमर्वा ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! विभिन्न प्रकार से स्तुति करने वाले मनुष्य, संग्राम में रक्षा के लिए आपको आहूत करते हैं। आपने अङ्गिराओं के साथ मिलकर पणियों को मारा था। आपकी उपासना करने वाला आपकी सुरक्षा में रहता हुआ अन्न प्राप्त करता है ॥२॥

त्वं ताँ इन्द्रोभयाँ अमित्रान्दासा वृत्राण्यार्या च शूर ।
वधीर्वनेव सुधितेभिरत्कैरा पृत्सु दर्षि नृणां नृतम ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! दस्युओं एवं आर्यों दोनों में जो शत्रु थे, उनका आपने वृत्रासुर की तरह वध किया। जिस प्रकार कुल्हाड़ी वृक्षों को काटती है, उसी प्रकार संग्राम में तीक्ष्ण आयुधों से आपने शत्रुओं को काटा ॥३॥

स त्वं न इन्द्राकवाभिरूती सखा विश्वायुरविता वृधे भूः ।
स्वर्षाता यद्ध्वयामसि त्वा युध्यन्तो नेमधिता पृत्सु शूर ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप सर्वत्र गमन करने वाले हैं। हम, धन पाने की अभिलाषा से आपका आवाहन करते हैं । आप मित्ररूप होकर हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । वीरपुरुषों सहित संग्राम करने वाले हम रक्षा साधनों के लिए आपका आवाहन करते हैं ॥४॥

नूनं न इन्द्रापराय च स्या भवा मृळीक उत नो अभिष्टौ ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्मन्दिवि ष्याम पार्ये गोषतमाः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आज और अन्य किसी समय भी आप हम सबके ही रहें । हमारे पास आकर हर समय आप हमें सुख देने वाले हों । गोसेवा की इच्छा वाले, स्तुति करने वाले, हमारा (याजक का), सुख और दुःख दोनों स्थितियों में आपसे सम्बन्ध बना रहे ॥५॥

सूक्त ३४

ऋषि: शुनहोत्रो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

सं च त्वे जग्मुर्गिर इन्द्र पूर्वीर्वि च त्वद्यन्ति विभ्वो मनीषाः ।
पुरा नूनं च स्तुतय ऋषीणां पस्पृध्र इन्द्रे अध्युक्थार्का ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी प्राचीन काल में भी अगणित स्तोत्रों से स्तुति की जा चुकी है। आपके स्तोताओं की प्रशंसा होती है । (प्राचीन एवं नूतन) अषियों की स्तुतियाँ परस्पर मानो स्पर्धा सी करती हैं ॥१॥

पुरुहूतो यः पुरुगूर्त ऋभ्वाँ एकः पुरुप्रशस्तो अस्ति यज्ञैः ।
रथो न महे शवसे युजानोऽस्माभिरिन्द्रो अनुमाद्यो भूत् ॥२॥

वे इन्द्रदेव बहुतों द्वारा आवाहित किये गये, अद्वितीय, बहुतों से प्रशंसित, महान् एवं यजमानों द्वारा पूजित हैं। रथ (इच्छित वस्तुएँ लाने वाले) की तरह बल लाभ के निमित्त इन्द्रदेव हम सबके लिए स्तुत्य हैं ॥२॥

न यं हिंसन्ति धीतयो न वाणीरिन्द्रं नक्षन्तीदभि वर्धयन्तीः ।
यदि स्तोतारः शतं यत्सहस्रं गृणन्ति गिर्वणसं शं तदस्मै ॥३॥

जिन इन्द्रदेव के कार्यों में, यज्ञ कर्म एवं स्तोत्रादि बाधक नहीं हैं, वे इन्द्रदेव (की सामर्थ्य व कर्मों) को बढ़ाते हैं। स्तुति द्वारा सेवा के योग्य इन्द्रदेव की सैकड़ों एवं हजारों लोग वन्दना करते हैं। ये स्तोत्र इन्द्रदेव के लिए सुखकर होते हैं ॥३॥

अस्मा एतद्दिव्यर्चेव मासा मिमिक्ष इन्द्रे न्ययामि सोमः ।
जनं न धन्वन्नभि सं यदापः सत्रा वावृधुर्हवनानि यज्ञैः ॥४॥

इस यज्ञ के दिन, अर्चना सहित, स्तोत्रों के समान (प्रिय) यह मिश्रित सोमरस इन्द्रदेव के लिए प्रस्तुत किया जाता है । जैसे मरुस्थल में प्रवाहित जल मनुष्यों को आनन्दित करता है, वैसे ही हवियों के साथ अर्पित स्तोत्र भी इन्द्रदेव को आनन्दित करते हैं ॥४॥

अस्मा एतन्मह्याङ्गूषमस्मा इन्द्राय स्तोत्रं मतिभिरवाचि ।
असद्यथा महति वृत्रतूर्य इन्द्रो विश्वायुरविता वृधश्च ॥५॥

सब जगह जाने वाले इन्द्रदेव बड़े युद्ध में हम सबके रक्षक एवं हमें बढ़ाने वाले हैं, इसीलिए स्तोतागण इन्द्रदेव के लिए ही आग्रहपूर्वक स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं ॥५॥

सूक्त ३५

ऋषिः नरो भारद्वाजः
देवता – इन्द्रः । छंद – त्रिष्टुप,

कदा भुवन्नथक्षयाणि ब्रह्म कदा स्तोत्रे सहस्रपोष्यं दाः ।
कदा स्तोमं वासयोऽस्य राया कदा धियः करसि वाजरत्नाः ॥१॥

हे रथारूढ़ इन्द्रदेव ! हमारे स्तोत्र कब आप तक पहुँचने योग्य होंगे? कब आप कृपा करके सैकड़ों लोगों का पोषण करने वाला पुत्र एवं धन हमें देंगे? हमारे यज्ञ कर्मों को अन्न से रमणीय कब बनायेंगे ? ॥१॥

कर्हि स्वित्तदिन्द्र यन्नृभिर्नृन्वीरैर्वीरान्नीळयासे जयाजीन् ।
त्रिधातु गा अधि जयासि गोष्विन्द्र द्युम्नं स्वर्वद्धेह्यस्मे ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे वीर पुरुषों से शत्रुओं के वीर पुरुषों को एवं हमारे वीर पुत्रों से शत्रुओं के वीर पुत्रों को (संग्राम-क्षेत्र में कब मिलायेंगे ? आप भगोड़े शत्रुओं से दूध-दही और घी देने वाली गौएँ कब जीतेंगे ? हे इन्द्रदेव ! हमें धन की प्राप्ति कब करायेंगे? ॥२॥

कर्हि स्वित्तदिन्द्र यज्जरित्रे विश्वप्सु ब्रह्म कृणवः शविष्ठ ।
कदा धियो न नियुतो युवासे कदा गोमघा हवनानि गच्छाः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं को कब अनेकों प्रकार के अन्न प्रदान करेंगे? आप स्तोताओं को गौएँ कब प्रदान करेंगे? और आप कब हमारे कर्मों यज्ञों) और स्तुतियों को अपने से संयुक्त करेंगे ? ॥३॥

स गोमघा जरित्रे अश्वश्चन्द्रा वाजश्रवसो अधि धेहि पृक्षः ।
पीपिहीषः सुदुघामिन्द्र धेनुं भरद्वाजेषु सुरुचो रुरुच्याः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तुति करने वालों को गौएँ, घोड़े एवं बल देने वाला प्रसिद्ध अन्न प्रदान करें। आप अन्न और सुन्दर दुग्ध देने वाली गौओं को पुष्टि प्रदान करें । वे गौएँ और अन्न कान्तियुक्त हों, आप ऐसी कृपा करें ॥४॥

तमा नूनं वृजनमन्यथा चिच्छूरो यच्छक्र वि दुरो गृणीषे ।
मा निररं शुक्रदुघस्य धेनोराङ्गिरसान्ब्रह्मणा विप्र जिन्व ॥५॥

हे इन्द्रदेव !आप अत्यन्त पराक्रमी हैं । आप विभिन्न योजनाएँ बनाकर शत्रु का संहार करें । हे इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ पदार्थों के देने वाले हैं हम स्तोता उत्तम स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं । हे देव !अङ्गिराओं को अन्न प्रदान करें ॥५॥

सूक्त ३६

ऋषि: नरो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

सत्रा मदासस्तव विश्वजन्याः सत्रा रायोऽध ये पार्थिवासः ।
सत्रा वाजानामभवो विभक्ता यद्देवेषु धारयथा असुर्यम् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! सोम पीकर आपका हर्षित होना हम लोगों का हित करने वाला होता है। देवों के मध्य आप सर्वाधिक बलसम्पन्न हैं। आप अन्नदाता हैं । हे इन्द्रदेव ! पृथ्वी आदि में आपके समस्त धन वास्तव में सबके हित करने वाले हैं ॥१॥

अनु प्र येजे जन ओजो अस्य सत्रा दधिरे अनु वीर्याय ।
स्यूमगृभे दुधयेऽर्वते च क्रतुं वृञ्जन्त्यपि वृत्रहत्ये ॥२॥

इन्द्रदेव के बल के कारण यजमान हमेशा इन्द्रदेव को पहले पूजते हैं। वे इन्द्रदेव शत्रुओं पर आक्रमण करने वाले, उन्हें पकड़ने वाले और उनको मारने वाले हैं। शुभकर्मकर्ता इन्द्रदेव वृत्र का वध करने वाले हैं, इसी कारण योजक इन्द्रदेव की सेवा करते हैं ॥२॥

तं सध्रीचीरूतयो वृष्ण्यानि पौंस्यानि नियुतः सश्चुरिन्द्रम् ।

समुद्रं न सिन्धव उक्थशुष्मा उरुव्यचसं गिर आ विशन्ति ॥३॥

बल एवं शौर्य-पराक्रमयुक्त संरक्षक मरुद्गण और रथ में जुतने वाले घोड़े आदि इन्द्रदेव की सेवा करते हैं । जैसे समस्त नदियाँ अन्तत: सहज ही समुद्र में पहुँचती (गिरती) हैं, वैसे समस्त बलयुक्त स्तुतियाँ इन्द्रदेव तक पहुँचती हैं ॥३॥

स रायस्खामुप सृजा गृणानः पुरुश्चन्द्रस्य त्वमिन्द्र वस्वः ।
पतिर्बभूथासमो जनानामेको विश्वस्य भुवनस्य राजा ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! स्तुति से प्रसन्न होकर, आप बहुतों को अन्न सहित घर देने वाले हैं। हमें भी अन्न प्रदान करें। आप समस्त श्रेष्ठ प्राणियों के स्वामी हैं, सभी भुवनों के आप अधिपति हैं ॥४॥

स तु श्रुधि श्रुत्या यो दुवोयुर्द्यौर्न भूमाभि रायो अर्यः ।
असो यथा नः शवसा चकानो युगेयुगे वयसा चेकितानः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे श्रेष्ठ प्रशंसनीय स्तोत्रों को सुनें । हमारे द्वारा पूजा कराने के इच्छुक आप सूर्यदेव के समान शत्रुओं को जीतकर, हमारे लिए पहले के समान ही (हितकारी) रहें ॥५॥

सूक्त ३७

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

अर्वाग्रथं विश्ववारं त उग्रेन्द्र युक्तासो हरयो वहन्तु ।
कीरिश्चिद्धि त्वा हवते स्वर्वानृधीमहि सधमादस्ते अद्य ॥१॥

है इन्द्रदेव ! आपके रथ में जुते हुए घोड़े हमारे पास आएँ । वे विश्ववन्द्य रथ साथ लाएँ । आत्मज्ञानी ऋषि आपकी स्तुति करते हैं। वे आपकी कृपा से आनन्द प्राप्त करते हुए सिद्धि प्राप्त करें ॥१॥

प्रो द्रोणे हरयः कर्माग्मन्पुनानास ऋज्यन्तो अभूवन् ।
इन्द्रो नो अस्य पूर्व्यः पपीयाद्व्युक्षो मदस्य सोम्यस्य राजा ॥२॥

हमारे यज्ञ में प्रवाहित होने वाला सोमरस, द्रोण कलशों में भरा जाता है । आनन्द के स्वामी इन्द्रदेव इस सोम का पान करें ॥२॥

आसस्राणासः शवसानमच्छेन्द्रं सुचक्रे रथ्यासो अश्वाः ।
अभि श्रव ऋज्यन्तो वहेयुर्नू चिन्नु वायोरमृतं वि दस्येत् ॥३॥

सर्वत्रगामी रथ में जुते घोड़े ऋजुमार्गगामी हैं। वे सुन्दर रथ में बलशाली इन्द्रदेव को यज्ञ में लाएँ। इस अमृत रस (सोम को वायु विकृत न करे ॥३॥

वरिष्ठो अस्य दक्षिणामियर्तीन्द्रो मघोनां तुविकूर्मितमः ।
यया वज्रिवः परियास्यंहो मघा च धृष्णो दयसे वि सूरीन् ॥४॥

अति शीघ्र श्रेष्ठ कर्म करने वाले इन्द्रदेव, हविदाता यजमान को धनवानों में श्रेष्ठ धनवान् बनाते हैं। हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप पापनाशक एवं पापियों को दण्डित करने वाले हैं। यह धन ज्ञानियों के लिए विशेषतः कल्याणकारी होता है ॥४॥

इन्द्रो वाजस्य स्थविरस्य दातेन्द्रो गीर्भिर्वर्धतां वृद्धमहाः ।
इन्द्रो वृत्रं हनिष्ठो अस्तु सत्वा ता सूरिः पृणति तूतुजानः ॥५॥

इन्द्रदेव हमारी स्तुतियों के द्वारा प्रवृद्ध होकर हमें उत्तम बल और अन्न प्रदान करें । शत्रु संहारक इन्द्रदेव शत्रुओं का नाश करके हमें जल्दी ही उन धनों को दें ॥५॥

सूक्त ३८

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

अपादित उदु नश्चित्रतमो महीं भर्षद्द्युमतीमिन्द्रहूतिम् ।
पन्यसीं धीतिं दैव्यस्य यामञ्जनस्य रातिं वनते सुदानुः ॥१॥

आश्चर्यजनक इन्द्रदेव इस पात्र से सोमरस का पान करें । महान् तेजस्वी इन्द्रदेव इस आवाहन का श्रवण करें । सुबुद्धिपूर्वक की गई याजक की दिव्य स्तुतियों और आहुतियों को ग्रहण करें ॥१॥

दूराच्चिदा वसतो अस्य कर्णा घोषादिन्द्रस्य तन्यति ब्रुवाणः ।
एयमेनं देवहूतिर्ववृत्यान्मद्यगिन्द्रमियमृच्यमाना ॥२॥

इन इन्द्रदेव के श्रोत्र, अति दूर से भी किये जाने वाले स्तोत्रों को सुनने में समर्थ हैं । स्तोता उच्च स्वर से स्तुति करते हैं । ये स्तुतियाँ इन्द्रदेव को आकर्षित करके हमारे समीप लाएँ ॥२॥

तं वो धिया परमया पुराजामजरमिन्द्रमभ्यनूष्यर्कैः ।
ब्रह्मा च गिरो दधिरे समस्मिन्महाँश्च स्तोमो अधि वर्धदिन्द्रे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप अजर, पुरातन हैं । हम आपकी उपासना करते हैं। इन्द्रदेव में ही स्तुतियाँ और आहुतियाँ लीन होती हैं। यह महान् यज्ञ भी इनके द्वारा ही बढ़ता है ॥३॥

वर्धाद्यं यज्ञ उत सोम इन्द्रं वर्धाद्ब्रह्म गिर उक्था च मन्म ।
वर्धाहैनमुषसो यामन्नक्तोर्वर्धान्मासाः शरदो द्याव इन्द्रम् ॥४॥

जिन इन्द्रदेव को यज्ञ, सोम वर्धित करते हैं, (उन्हें ही) ज्ञान, स्तोत्र, प्रहर, उषा, रात्रि, दिवस, मास एवं संवत्सर आदि भी बढ़ाते हैं ॥४॥

एवा जज्ञानं सहसे असामि वावृधानं राधसे च श्रुताय ।
महामुग्रमवसे विप्र नूनमा विवासेम वृत्रतूर्येषु ॥५॥

हे अति महान् बलशाली इन्द्रदेव ! धन, यश, सुरक्षा (की प्राप्ति) एवं शत्रुओं को पराजित करने के लिए हम आपकी सेवा करते हैं ॥५॥

सूक्त ३९

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

मन्द्रस्य कवेर्दिव्यस्य वह्नेर्विप्रमन्मनो वचनस्य मध्वः ।
अपा नस्तस्य सचनस्य देवेषो युवस्व गृणते गोअग्राः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! यह सोमरस, फलदायक, हर्षित करने वाला, दिव्य ज्ञान बढ़ाने वाला और मधुर है, आप इसका पान करें । हे देव ! स्तोताओं को आप गो दुग्धादि एवं अन्न प्रदान करें ॥१॥

अयमुशानः पर्यद्रिमुस्रा ऋतधीतिभिर्ऋतयुग्युजानः ।
रुजदरुग्णं वि वलस्य सानुं पर्णींर्वचोभिरभि योधदिन्द्रः ॥२॥

इन्द्रदेव ने गौओं को मुक्त कराने के निमित्त अङ्गिराओं के सहयोग से पणियों को पराजित किया ॥२॥

अयं द्योतयदद्युतो व्यक्तून्दोषा वस्तोः शरद इन्दुरिन्द्र ।
इमं केतुमदधुर्नू चिदह्नां शुचिजन्मन उषसश्चकार ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! यह सोमरस दिन-रात और वर्ष को प्रकाशित करता है । देवगणों ने इसी सोमरस को दिवसों के ध्वज रूप में स्थापित किया है । सोम ने ही उषाओं को तेजस्वी बनाया है ॥३॥

अयं रोचयदरुचो रुचानोऽयं वासयद्व्यृतेन पूर्वीः ।
अयमीयत ऋतयुग्भिरश्वैः स्वर्विदा नाभिना चर्षणिप्राः ॥४॥

ये इन्द्रदेव याजकों को वाञ्छित फल प्रदान करते हैं ।इन्हीं इन्द्रदेव ने अश्वों वाले रथ पर धनयुक्त होकर गमन । किया ।सूर्यदेव के समान तेजस्वी इन्द्रदेव ने अपने प्रकाश से अन्धकार युक्त लोकों और उषा को प्रकाशित किया ॥४॥

नू गृणानो गृणते प्रत्न राजन्निषः पिन्व वसुदेयाय पूर्वीः ।
अप ओषधीरविषा वनानि गा अर्वतो नृनृचसे रिरीहि ॥५॥

है इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं से स्तुत्य होकर उन्हें उत्तम धन एवं अन्न दें । उपासकों को आप जल, अन्न, बिना विष वाले वृक्ष, गौएँ, अश्व, बल एवं जनशक्ति प्रदान करें ॥५॥

सूक्त ४०

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

इन्द्र पिब तुभ्यं सुतो मदायाव स्य हरी वि मुचा सखाया ।
उत प्र गाय गण आ निषद्याथा यज्ञाय गृणते वयो धाः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! यह सोमरस आपके आनन्द के निमित्त है। आप अपने मित्रवत् अश्वों कों रथ से खोलकर छोड़ दें और हम सबको स्तुति गान की प्रेरणा दें । स्तोताओं को अन्न प्रदान करें ॥१॥

अस्य पिब यस्य जज्ञान इन्द्र मदाय क्रत्वे अपिबो विरप्शिन् ।
तमु ते गावो नर आपो अद्रिरिन्दुं समह्यन्पीतये समस्मै ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आपने उत्पन्न होते ही हर्षित होकर वीरता के कार्य करने के लिए जिस सोमरस का पान किया था, उसी प्रकार अब भी इसका पान करें । गौएँ (दुग्ध के लिए), ऋत्विज (कूटने वाले), पहाड़ के पत्थर (कूटने पीसने के उपरकण), जल (मिलाने के लिए) की सहायता से यह सोमरस बनाया गया है ॥२॥

समिद्धे अग्नौ सुत इन्द्र सोम आ त्वा वहन्तु हरयो वहिष्ठाः ।

त्वायता मनसा जोहवीमीन्द्रा याहि सुविताय महे नः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! अग्नि प्रदीप्त है एवं सोमरस तैयार हैं। अब आपके रथ में युक्त घोड़े आपको यज्ञशाला में लाएँ । हम मनोयोगपूर्वक आपका आवाहन करते हैं। आप आएँ और हमारा कल्याण करें ॥३॥

आ याहि शश्वदुशता ययाथेन्द्र महा मनसा सोमपेयम् ।
उप ब्रह्माणि शृणव इमा नोऽथा ते यज्ञस्तन्वे वयो धात् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस पीने के लिए बार-बार आये हैं। आप हमारी स्तुति को सुनकर यज्ञ में पधारें । याजक आपको पुष्ट करने के लिए यह सोम अर्पित करता है । आप सोम ग्रहण करें ॥४॥

यदिन्द्र दिवि पार्ये यद्दधग्यद्वा स्वे सदने यत्र वासि ।
अतो नो यज्ञमवसे नियुत्वान्त्सजोषाः पाहि गिर्वणो मरुद्भिः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपका आवाहन करते हैं। आप दूरस्थ द्युलोक में हों अथवा घर में या जहाँ कहीं भी हों, वहीं से हमारी स्तुति को सुनकर मरुद्गणों सहित पधारकर हमारी रक्षा करें ॥५॥

सूक्त ४१

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – त्रिष्टुप,

अहेळमान उप याहि यज्ञं तुभ्यं पवन्त इन्दवः सुतासः ।
गावो न वज्रिन्त्स्वमोको अच्छेन्द्रा गहि प्रथमो यज्ञियानाम् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! शान्त होकर हमारे यज्ञ में पधारें । यह सोमरस आपके निमित्त है । जैसे गौएँ गोष्टों में जाती हैं, वैसे ही यह सोमरस कलशों में जाता है। यजनीय देवगणों में प्रमुख हे इन्द्रदेव ! आप हमारे निकट आएँ ॥१॥

या ते काकुत्सुकृता या वरिष्ठा यया शश्वत्पिबसि मध्व ऊर्मिम् ।
तया पाहि प्र ते अध्वर्युरस्थात्सं ते वज्रो वर्ततामिन्द्र गव्युः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप उत्तम जिह्वा से मधुर रस की तरंगों को सदैव ग्रहण करते हैं। उसी से इस सोमरस की पान कर हमारी रक्षा करें । अध्वर्यु आपके निकट उपस्थित हो रहे हैं । गौओं के रक्षक हे इन्द्रदेव ! आप वज्र से शत्रुओं का संहार करें ॥२॥

एष द्रप्सो वृषभो विश्वरूप इन्द्राय वृष्णे समकारि सोमः ।

एतं पिब हरिवः स्थातरुग्र यस्येशिषे प्रदिवि यस्ते अन्नम् ॥३॥

इन्द्रदेव के निमित्त यह द्रवरूप, बलवर्धक तथा सभी प्रकार से अभीष्ट-वर्षक सोमरस तैयार हैं । हे पराक्रमी, युद्धजयी इन्द्रदेव ! जिसके आप स्वामी हैं, जो आपका अन्न है, उस सोमरस का आप पान करें ॥३॥

सुतः सोमो असुतादिन्द्र वस्यानयं श्रेयाञ्चिकितुषे रणाय ।
एतं तितिर्व उप याहि यज्ञं तेन विश्वास्तविषीरा पृणस्व ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! शोधित सोम अशोधित सेम से श्रेष्ठ है। यह आपको आनन्द देने वाला है । आप सोमरस के समीप पधारें । हे शत्रु का संहार करने वाले इन्द्रदेव ! आप इसका पान कर समस्त बलों का विकास करें ॥४॥

ह्वयामसि त्वेन्द्र याह्यर्वाङरं ते सोमस्तन्वे भवाति ।
शतक्रतो मादयस्वा सुतेषु प्रास्माँ अव पृतनासु प्र विक्षु ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपका आवाहन करते हैं, यह सोमरस आपके लिए पुष्टिकारक हैं । आप यहाँ पधारें। आप इस सोमरस का पान कर आनन्दित हों तथा संग्राम में हमारी एवं प्रजाओं की रक्षा करें ॥५॥

सूक्त ४२

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: । छंद – अनुष्टुप, ४ बृहती

प्रत्यस्मै पिपीषते विश्वानि विदुषे भर ।
अरंगमाय जग्मयेऽपश्चाद्दघ्वने नरे ॥१॥

हे ऋत्विजों ! इन्द्रदेव के लिए सोमरस प्रेषित करें । वे इन्द्रदेव सर्वत्र गमन करने वाले, सर्वज्ञ एवं यज्ञ के प्रधान हैं ॥१॥

एमेनं प्रत्येतन सोमेभिः सोमपातमम् ।
अमत्रेभिर्ऋजीषिणमिन्द्रं सुतेभिरिन्दुभिः ॥२॥

हे ऋत्विजो ! आप सोम के पात्रों सहित संस्कारित , रसयुक्त, दीप्तिमान् सोमरस को रुचिपूर्वक पीने वाले इन इन्द्रदेव के पास जाकर प्रार्थना करें ॥२॥

यदी सुतेभिरिन्दुभिः सोमेभिः प्रतिभूषथ ।
वेदा विश्वस्य मेधिरो धृषत्तंतमिदेषते ॥३॥

हे ऋत्विजो ! रसयुक्त, दीप्तिमान् सोम को लेकर मनोरथों को जानने वाले इन्द्रदेव की शरण में जाने पर , वे विघ्नों को दूर करते हुए आपकी सभी इच्छाओं को पूर्ण कर देंगे ॥३॥

अस्माअस्मा इदन्धसोऽध्वर्यो प्र भरा सुतम् ।
कुवित्समस्य जेन्यस्य शर्धतोऽभिशस्तेरवस्परत् ॥४॥

हे अध्वर्यों ! इन इन्द्रदेव के लिए प्राणरूप सोमरस भरपूर मात्रा में प्रदान करें । वे इन्द्रदेव स्पर्धा योग्य तथा जीतने योग्य शत्रुओं को विनष्ट करके आपकी रक्षा करेंगे ॥४॥

सूक्त ४३

ऋषिः बार्हस्पत्यो भारद्वाजः
देवता – इन्द्रः । छंद – उष्णिक्

यस्य त्यच्छम्बरं मदे दिवोदासाय रन्धयः ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥१॥

है इन्द्रदेव ! जिस सोमरस को पी करके मदोन्मत्त आपने दिवोदास के कल्याण के लिए शम्बरासुर का हनन किया, उस शोधित सोमरस को आप पुनः सेवन करें ॥१॥

यस्य तीव्रसुतं मदं मध्यमन्तं च रक्षसे ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! अति उत्साहवर्धक सोमरस, प्रातः, मध्याह्न और सायं- तीनों कालों में तैयार होता है, उसे आप ही ग्रहण करते हैं । इस अभिषुत सोमरस का आप पान करें ॥२॥

यस्य गा अन्तरश्मनो मदे दृव्हा अवासृजः ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! जिस सोमरस का पान करके आपने गौओं को मुक्त कराया था। तैयार किये गये उसी प्रकार के इस सोमरस का आप पान करें ॥३॥

यस्य मन्दानो अन्धसो माघोनं दधिषे शवः ।
अयं स सोम इन्द्र ते सुतः पिब ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप अन्नरूप से जिस सोमरस को पीकर हर्षित होते हैं एवं विशिष्ट बल युक्त होते हैं, वैसा ही सोमरस आपके लिए तैयार है। आप इसे ग्रहण करें ॥४॥

सूक्त ४४

ऋषिः शंयुबार्हस्पत्यः
देवता – इन्द्रः । छंद – त्रिष्टुप, १-६ अनुष्टुप, ७-९ विराट

यो रयिवो रयिंतमो यो द्युम्नैर्द्युम्नवत्तमः ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥१॥

हे शक्ति-सम्पन्न इन्द्रदेव ! शोभायमान, अति देदीप्यमान उपासकों को धन देने वाला यह सोमरस आपको आनन्द देने वाला है ॥१॥

यः शग्मस्तुविशग्म ते रायो दामा मतीनाम् ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप बल को बढ़ाने वाले सोम के रक्षक हैं। आपको हर्ष प्रदान करने वाला यह सोम, स्तुति करने वालों को वैभव प्रदान करता है ॥२॥

येन वृद्धो न शवसा तुरो न स्वाभिरूतिभिः ।
सोमः सुतः स इन्द्र तेऽस्ति स्वधापते मदः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप अन्नरूप सोम की रक्षा करते हैं। उसी सोमरस का पान करके आप मरुद्गणों के सहयोग से शत्रुओं का संहार करते हैं । वह सोमरस आपको आनन्दित करता है ॥३॥

त्यमु वो अप्रहणं गृणीषे शवसस्पतिम् ।
इन्द्रं विश्वासाहं नरं मंहिष्ठं विश्वचर्षणिम् ॥४॥

यजमानों के हित के लिए कल्याणकारी बल एवं अन्न के अधिपति, शत्रुओं को पराजित करने वाले, यज्ञ के नायक, श्रेष्ठ दाता, सर्वज्ञ इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं ॥४॥

यं वर्धयन्तीद्गिरः पतिं तुरस्य राधसः ।
तमिन्वस्य रोदसी देवी शुष्मं सपर्यतः ॥५॥

हमारे द्वारा की जा रही स्तुतियों से इन्द्रदेव का वह बल विवर्धमान होता है, जिसके द्वारा वे शत्रुओं को पराजित करके धन प्राप्त करते हैं । इन्द्रदेव के उस बल की सराहना द्यावा-पृथिवीं भी करते हैं ॥५॥

तद्व उक्थस्य बर्हणेन्द्रायोपस्तृणीषणि ।
विपो न यस्योतयो वि यद्रोहन्ति सक्षितः ॥६॥

हे स्तोताओ ! आप इन्द्रदेव की स्तुति के लिए स्तोत्रों को प्रसारित करें । बुद्धिमानों के समान सामर्थ्ययुक्त इन्द्रदेव हमारे रक्षक हैं ॥६॥

अविदद्दक्षं मित्रो नवीयान्पपानो देवेभ्यो वस्यो अचैत् ।
ससवान्स्तौलाभिर्धौतरीभिरुरुष्या पायुरभवत्सखिभ्यः ॥७॥

यज्ञकर्म करने में कुशल याजकों को वे इन्द्रदेव जानते हैं। सोमरसपायी इन्द्रदेव स्तुति करने वालों को उत्तम धन प्रदान करते हैं। द्यावा-पृथिवी को कम्पित करने वाले अश्वों के साथ इन्द्रदेव सखा भाव वालों की रक्षा करते हैं ॥७॥

ऋतस्य पथि वेधा अपायि श्रिये मनांसि देवासो अक्रन् ।
दधानो नाम महो वचोभिर्वपुर्दृशये वेन्यो व्यावः ॥८॥

ऋत्विग्गण इन्द्रदेव का आवाहन उसी सोमरस के लिए करते हैं, जो यज्ञ में पिया जाता है। वे विशाल शरीर वाले, शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव हम स्तोताओं के स्तोत्रों को सुनकर हमारे पास आएँ ॥८॥

द्युमत्तमं दक्षं धेह्यस्मे सेधा जनानां पूर्वीरातीः ।
वर्षीयो वयः कृणुहि शचीभिर्धनस्य सातावस्माँ अविड्ढि ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें तेज, बल एवं प्रचुर अन्न प्रदान करें। अपने शत्रुओं को भगाएँ एवं हमारी रक्षा करें; ताकि हम सब धन और अन्न के सहित सुख से रह सकें ॥९॥

इन्द्र तुभ्यमिन्मघवन्नभूम वयं दात्रे हरिवो मा वि वेनः ।
नकिरापिर्ददृशे मर्त्यत्रा किमङ्ग रध्रचोदनं त्वाहुः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमसे अप्रसन्न न हों, इसीलिए हम आपको आहुति प्रदान करते हैं । आपसे श्रेष्ठ अन्य कोई हमारा मित्र नहीं हैं। यदि आपकी ऐसी महिमा न होतीं, तो आप रत्नों (श्रेष्ठ सम्पदाओं) के प्रेरक न कहलाते ॥१०॥

मा जस्वने वृषभ नो ररीथा मा ते रेवतः सख्ये रिषाम ।
पूर्वीष्ट इन्द्र निष्षिधो जनेषु जह्यसुष्वीन्प्र वृहापृणतः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप महान् बलवान् हैं, हमें हिंसक असुरों से बचाएँ । आप धनवान् हैं । हम आपके मित्र बनकर रहें एवं दुःख न पायें । आपके निमित्त जो सोमरस तैयार नहीं करते एवं हवि प्रदान नहीं करते तथा आपके कार्यों में उत्पात मचाने वाले शत्रु हैं, आप उनका विनाश करें ॥११॥

उदभ्राणीव स्तनयन्नियर्तीन्द्रो राधांस्यश्व्यानि गव्या ।
त्वमसि प्रदिवः कारुधाया मा त्वादामान आ दभन्मघोनः ॥१२॥

मेघ जिस तरह गर्जना (ध्वनि) उत्पन्न करते हैं, उसी प्रकार इन्द्रदेव स्तुतिकर्ताओं के लिए घोड़े, गौएँ उत्पन्न करते हैं । धनवान् (धन का दुरुपयोग करके) आपको कष्ट न पहुँचाएँ ॥१२॥

अध्वर्यो वीर प्र महे सुतानामिन्द्राय भर स ह्यस्य राजा ।
यः पूर्व्याभिरुत नूतनाभिर्गीर्भिर्वावृधे गृणतामृषीणाम् ॥१३॥

हे ऋत्विजो ! आप महत्त्वपूर्ण कर्म करने वाले इन्द्रदेव के लिए सोमरस तैयार करें । वे इन्द्रदेव ही सोमाधिपति हैं। ये इन्द्रदेव पुरातन एवं नवीन स्तोत्रों द्वारा वृद्धि को प्राप्त होते हैं ॥१३॥

अस्य मदे पुरु वर्पांसि विद्वानिन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघान ।
तमु प्र होषि मधुमन्तमस्मै सोमं वीराय शिप्रिणे पिबध्यै ॥१४॥

सोमरस पान कर उत्साहित ज्ञानी इन्द्रदेव ने विपरीत योजना बनाने वाले शत्रुओं का संहार किया था। इन वीर इन्द्रदेव के लिए सोमरस प्रस्तुत करें । सोमपान करके वे इन्द्रदेव, कपटपूर्ण ढंग से घेरकर कष्ट देने वाले शत्रुओं का संहार करें ॥१४॥

पाता सुतमिन्द्रो अस्तु सोमं हन्ता वृत्रं वज्रेण मन्दसानः ।
गन्ता यज्ञं परावतश्चिदच्छा वसुर्धीनामविता कारुधायाः ॥१५॥

इस तैयार सोमरस का पान करके वे रक्षक, निवास दाता इन्द्रदेव वज्र द्वारा वृत्रासुर का वध करें। वे इन्द्रदेव दूर हों, तो भी इस यज्ञ में आएँ ॥१५॥

इदं त्यत्पात्रमिन्द्रपानमिन्द्रस्य प्रियममृतमपायि ।
मत्सद्यथा सौमनसाय देवं व्यस्मद्द्वेषो युयवद्व्यंहः ॥१६॥

यह सोमरस इन्द्रदेव को अति प्रिय पेय पदार्थ है । वे योग्य पात्र से इसका पान कर प्रसन्न और हर्षित हों । उनकी कृपा से शत्रु और पाप हमसे दूर हों ॥१६॥

एना मन्दानो जहि शूर शत्रूञ्जामिमजामिं मघवन्नमित्रान् ।
अभिषेणाँ अभ्यादेदिशानान्पराच इन्द्र प्र मृणा जही च ॥१७॥

हे शूरवीर, धनवान् इन्द्रदेव ! सोमरस का पान कर आप हमारे विरोधी शत्रुओं का आयुधों सहित विनाश करें तथा उन्हें पराजित करके हमसे दूर भगायें ॥१७॥

आसु ष्मा णो मघवन्निन्द्र पृत्स्वस्मभ्यं महि वरिवः सुगं कः ।

अपां तोकस्य तनयस्य जेष इन्द्र सूरीन्कृणुहि स्मा नो अर्धम् ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! आप धनवान् हैं। इन संग्रामों में हमें सुखदायी बहुत सा धन प्राप्त कराएँ। आप हमें विजय प्राप्ति के योग्य सामर्थ्य प्रदान करें तथा पुत्र-पौत्रों एवं जल-वृष्टि से हमें समृद्ध बनाएँ ॥१८॥

आ त्वा हरयो वृषणो युजाना वृषरथासो वृषरश्मयोऽत्याः ।
अस्मत्राञ्चो वृषणो वज्रवाहो वृष्णे मदाय सुयुजो वहन्तु ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आपके अश्व बलवान्, कामनाओं की पूर्ति में सहायक, रथ में स्वयं युक्त होने वाले, वेगवान्, तथा प्रचुर वज्र जैसे तीक्ष्ण भार वहन करने वाले हैं। वे सोमपान करके आनन्दित होने के लिए आपको इस यज्ञ में लाएँ ॥१९॥

आ ते वृषन्वृषणो द्रोणमस्थुर्घृतप्रुषो नोर्मयो मदन्तः ।
इन्द्र प्र तुभ्यं वृषभिः सुतानां वृष्णे भरन्ति वृषभाय सोमम् ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! आप कामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं। समुद्र की लहरों के समान आनन्दित करने वाला यह सोमरस आपके पात्र में है । ऋत्विग्गण आपके लिए अभिषुत सोमरस प्रेषित करते हैं ॥२०॥

वृषासि दिवो वृषभः पृथिव्या वृषा सिन्धूनां वृषभः स्तियानाम् ।
वृष्णे त इन्दुर्वृषभ पीपाय स्वादू रसो मधुपेयो वराय ॥२१॥

हे इन्द्रदेव ! यह मधुर, सरस सोम आपके लिए प्रस्तुत है । आप ही नदियों के जल को प्रवाहित करने वाले एवं प्राणियों को अभीष्ट प्राप्ति हेतु बलवान् बनाने वाले हैं ॥२१॥

अयं देवः सहसा जायमान इन्द्रेण युजा पणिमस्तभायत् ।
अयं स्वस्य पितुरायुधानीन्दुरमुष्णादशिवस्य मायाः ॥२२॥

इस तेजस्वी सोम ने इन्द्रदेव से युक्त होकर 'पणि' असुर को बल से रोका । इसी सप्रेम ने धनों के पालक के अशिव (अकल्याणकारी) आयुधों एवं माया (प्रपंचों) को नष्ट किया ॥२२॥

अयमकृणोदुषसः सुपत्नीरयं सूर्ये अदधाज्ज्योतिरन्तः ।
अयं त्रिधातु दिवि रोचनेषु त्रितेषु विन्ददमृतं निगूळ्हम् ॥२३॥

इसी (तेजस्वी सोम) ने उषाकाल को सूर्य से युक्त किया। इसी ने सूर्यदेव को तेजस्वी बनाया। तीन प्रकार (तीनों सवनों) वाले इसी (सोम) ने तीसरे स्थान पर छिपे अमृत को प्राप्त किया ॥२३॥

अयं द्यावापृथिवी वि ष्कभायदयं रथमयुनक्सप्तरश्मिम् ।
अयं गोषु शच्या पक्वमन्तः सोमो दाधार दशयन्त्रमुत्सम् ॥२४॥

इसी (सोम) ने द्यावा-पृथिवीं को सुस्थिर किया है । इसी ने सूर्यदेव के रथ में सात किरणों को युक्तं किया है । इसी ने गौओं में परिपक्व दुग्ध को स्थापित किया है। इसी सोम ने दुग्ध को शक्ति से भरपूर किया है, जो इस दस इन्द्रियों वाले शरीर को पुष्ट करता है ॥२४॥

सूक्त ४५

ऋषि: शंयुबार्हस्पत्य:
देवता – इन्द्र:, ३१-३३ वृवुस्तक्षा। छंद – गायत्री, २९ अतिनिचृत्, ३१ पादनिचृत्, ३३ अनुष्टुप,

य आनयत्परावतः सुनीती तुर्वशं यदुम् ।
इन्द्रः स नो युवा सखा ॥१॥

शत्रुओं के द्वारा तुर्वश और यदु (पराक्रमी राजाओं) को बहुत दूर फेंका गया था। वहाँ से इन्द्रदेव ही उन्हें उत्तम नीति से सरलतापूर्वक लौटाकर लाए थे। वे युवा (स्फूर्तिवान्) इन्द्रदेव हमारे मित्र हैं ॥१॥

अविप्रे चिद्वयो दधदनाशुना चिदर्वता ।
इन्द्रो जेता हितं धनम् ॥२॥

इन्द्रदेव अज्ञानी को अन्न प्रदान करते हैं। धीरे-धीरे चलने वाले अश्वों से भी शत्रुओं को परास्त कर उनका धन हर लेते हैं ॥२॥

महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः ।
नास्य क्षीयन्त ऊतयः ॥३॥

इन्द्रदेव की संचालक शक्तियाँ अनेक हैं । इन्द्रदेव की स्तुतियाँ भी अनेक प्रकार की हैं। उनकी रक्षा करने वाली शक्ति भी कमजोर नहीं पड़ती ॥३॥

सखायो ब्रह्मवाहसेऽर्चत प्र च गायत ।
स हि नः प्रमतिर्महीं ॥४॥

हे मित्रो ! आप सब इन्द्रदेव की प्रार्थना करें। आप उन्हीं का पूजन करें, वे इन्द्रदेव ही हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करते हैं ॥४॥

त्वमेकस्य वृत्रहन्नविता द्वयोरसि ।
उतेदृशे यथा वयम् ॥५॥

हे वृत्रासुर को मारने वाले इन्द्रदेव ! आप स्तुति करने वालों के रक्षक हैं । आप हम सबकी रक्षा करें ॥५॥

नयसीद्वति द्विषः कृणोष्युक्थशंसिनः ।
नृभिः सुवीर उच्यसे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे शत्रुओं को हमसे दूर भगाते हैं । हम आपकी प्रशंसा करते हैं। आप श्रेष्ठ वीर कहलाते हैं ॥६॥

ब्रह्माणं ब्रह्मवाहसं गीर्भिः सखायमृग्मियम् ।
गां न दोहसे हुवे ॥७॥

इन्द्रदेव ज्ञानी हैं, अत: ज्ञानपूर्वक स्तुत्य हैं । वे मित्र हैं, प्रशंसा के योग्य हैं, ऐसे इन्द्रदेव को हम स्तुति करके वैसे ही बुलाते हैं, जैसे दोहन के लिए गौओं को बुलाया जाता है ॥७॥

यस्य विश्वानि हस्तयोरूचुर्वसूनि नि द्विता ।
वीरस्य पृतनाषहः ॥८॥

शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव के दोनों हाथों में दोनों प्रकार की (दिव्य एवं पार्थिव सम्पत्तियाँ) हैं, ऐसा ऋषियों ने कहा है ॥८॥

वि दृव्हानि चिदद्रिवो जनानां शचीपते ।
वृह माया अनानत ॥९॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप सर्वशक्तिमान् हैं। आप शत्रुओं के किलों, नगरों एवं बलों को ध्वस्त करने वाले हैं। हे अनानत् (न झुकने वाले) इन्द्रदेव ! आप उनकी माया को नष्ट करें ॥९॥

तमु त्वा सत्य सोमपा इन्द्र वाजानां पते ।
अहूमहि श्रवस्यवः ॥१०॥

हे सोमरस पीकर आनन्दित हुए इन्द्रदेव ! हम अन्न प्राप्ति की इच्छा से आपका आवाहन करते हैं ॥१०॥

तमु त्वा यः पुरासिथ यो वा नूनं हिते धने ।
हव्यः स श्रुधी हवम् ॥११॥

युद्ध में सहायता के लिए प्राचीनकाल में आपको ही बुलाया गया था, भविष्य में भी आपको ही बुलाया जायेगा । जो संग्राम के समय बुलाए जाते हैं। जिनकी सहायता से शत्रु द्वारा धन प्राप्त होता है। उन इन्द्रदेव को हम बुलाते हैं । वे हमारे आवाहन को सुनें ॥११॥

धीभिरर्वद्भिरर्वतो वाजाँ इन्द्र श्रवाय्यान् ।
त्वया जेष्म हितं धनम् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव !आप हमारी स्तुति से प्रसन्न हों । हम आपके अनुकूल होकर, शत्रु को जीतकर धन प्राप्त करें ॥१२॥

अभूरु वीर गिर्वणो महाँ इन्द्र धने हिते ।
भरे वितन्तसाय्यः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव !आप वीर एवं स्तुति के योग्य हैं। आपने शत्रुओं के धन को प्राप्त करने के लिए उन्हें जीता ॥१३॥

या त ऊतिरमित्रहन्मक्षूजवस्तमासति ।
तया नो हिनुही रथम् ॥१४॥

हे इन्द्रदेव !आप तीव्रगामी हैं । शत्रु को जीतने के लिए आप उसी वेग से हमारे रथ को चलने की प्रेरणा दें ॥१४॥

स रथेन रथीतमोऽस्माकेनाभियुग्वना ।
जेषि जिष्णो हितं धनम् ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! आप महारथी हैं। आप अपने शत्रुओं को जीतने वाले रथ से शत्रुओं की सम्पत्ति को जीतें ॥१५॥

य एक इत्तमु ष्टुहि कृष्टीनां विचर्षणिः ।
पतिर्जज्ञे वृषक्रतुः ॥१६॥

जो इन्द्रदेव प्रजाओं के स्वामी हैं, बल से होने वाले कार्यों को करने वाले एवं सबको विशेष दृष्टि से देखन वाले हैं, उन इन्द्रदेव की स्तुति करें ॥१६॥

यो गृणतामिदासिथापिरूती शिवः सखा ।
स त्वं न इन्द्र मृळय ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! आप सबकी रक्षा करने वाले मित्र रूप हैं । आप सुखदाता एवं स्तोताओं के बन्धु सदृश हैं। आप हमें सुख प्रदान करें ॥१७॥

धिष्व वज्रं गभस्त्यो रक्षोहत्याय वज्रिवः ।
सासहीष्ठा अभि स्पृधः ॥१८॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप असुरों का संहार करने के लिए वज्र को धारण करें और स्पर्धा करने वाले शत्रुओं को पराजित करें ॥१८॥

प्रत्नं रयीणां युजं सखायं कीरिचोदनम् ।
ब्रह्मवाहस्तमं हुवे ॥१९॥

जो इन्द्रदेव मित्ररूप, स्तुति करने वालों के प्रेरक, धन देने वाले एवं आवाहन करने योग्य हैं। हम उन इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं ॥१९॥

स हि विश्वानि पार्थिवाँ एको वसूनि पत्यते ।
गिर्वणस्तमो अध्रिगुः ॥२०॥

जो इन्द्रदेव अतिशय स्तुत्य एवं तीव्रगामी हैं, वे इन्द्रदेव समस्त पार्थिव धनों के एक मात्र स्वामी हैं ॥२०॥

स नो नियुद्भिरा पृण कामं वाजेभिरश्विभिः ।
गोमद्भिर्गोपते धृषत् ॥२१॥

हे गोपते इन्द्रदेव ! आप बहुत सी गौएँ एवं घोड़े प्रदान करके हमारी इच्छाओं की पूर्ति करें ॥२१॥

तद्वो गाय सुते सचा पुरुहूताय सत्वने ।
शं यद्गवे न शाकिने ॥२२॥

है स्तुतिरत स्तोताओ ! आप शत्रु को जीतने वाले इन्द्रदेव का यशोगान करें । जैसे गाय उत्तम घास से प्रसन्न होती है, वैसे ही तैयार सोम सहित स्तुति से इन्द्रदेव सुख पाते हैं ॥२२॥

न घा वसुर्नि यमते दानं वाजस्य गोमतः ।
यत्सीमुप श्रवद्गिरः ॥२३॥

सभी के आश्रयदाता वे इन्द्रदेव हमारी स्तुतियों को सुनने के बाद हमें धन-धान्य के रूप में अपार वैभव देने से नहीं रुकते हैं ॥२३॥

कुवित्सस्य प्र हि व्रजं गोमन्तं दस्युहा गमत् ।
शचीभिरप नो वरत् ॥२४॥

हे इन्द्रदेव ! हिंसा करने वालों, गोशाला से गौएँ चुराने और उन्हें छिपा देने वालों को आप शीघ्रता से हूँढ़ कर दण्डित करें और गौओं को मुक्त कराएँ ॥२४॥

इमा उ त्वा शतक्रतोऽभि प्र णोनुवुर्गिरः ।
इन्द्र वत्सं न मातरः ॥२५॥

हे इन्द्रदेव ! गौएँ जिस तरह बछड़ों की पुकार पर उनकी ओर भागती हैं, वैसे ही वे स्तुतियाँ आपकी ओर ही गमन करती हैं ॥२५॥

दूणाशं सख्यं तव गौरसि वीर गव्यते ।
अश्वो अश्वायते भव ॥२६॥

हे इन्द्रदेव ! आप गाय एवं घोड़ों की इच्छा करने वालों की इच्छा को पूर्ण करते हैं। आपकी मित्रता कभी नष्ट नहीं होती है ॥२६॥

स मन्दस्वा ह्यन्धसो राधसे तन्वा महे ।
न स्तोतारं निदे करः ॥२७॥

हे इन्द्रदेव !आप अपने लिए प्रदत्त अन्नरूप सोम से हृष्ट-पुष्ट हों । स्तोताओं को निन्दक के अधीन न होने दें॥२७॥

इमा उ त्वा सुतेसुते नक्षन्ते गिर्वणो गिरः ।
वत्सं गावो न धेनवः ॥२८॥

हे स्तुत्य इन्द्रदेव ! जिस प्रकार दुधारू गौएँ बछड़ों के पास स्वयं ही जा पहुँचती हैं, उसी प्रकार सोम निष्पादन के समय स्तुतियाँ आपके पास स्वत: पहुँचती हैं ॥२८॥

पुरूतमं पुरूणां स्तोतृणां विवाचि ।
वाजेभिर्वाजयताम् ॥२९॥

हमारी श्रेष्ठतम स्तुतियाँ आपको प्राप्त होती हैं । हविष्यान्न के साथ (संयुक्त होकर) वे आपको बलवान् बनायें ॥२९॥

अस्माकमिन्द्र भूतु ते स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः ।
अस्मान्राये महे हिनु ॥३०॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे स्तोत्र आप तक पहुँचें, उनसे प्रसन्न होकर आप हमें श्रेष्ठ धन प्रदान करें ॥३०॥

अधि बृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् ।
उरुः कक्षो न गाङ्‌ग्यः ॥३१॥

'बृबु' ने पणियों (व्यापारियों अथवा असुरों) के बीच ऊँचा स्थान प्राप्त किया । गंगा के ऊँचे तटों के समान वे महान् हुए ॥३१॥

यस्य वायोरिव द्रवद्भद्रा रातिः सहस्रिणी ।

सद्यो दानाय मंहते ॥३२॥

वायु की तरह शीघ्रगामी बुबु की हजारों दान देने की कल्याणकारिणी प्रवृत्ति, धन की कामना से स्तुति करने वाले मुझ स्तोता को अपेक्षित धन प्रदान करती हैं ॥३२॥

तत्सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः ।
बृबुं सहस्रदातमं सूरिं सहस्रसातमम् ॥३३॥

सहस्रों गौओं के दान करने वाले दानी बुबु की प्रशंसा के लिए हम उनकी स्तुति करते हैं ॥३३॥

सूक्त ४६

ऋषिः शंयुबार्हस्पत्यः
देवता – इन्द्रः, ३१-३३ वृवुस्तक्षा। छंद – प्रगाथ

त्वामिद्धि हवामहे साता वाजस्य कारवः ।
त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! हम स्तोतागण आपका आवाहन अन्न प्राप्ति की इच्छा से करते हैं। आप सज्जनों के रक्षक हैं । शत्रु को जीतने के निमित्त आपका आवाहन करते हैं ॥१॥

स त्वं नश्चित्र वज्रहस्त धृष्णुया महः स्तवानो अद्रिवः ।
गामश्वं रथ्यमिन्द्र सं किर सत्रा वाजं न जिग्युषे ॥२॥

विपुल पराक्रमी, वज्रधारी, बलधारक, हे इन्द्रदेव ! अपनी असुरजयी शक्ति से महान् हुए आप हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होकर, हम साधकों को पशुधन तथा ऐश्वर्य प्रदान करें ॥२॥

यः सत्राहा विचर्षणिरिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
सहस्रमुष्क तुविनृम्ण सत्पते भवा समत्सु नो वृधे ॥३॥

जो इन्द्रदेव एक साथ शत्रुनाशक तथा सर्वद्रष्टा हैं, उन इन्द्रदेव का हम आवाहन करते हैं। मन्यु से युक्त, धन-सम्पन्न, सज्जनों के प्रतिपालक हे इन्द्रदेव ! आप रणक्षेत्र (जीवन-संग्राम) में तथा ऐश्वर्य की वृद्धि में हमारे सहायक बनें ॥३॥

बाधसे जनान्वृषभेव मन्युना घृषौ मीव्ह ऋचीषम ।
अस्माकं बोध्यविता महाधने तनूष्वप्सु सूर्ये ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप ऋचा में कहे अनुसार कर्म करने वाले हैं। आप संग्राम में शत्रुओं पर वृषभ की तरह आक्रमण करें । महान् धन प्राप्ति के संग्राम में आप हमारी रक्षा करें । ताकि हम शरीर उदक और सूर्य का भोग करते रहें अर्थात् दीर्घायुः हों ॥४॥

इन्द्र ज्येष्ठं न आ भरँ ओजिष्ठं पपुरि श्रवः ।
येनेमे चित्र वज्रहस्त रोदसी ओभे सुशिप्र प्राः ॥५॥

हे वज्रपाणि देवेन्द्र ! हमें ओज एवं बल प्रदान करने वाले अन्न (पोषक तत्व) प्रदान करें । जो पोषक अन्न द्युलोक एवं पृथ्वी दोनों को पोषण देते हैं, उन्हें हम अपने पास रखने की कामना करते हैं ॥५॥

त्वामुग्रमवसे चर्षणीसहं राजन्देवेषु हूमहे ।
विश्वा सु नो विथुरा पिब्दना वसोऽमित्रान्त्सुषहान्कृधि ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हम अपनी रक्षा के लिए आपका आवाहन करते हैं । आप महाबलशाली और शत्रुओं के विजेता हैं। आप सभी असुरों से हमारी रक्षा करें । संग्राम में हम जीत सकें, आप ऐसी कृपा करें ॥६॥

यदिन्द्र नाहुषीष्वाँ ओजो नृम्णं च कृष्टिषु ।
यद्वा पञ्च क्षितीनां द्युम्नमा भर सत्रा विश्वानि पौंस्या ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! संगठित प्रजा में जो पराक्रम है, पाँच जनों (समाज के पाँच वर्गों, पंचतत्वों अथवा पंचवर्गों) में जो धन है वैसा ही ऐश्वर्य आप हमें प्रदान करें । एकता से उत्पन्न होने वाली शक्ति हमें प्राप्त हो ॥७॥

यद्वा तृक्षौ मघवन्द्रुह्यावा जने यत्पूरौ कच्च वृष्ण्यम् ।
अस्मभ्यं तद्रिरीहि सं नृषाह्येऽमित्रान्पृत्सु तुर्वणे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें तक्षु (समर्थों) द्राह्य (द्रोह करने वालों) एवं पुरु (पालन करने वालों) का समय बल प्रदान करें । बलवान् होकर युद्ध में शत्रुओं पर हम विजय प्राप्त करें ॥८॥

इन्द्र त्रिधातु शरणं त्रिवरूथं स्वस्तिमत् ।
छर्दिर्यच्छ मघवद्भ्यश्च मह्यं च यावया दिद्युमेभ्यः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! ऐश्वर्य सम्पन्नों जैसा त्रिधातुयुक्त तीनों ऋतुओं में हितकारी आश्रय (घर या शरीर) हमें भी प्रदान करें। इससे चमक (भापक, चकाचौंध) दूर करें ॥९॥

ये गव्यता मनसा शत्रुमादभुरभिप्रघ्नन्ति धृष्णुया ।
अध स्मा नो मघवन्निन्द्र गिर्वणस्तनूपा अन्तमो भव ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! जो शत्रु गौओं को छीनने के लिए आते है उन पर आप घर्षण शक्ति से प्रहार करते हैं। हे धनवान् प्रशंसनीय इन्द्रदेव ! आप समीपवर्ती शत्रुओं से हमारी रक्षा करें । हमारे शरीर की रक्षा करें ॥१०॥

अध स्मा नो वृधे भवेन्द्र नायमवा युधि ।
यदन्तरिक्षे पतयन्ति पर्णिनो दिद्यवस्तिग्ममूर्धानः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे सम्वर्धन करने वाले हैं । युद्ध में शत्रुओं द्वारा छोड़े गये पंख वाले पैने और तेजस्वी वाण अन्तरिक्ष मार्ग से जब हमारे ऊपर बरसते हैं, तब उनसे आप हमारी रक्षा करते हैं ॥११॥

यत्र शूरासस्तन्वो वितन्वते प्रिया शर्म पितृणाम् ।
अध स्मा यच्छ तन्वे तने च छर्दिरचित्तं यावय द्वेषः ॥१२॥

जिस समय अनीति प्रतिरोध के लिए शूरवीर अपना शरीर अर्पित करते हैं, तब पितरों को परमप्रिय सुख (सन्तोष) होता है। ऐसे समय में हे इन्द्रदेव ! आप हमारे शरीर और पुत्रों की रक्षा के लिए सुरक्षित निवास दें तथा शत्रुओं को मार भगायें ॥१२॥

यदिन्द्र सर्गे अर्वतश्चोदयासे महाधने ।
असमने अध्वनि वृजिने पथि श्येनाँ इव श्रवस्यतः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! जब युद्ध हो, तब आप हमारे घोड़ों को तीव्रगामी श्येन पक्षी की तरह, विषम मार्गों से भी होते हुए रणक्षेत्र में ले जाने की प्रेरणा प्रदान करें ॥१३॥

सिन्धूँरिव प्रवण आशुया यतो यदि क्लोशमनु ष्वणि ।
आ ये वयो न वर्वृतत्यामिषि गृभीता बाह्वोर्गवि ॥१४॥

युद्ध के समय घोड़े भय से हिनहिनाते हैं, किन्तु वीरों के घोड़े ऊपर से नीचे की ओर तीव्र गति से बहने वाली नदियों की तरह एवं बाज पक्षी के झपट्टे की तरह अति वेगपूर्वक दौड़ते हैं और विजय प्राप्त करते हैं ॥१४॥

सूक्त ४७

ऋषि: गर्गो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र: १-५ सोम; २० देव भूमि बृहस्पतिन्द्रा , २२-२५ सज्जर्य प्रस्तोक, २६-२८ रथ, २९-३० दुदुंभि , ३१ दुंदुभीन्द्रौ। छंद –त्रिष्टुप, १९ वृहती, २३ अनुष्टुप, २४ गायत्री, २५ द्विपदा, त्रिष्टुप, २७, जगती

स्वादुष्किलायं मधुमाँ उतायं तीव्रः किलायं रसवाँ उतायम् ।
उतो न्वस्य पपिवांसमिन्द्रं न कश्चन सहत आहवेषु ॥१॥

सोमरस तीक्ष्ण, मधुर एवं रुचिकर स्वाद वाला होता है । इस सोम के पीने वाले इन्द्रदेव को युद्ध में कोई जीत नहीं सकता ॥१॥

अयं स्वादुरिह मदिष्ठ आस यस्येन्द्रो वृत्रहत्ये ममाद ।
पुरूणि यश्च्यौत्ना शम्बरस्य वि नवतिं नव च देह्यो हन् ॥२॥

यह सोम हर्षित करने वाला है, अत: इसको पीकर इन्द्रदेव ने 'वृत्रासुर' का नाश किया तथा शम्बर के अनेक किलों को ध्वस्त किया ॥२॥

अयं मे पीत उदियर्ति वाचमयं मनीषामुशतीमजीगः ।
अयं षळुर्वीरमिमीत धीरो न याभ्यो भुवनं कच्चनारे ॥३॥

सोमरस बुद्धि और वाणी को तेजस्वी और गम्भीर बनाता है । इसी सोम ने स्वर्ग, पृथ्वी, जल, ओषधि, दिन एवं रात्रि बनाये हैं ॥३॥

अयं स यो वरिमाणं पृथिव्या वर्ष्माणं दिवो अकृणोदयं सः ।
अयं पीयूषं तिसृषु प्रवत्सु सोमो दाधारोर्वन्तरिक्षम् ॥४॥

इस सोम ने ही अन्तरिक्ष, पृथ्वी, और द्युलोक को सुविस्तृत एवं सुदृढ़ किया है। इसी ने जल, ओषधियों एवं गो-दुग्ध में अमृत स्थापित किया है ॥४॥

अयं विदच्चित्रदृशीकमर्णः शुक्रसद्मनामुषसामनीके ।
अयं महान्महता स्कम्भनेनोद्द्यामस्तभ्नाद्वृषभो मरुत्वान् ॥५॥

अन्तरिक्ष में स्थित विभिन्न उषाएँ सोम की विचित्र ज्योति से ज्योतित हैं । यह सोम बहुत बलशाली, महान् और उत्साहयुक्त द्युलोक में स्थित है ॥५॥

धृषत्पिब कलशे सोममिन्द्र वृत्रहा शूर समरे वसूनाम् ।
माध्यंदिने सवन आ वृषस्व रयिस्थानो रयिमस्मासु धेहि ॥६॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप धन प्राप्ति हेतु हो रहे संग्रामों में, सोमरस पीकर शत्रुओं का संहार करें । हे धन के स्वामी ! आप हमें धन प्रदान करें ॥६॥

इन्द्र प्र णः पुरएतेव पश्य प्र नो नय प्रतरं वस्यो अच्छ ।
भवा सुपारो अतिपारयो नो भवा सुनीतिरुत वामनीतिः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप नीति-निपुण हैं । आप हमारे मार्गदर्शक बनें, श्रेष्ठ धनवान् आप हमें सुगमतापूर्वक धन प्राप्त कराकर दु:खों एवं शत्रुओं से बचाएँ ॥७॥

उरुं नो लोकमनु नेषि विद्वान्त्स्वर्वज्ज्योतिरभयं स्वस्ति ।
ऋष्वा त इन्द्र स्थविरस्य बाहू उप स्थेयाम शरणा बृहन्ता ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप ज्ञानवान् हैं, सर्वज्ञ हैं, अत: आप हमें इस बड़े क्षेत्र की बाधाओं से निकाल कर सरलता पूर्वक लक्ष्य तक ले चलें । आपका अभय, सुखद, कल्याणकारी तेज, हमें आपके वरदहस्त के आश्रय में मिले ॥८॥

वरिष्ठे न इन्द्र वन्धुरे धा वहिष्ठयोः शतावन्नश्वयोरा ।
इषमा वक्षीषां वर्षिष्ठां मा नस्तारीन्मघवन्नायो अर्यः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें उत्तम, तीव्रगामी अश्वों से युक्त विशाल रथ पर बिठाएँ। आप हमें अन्नों में श्रेष्ठ अन्न प्रदान करें। आपकी कृपा से शत्रु हमारा धन क्षीण न कर सकें ॥९॥

इन्द्र मृळ मह्यं जीवातुमिच्छ चोदय धियमयसो न धाराम् ।
यत्किं चाहं त्वायुरिदं वदामि तज्जुषस्व कृधि मा देववन्तम् ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें श्रेष्ठ कर्म करने वाले तीक्ष्ण बुद्धि एवं सुखमय दीर्घजीवन प्रदान करें। इस प्रार्थना को सुनकर आपकी कृपा से देवगण हमारी रक्षा करें ॥१०॥

त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रं हवेहवे सुहवं शूरमिन्द्रम् ।
ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥११॥

हम कल्याणकारी कामना से संरक्षक, सहायक, युद्ध में आवाहन योग्य, पराक्रमी, सक्षम तथा अनेक स्तोताओं द्वारा स्तुत्य इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं। ऐश्वर्यवान् वे इन्द्रदेव हमारा कल्याण करें ॥११॥

इन्द्रः सुत्रामा स्ववाँ अवोभिः सुमृळीको भवतु विश्ववेदाः ।
बाधतां द्वेषो अभयं कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥१२॥

वे ऐश्वर्यशाली इन्द्रदेव स्वयं की रक्षणशक्ति के द्वारा हमारी रक्षा कर, हमें सुखी बनाएँ । वे इन्द्रदेव ही हमारे शत्रुओं का संहार कर, हमें अभय करते हैं। वे देव हमसे प्रसन्न हों , हमें बलवान् बनाएँ ॥१२॥

तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ।
स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे आराच्चिद्द्वेषः सनुतर्युयोतु ॥१३॥

वे इन्द्रदेव पूज्य हैं, वे हमें बुद्धि और पालन करने वाला धन देकर हमारा कल्याण करें। वे दूरस्थ छिपे हुए (अप्रकट) शत्रुओं को हमसे दूर ले जाएँ ॥१३॥

अव त्वे इन्द्र प्रवतो नोर्मिर्गिरो ब्रह्माणि नियुतो धवन्ते ।
उरू न राधः सवना पुरूण्यपो गा वज्रिन्युवसे समिन्दून् ॥१४॥

जैसे जल-प्रवाह नीचे की ओर तीव्र गति से प्रवाहित होता है, वैसे ही ये स्तोत्र एवं सोम वज्रधारी इन्द्रदेव की ओर गमन करते हैं। वे इन्द्रदेव (सोम में) जल, गाय का दूध, दही आदि मिश्रित करते हैं ॥१४॥

क ईं स्तवत्कः पृणात्को यजाते यदुग्रमिन्मघवा विश्वहावेत् ।
पादाविव प्रहरन्नन्यमन्यं कृणोति पूर्वमपरं शचीभिः ॥१५॥

इन्द्रदेव को यजन एवं स्तुति द्वारा प्रसन्न करने में कौन मनुष्य समर्थ हैं? वे इन्द्रदेव सदा अपनी शक्ति को जानते हैं। वे सदैव हमारी रक्षा एवं उन्नति करें । वे उसी प्रकार एक के बाद दूसरी उन्नति प्रदान करते हैं, जैसे रागीर एक के बाद दूसरा कदम बढ़ाता चलता है ॥१५॥

शृण्वे वीर उग्रमुग्रं दमायन्नन्यमन्यमतिनेनीयमानः ।
एधमानद्विळुभयस्य राजा चोष्कूयते विश इन्द्रो मनुष्यान् ॥१६॥

इन्द्रदेव शत्रुओं का दमन करते और स्तोताओं को स्थान बदलते हुए उन्हें आगे बढ़ाते हैं। इन्द्रदेव का पराक्रम सर्वविदित है । ये सबके राजा इन्द्रदेव याजकों का सब प्रकार से संरक्षण करते हैं ॥१६॥

परा पूर्वेषां सख्या वृणक्ति वितर्तुराणो अपरेभिरेति ।
अनानुभूतीरवधून्वानः पूर्वीरिन्द्रः शरदस्तर्तरीति ॥१७॥

जो पहले मित्रवत् रहकर अनुभवी एवं पुराने हो गये हैं, उनकी अपेक्षा इन्द्रदेव नवीन याजकों का अधिक ध्यान रखते हैं । इन्द्रदेव उपासना न करने वालों का त्याग कर, उपासकों का कल्याण करते हैं ॥१७॥

रूपंरूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय ।
इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शता दश ॥१८॥

इन्द्रदेव विभिन्न शक्तियों द्वारा अनेक रूप बनाकर यजमान के पास प्रकट होते हैं। इन्द्रदेव के रथ में उनकी अनेक शक्तियों के रूप में सहस्रों घोड़े जुते हैं ॥१८॥

युजानो हरिता रथे भूरि त्वष्टेह राजति ।
को विश्वाहा द्विषतः पक्ष आसत उतासीनेषु सूरिषु ॥१९॥

इन्द्रदेव स्वर्णिम आभायुक्त अश्वों को अपने रथ में जोड़कर त्रिलोक में प्रकाशित होते हैं। स्तोताओं के बीच पहुँचकर अन्य कौन उनकी रक्षा करता है? ॥१९॥

अगव्यूति क्षेत्रमागन्म देवा उर्वी सती भूमिरंहूरणाभूत् ।
बृहस्पते प्र चिकित्सा गविष्टावित्था सते जरित्र इन्द्र पन्थाम् ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! गौओं से हीन इस क्षेत्र में हम आ गये हैं। इस विस्तृत भूमण्डल में दस्यु भी निवास करते हैं। हे बृहस्पते !आप हमें गौएँ खोजने की प्रेरणा दें । हे इन्द्रदेव ! पथ से भटके मनुष्यों को आप श्रेष्ठ मार्ग पर लाएँ ॥२०॥

दिवेदिवे सदृशीरन्यमर्धं कृष्णा असेधदप सद्मनो जाः ।
अहन्दासा वृषभो वस्नयन्तोदव्रजे वर्चिनं शम्बरं च ॥२१॥

इन्द्रदेव सूर्यरूप से प्रकट होकर अन्धकार को समाप्त करते हैं । इन्द्रदेव ने ही शम्बर (शक्तिनाशक) तथा वर्ची (तेजस्वीं) असुरों का अपने तेज से नाश किया था ॥२१॥

प्रस्तोक इन्नु राधसस्त इन्द्र दश कोशयीर्दश वाजिनोऽदात् ।

दिवोदासादतिथिग्वस्य राधः शाम्बरं वसु प्रत्यग्रभीष्म ॥२२॥

हे इन्द्रदेव ! प्रस्तोक ने स्तोताओं को सोने के खजाने एवं दस घोड़े प्रदान किए। शम्बर के धन को 'अतिथिग्व' ने जीता था और उसी धन को 'दिवोदास द्वारा हमने प्राप्त किया ॥२२॥

दशाश्वान्दश कोशान्दश वस्त्राधिभोजना ।
दशो हिरण्यपिण्डान्दिवोदासादसानिषम् ॥२३॥

दिवोदास ने दस अश्व, दस खजाने, वस्त्र, भोजन एवं सोने के दस पिण्ड हमें प्रदान किये ॥२३॥

दश रथान्प्रष्टिमतः शतं गा अथर्वभ्यः ।
अश्वथः पायवेऽदात् ॥२४॥

अश्वत्थ ने पायु के लिए घोड़ों सहित दस रथ एवं सौ गौएँ अथर्वाओं को प्रदान कीं ॥२४॥

महि राधो विश्वजन्यं दधानान्भरद्वाजान्त्सार्ञ्जयो अभ्ययष्ट ॥२५॥

भरद्वाज के पुत्र ने मनुष्यों के हितकारी धन को ग्रहण किया ।सृञ्जय के पुत्र ने धन प्रदान कर सबका सत्कार किया ॥२५॥

वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूया अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः ।
गोभिः संनद्धो असि वीळयस्वास्थाता ते जयतु जेत्वानि ॥२६॥

वनस्पति-काष्ठ निर्मित हो रथ ! आप हमारे मित्र होकर मजबूत अंग तथा श्रेष्ठ योद्धाओं से सम्पन्न होकर संकटों से हमें पार लगाएँ। आप श्रेष्ठकर्म द्वारा बँधे हुए हैं, इसलिए वीरतापूर्ण कार्य करें । हे रथ ! आपका सवार जीतने योग्य समस्त वैभव को जीतने में समर्थ हो ॥२६॥

दिवस्पृथिव्याः पर्योज उद्भृतं वनस्पतिभ्यः पर्याभृतं सहः ।
अपामोज्मानं परि गोभिरावृतमिन्द्रस्य वज्रं हविषा रथं यज ॥२७॥

हे अध्वर्यो ! आप पृथ्वी और सूर्यलोक से ग्रहण किये गये तेज को, वनस्पतियों से प्राप्त बल को, जल से प्राप्त पराक्रम वाले रस को सब तरफ से नियोजित करें । सूर्य किरणों से आलोकित वज्र के समान सुदृढ़ रथ को यजन कार्य में समर्पित करें ॥२७॥

इन्द्रस्य वज्रो मरुतामनीकं मित्रस्य गर्भो वरुणस्य नाभिः ।
सेमां नो हव्यदातिं जुषाणो देव रथ प्रति हव्या गृभाय ॥२८॥

हे दिव्य रथ ! आप इन्द्रदेव के वज्र तथा मरुतों की सैन्य शक्ति के समान सुदृढ़ एवं मित्रदेव के गर्भरूप आत्मा तथा वरुणदेव की नाभि के समान हैं। हमारे द्वारा समर्पित हविष्यान्न को प्राप्त कर तृप्त हों ॥२८॥

उप श्वासय पृथिवीमुत द्यां पुरुत्रा ते मनुतां विष्ठितं जगत् ।
स दुन्दुभे सजूरिन्द्रेण देवैर्दूराद्दवीयो अप सेध शत्रून् ॥२९॥

हे दुंदुभे !आप अपनी ध्वनि से भू तथा द्युलोक को गुंजायमान करें, जिससे जंगम तथा स्थावर जगत् के प्राणी आपको जानें ।आप इन्द्र

तथा दूसरे देवगणों से प्रेम करने वाले हैं, अत: हमारे रिपुओं को हमसे दूर हटाएँ ॥२९॥

आ क्रन्दय बलमोजो न आ धा निः ष्टनिहि दुरिता बाधमानः ।
अप प्रोथ दुन्दुभे दुच्छुना इत इन्द्रस्य मुष्टिरसि वीळयस्व ॥३०॥

हे दुंदुभे ! आपकी आवाज को सुनकर शत्रु-सैनिक रोने लगें। आप हमें तेज प्रदान करके हमारे पापों को नष्ट करें । आप इन्द्रदेव की मुष्टि के समान सुदृढ़ होकर हमें मजबूत करें तथा हमारी सेना के समीप स्थित दुष्ट शत्रुओं का पूर्णरूपेण विनाश करें ॥३०॥

आमूरज प्रत्यावर्तयेमाः केतुमद्दुन्दुभिर्वावदीति ।
समश्वपर्णाश्चरन्ति नो नरोऽस्माकमिन्द्र रथिनो जयन्तु ॥३१॥

हे इन्द्रदेव ! उद्घोष करके आप दुष्टों की सेनाओं को भली प्रकार दूर भगाएँ । हमारी सेना विजय उद्घोष करती हुई लौटे। हमारे द्रुतगामी अश्वों के साथ वीर रथारोही घूमते हैं, वे सब विजयश्री का वरण करें ॥३१॥

सूक्त ४८

ऋषि: शंयुबार्हस्पत्य: (तृणपाणि:)
देवता – १-१० अग्नि:, ११-१५, २०-२१, मरुत:, १६-१९ पूषा, २२ द्यावापृथ्वी । छंद – प्रगाथ १३.१८ पुर उष्णिक्, १४, १९-२० बृहती, १५ अतिजगती, १६ ककुप, १७ सतोवृहती, २१ महावृहती यवमध्या, २२ अनुष्टुप

यज्ञायज्ञा वो अग्नये गिरागिरा च दक्षसे ।
प्रप्र वयममृतं जातवेदसं प्रियं मित्रं न शंसिषम् ॥१॥

हम सर्वज्ञ, अमर, हितकारी, मित्रवत् अग्निदेव की प्रशंसा करते हैं । हे उद्गाताओ ! आप भी प्रत्येक स्तुति एवं यज्ञायोजन में उन बलशाली अग्निदेव की स्तुति करें ॥१॥

ऊर्जो नपातं स हिनायमस्मयुर्दाशेम हव्यदातये ।
भुवद्वाजेष्वविता भुवद्वृध उत त्राता तनूनाम् ॥२॥

ऊर्जा को सतत बनाये रखने वाले अग्निदेव की हम प्रार्थना करते हैं। वे निश्चय ही हमारे लिए हितकारी हैं। उन हव्यवाहक को हम हृव्य प्रदान करते हैं। वे हमारी रक्षा करें, हमारे पुत्रों की रक्षा करें ॥२॥

वृषा ह्यग्ने अजरो महान्विभास्यर्चिषा ।
अजस्रेण शोचिषा शोशुचच्छुचे सुदीतिभिः सु दीदिहि ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप तेजस्वी हैं, महान् हैं। आप हमारी इच्छाओं को पूर्ण करते हैं। आप अतिदीप्तिमान् हैं, हमें भी श्रेष्ठ कान्ति से कान्तिमान् बनायें ॥३॥

महो देवान्यजसि यक्ष्यानुषक्तव क्रत्वोत दंसना ।
अर्वाचः सीं कृणुह्यग्नेऽवसे रास्व वाजोत वंस्व ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप महान् देवगणों का यजन करते हैं। आप हमारे यज्ञ में भी देवों के निमित्त यजन करें । आप हमारे द्वारा अर्पित आहुतियों को ग्रहण करें और हमें अन्न प्रदान करें। अपनी बुद्धि और कर्म से रक्षक देवताओं को हमारे अनुकूल करें ॥४॥

यमापो अद्रयो वना गर्भमृतस्य पिप्रति ।
सहसा यो मथितो जायते नृभिः पृथिव्या अधि सानवि ॥५॥

हे अग्निदेव !अरणि, अभिषवण प्रस्तर एवं जल मिलाया हुआ सोमरस आपको पुष्ट करता है ।त्विजों ने अरणि मन्थन से आपको उत्पन्न किया ।पृथ्वी के स्थल यज्ञ में आप प्रतिष्ठित होते हैं ।यज्ञ के गर्भरूप आप ही हैं ॥५॥

आ यः पप्रौ भानुना रोदसी उभे धूमेन धावते दिवि ।
तिरस्तमो ददृश ऊर्म्यास्वा श्यावास्वरुषो वृषा श्यावा अरुषो वृषा ॥६॥

जो अग्निदेव, अपनी कान्ति से सम्पूर्ण द्यावा-पृथिवी को एवं अन्तरिक्ष को धूम्र से परिपूर्ण कर देते हैं, वे तेजस्वी अग्निदेव, काली रात्रि के घोर अन्धकार को दूर करते हैं । वे कामनानुसार वर्षा करने वाले हैं ॥६॥

बृहद्भिरग्ने अर्चिभिः शुक्रेण देव शोचिषा ।
भरद्वाजे समिधानो यविष्ठ्य रेवन्नः शुक्र दीदिहि द्युमत्पावक दीदिहि ॥७॥

हे बड़ी ज्वालाओं से युक्त तरुण अग्ने ! सम्पन्नता एवं पवित्रता प्रदान करने वाले आप महान् हैं ।आप अपने प्रखर तेज से भरद्वाज (पूर्ण ज्ञानी ऋषि) के लिये अत्यन्त तेजस्वीरूप में प्रज्वलित हों और ऐश्वर्य प्रदान करें ॥७॥

विश्वासां गृहपतिर्विशामसि त्वमग्ने मानुषीणाम् ।
शतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यंहसः समेद्धारं शतं हिमाः स्तोतृभ्यो ये च ददति ॥८॥

हे अग्निदेव ! आप सभी मानवी प्रजाओं के घर के स्वामीरूप हैं, हम आपको सौ वर्षों के लिए प्रदीप्त करेंगे। आप सैकड़ों उपायों द्वारा पापों एवं शत्रुओं से हमारी रक्षा करें तथा उस यजमान की भी रक्षा करें, जो आपके तोता को अन्न प्रदान करता है ॥८॥

त्वं नश्चित्र ऊत्या वसो राधांसि चोदय ।
अस्य रायस्त्वमग्ने रथीरसि विदा गाधं तुचे तु नः ॥९॥

हे सबके आश्रयदाता अग्निदेव ! आपकी शक्ति अद्‌भुत है, अपार है। आप अपनी क्षमता से वैभव लाने में समर्थ हैं । आप समृद्धि को हमारे पास आने दें तथा हमारी सन्तानों को भी प्रतिष्ठा प्रदान करें ॥९॥

पर्षि तोकं तनयं पर्तृभिष्ट्वमदब्धैरप्रयुत्वभिः ।
अग्ने हेळांसि दैव्या युयोधि नोऽदेवानि ह्वरांसि च ॥१०॥

हे अग्निदेव ! विरोधमुक्त, सहयोगयुक्त, पराभूत न होने वाले आप अपने संरक्षण-साधनों से हमारे पुत्र-पौत्रों का पालन करें । दैवी प्रकोपों से हमें बचायें, मानुषी-राक्षसी वृत्तियों से भी हमारी रक्षा करें ॥१०॥

आ सखायः सबर्दुघां धेनुमजध्वमुप नव्यसा वचः ।
सृजध्वमनपस्फुराम् ॥११॥

हे मित्रो !नवीन स्तुति द्वारा पोषक दुग्ध देने वाली गौ को ले आएँ ।बिना हानि पहुँचाए, उसे बन्धन-मुक्त करें ॥११॥

या शर्धाय मारुताय स्वभानवे श्रवोऽमृत्यु धुक्षत ।
या मृळीके मरुतां तुराणां या सुम्नैरेवयावरी ॥१२॥

जिस गौं ने बलयुक्त स्वप्रकाशित मरुद्गणों को अमर अन्नरूपी दुग्ध प्रदान किया, जो द्रुतगामी मरुतों को सुख प्रदान करती है, वह (दिव्य गौ) श्रेष्ठ कार्यों द्वारा ही प्राप्त होती है ॥१२॥

भरद्वाजायाव धुक्षत द्विता ।
धेनुं च विश्वदोहसमिषं च विश्वभोजसम् ॥१३॥

हे मरुद्गणो ! भरद्वाजों को अपने दो वस्तुएँ प्रदान कीं, विश्वदोहस (सबके निमित्त दुहीं जाने वाली) गौ, तथा विश्वभोजस (सबको भोजन देने वाला) अन्न ॥१३॥

तं व इन्द्रं न सुक्रतुं वरुणमिव मायिनम् ।
अर्यमणं न मन्द्रं सुप्रभोजसं विष्णुं न स्तुष आदिशे ॥१४॥

हे मरुद्गण ! आप वरुण के समान स्तुति-योग्य हैं । इन्द्रदेव के कार्यों में सहयोग करने वाले हैं । विष्णुदेव की तरह सुखदायी, उत्तम भोजन देने वाले हैं। धन के लिए हम आपकी स्तुति करते हैं ॥१४॥

त्वेषं शर्धो न मारुतं तुविष्वण्यनर्वाणं पूषणं सं यथा शता ।
सं सहस्रा कारिषच्चर्षणिभ्य आँ आविर्गूळ्हा वसू करत्सुवेदा नो वसू करत् ॥१५॥

तेजस्वी, बहुशः प्रशंसित, पोषण करने वाले, बलवान् मरुद्गण गुप्त धन प्रकट करके हमें सुखपूर्वक उपलब्ध कराएँ ॥१५॥

आ मा पूषन्नुप द्रव शंसिषं नु ते अपिकर्ण आघृणे ।
अघा अर्यो अरातयः ॥१६॥

हे पूषन्देव ! हम आपका यशोगान करते हैं। हम गुप्तरूप से यह प्रार्थना करते हैं कि आप हमारी रक्षा के लिए हमारे पास आयें, ताकि कंजूस, पापी शत्रु हमसे दूर रहें ॥१६॥

मा काकम्बीरमुद्वृहो वनस्पतिमशस्तीर्वि हि नीनशः ।

मोत सूरो अह एवा चन ग्रीवा आदधते वेः ॥१७॥

है पूषन्देव ! आप हमारी निन्दा करने वालों को मारें । जैसे व्याध और शिकारी पक्षियों को पकड़ कर उनका हरण करते हैं, वैसे शत्रु हमारा हरण न कर सकें । हे देव ! आप "काकम्बीर" वनस्पति को नष्ट न होने दें ॥१७॥

दृतेरिव तेऽवृकमस्तु सख्यम् ।
अच्छिद्रस्य दधन्वतः सुपूर्णस्य दधन्वतः ॥१८॥

हे पूषन्देव ! आप से हमारी मित्रता छिद्ररहति दधि पात्र के समान निर्बाध एवं अविच्छिन्न बनी रहे ॥१८॥

परो हि मर्त्यैरसि समो देवैरुत श्रिया ।
अभि ख्यः पूषन्पृतनासु नस्त्वमवा नूनं यथा पुरा ॥१९॥

हे पृषादेव ! आप मानवों से श्रेष्ठ एवं अन्य देवों के समान धनवान हैं । आप हमारी प्राचीनकाल की तरह ही रक्षा करें ॥१९॥

वामी वामस्य धूतयः प्रणीतिरस्तु सूनृता ।
देवस्य वा मरुतो मर्त्यस्य वेजानस्य प्रयज्यवः ॥२०॥

हे शत्रु को कम्पित करने वाले, पूजनीय मरुद्गणो ! आपकी तरह वाणी की सत्यता, हमें भी प्राप्त हो । यज्ञ करने वाले देव अथवा मनुष्यों की वाणी प्रशंसनीय एवं इच्छित धन देने वाली हो ॥२०॥

सद्यश्चिद्यस्य चर्कृतिः परि द्यां देवो नैति सूर्यः ।

त्वेषं शवो दधिरे नाम यज्ञियं मरुतो वृत्रहं शवो ज्येष्ठं वृत्रहं शवः ॥२१॥

मरुद्गण शत्रुओं को नष्ट करने की सामर्थ्य वाले हैं। वे पूजनीय हैं । वे अपने कर्म-कौशल से सूर्यदेव की तरह अन्तरिक्ष में एवं सर्वत्र व्याप्त हो जाते हैं ॥२१॥

सकृद्ध द्यौरजायत सकृद्भूमिरजायत ।
पृश्न्या दुग्धं सकृत्पयस्तदन्यो नानु जायते ॥२२॥

द्युलोक एक ही उत्पन्न हुआ, पृथ्वीं भी एक ही उत्पन्न हुई है, गो-दुग्ध भी एक ही उत्पन्न हुआ है। अन्य कोई पदार्थ उत्पन्न नहीं हुए ॥२२॥

सूक्त ४९

ऋषि: ऋजिश्वा भारद्वाज:
देवता – विश्वेदेवा। छंद – त्रिष्टुप, १५ शंकरी

स्तुषे जनं सुव्रतं नव्यसीभिर्गीर्भिर्मित्रावरुणा सुम्नयन्ता ।
त आ गमन्तु त इह श्रुवन्तु सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निः ॥१॥

श्रेष्ठ कर्म करने वाले मित्रावरुणदेव की हम नये स्तोत्रों द्वारा स्तुति करते हैं। वे हमारा सुख बढ़ायें । श्रेउ पराक्रमी मित्रावरुणदेव और अग्निदेव यहाँ आकर हमारी रक्षा करें ॥१॥

विशोविश ईड्यमध्वरेष्वदृप्तक्रतुमरतिं युवत्योः ।
दिवः शिशुं सहसः सूनुमग्निं यज्ञस्य केतुमरुषं यजध्यै ॥२॥

ये तेजस्वी अग्निदेव सभी यज्ञों में प्रजाओं द्वारा स्तुति करने योग्य हैं। ये निरहंकारी कर्म करने वाले हैं। स्वर्ग और पृथ्वी में गमन करने वाले, बल के पुत्र अग्निदेव यज्ञ की ध्वजारूप हैं। ऐसे तेजस्वी अग्निदेव को हम यज्ञ करने के लिए स्तुति करते हैं ॥२॥

अरुषस्य दुहितरा विरूपे स्तृभिरन्या पिपिशे सूरो अन्या ।

मिथस्तुरा विचरन्ती पावके मन्म श्रुतं नक्षत ऋच्यमाने ॥३॥

एक दूसरे से विपरीत रूप वाली सूर्य की दो पुत्रियाँ, कृष्ण रात्रि और शुक्ल दिवसरूपा हैं ।नक्षत्रों के साथ रात्रि एवं सूर्य के साथ दिवस रूपा रहती हैं ।सतत गतिशील, पवित्र बनाने वाली ये दोनों हमारे स्तोत्रों को सुनें ॥३॥

प्र वायुमच्छा बृहती मनीषा बृहद्रयिं विश्ववारं रथप्राम् ।
द्युतद्यामा नियुतः पत्यमानः कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो ॥४॥

हे अध्वर्यों ! आप व्यापक बुद्धि से सम्पन्न यज्ञादि कार्यों में नियुक्त हों । महान् ऐश्वर्य-सम्पन्न, क्रान्तदर्शी, सबमें व्याप्त, रथों से सम्पन्न, तेजस्वी अग्नि को आप प्रज्वलित करें तथा उत्तम बुद्धि द्वारा वायुदेव की स्तुति करें ॥४॥

स मे वपुश्छदयदश्विनोर्यो रथो विरुक्मान्मनसा युजानः ।
येन नरा नासत्येषयध्यै वर्तिर्याथस्तनयाय त्मने च ॥५॥

दोनों अश्विनीकुमारों का रथ उत्तम दीप्ति वाला है, उसमें मन के इशारे से ही अश्व नियोजित होते हैं, (हे अश्विनीकुमारो !) आप, ऐसे रथ पर चढ़कर, पर्याप्त धन भरकर स्तोताओं और उनके पुत्रों की इच्छाओं की पूर्ति हेतु पधारें ॥५॥

पर्जन्यवाता वृषभा पृथिव्याः पुरीषाणि जिन्वतमप्यानि ।
सत्यश्रुतः कवयो यस्य गीर्भिर्जगतः स्थातर्जगदा कृणुध्वम् ॥६॥

हे पर्जन्य और वायुदेव ! आप पृथ्वी के अन्न की वृद्धि के लिए अन्तरिक्ष से जल वृष्टि करें । हे मरुद्गणो ! हम सब आपकी स्तुति करते हैं। आपकी कृपा से समस्त प्रजा समृद्ध होती है ॥६॥

पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीरपत्नी धियं धात् ।
ग्नाभिरच्छिद्रं शरणं सजोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यंसत् ॥७॥

जो सरस्वती देवी, सुन्दर, उत्तम अन्न देने वाली, वीरों का पालन करने वाली, पवित्र करने वाली हैं, वे हमारे यज्ञ अनुष्ठान को धारण करें । देवांगनाओं सहित प्रसन्न होकर वे स्तोताओं को छिद्ररहित निवास प्रदान करें तथा उनका कल्याण करें ॥७॥

पथस्पथः परिपतिं वचस्या कामेन कृतो अभ्यानळर्कम् ।
स नो रासच्छुरुधश्चन्द्राग्रा धियंधियं सीषधाति प्र पूषा ॥८॥

उत्तम स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना किए जाने पर जो पूषा देवता हमें सत्यमार्ग की प्रेरणा प्रदान करते हैं, वहीं हमें । आह्लादप्रद और संतापनाशक साधनों को प्रदान करें वे हमारी बुद्धियों को सिद्धि प्रदान करें- सत्प्रयोजनों में लगायें॥८॥

प्रथमभाजं यशसं वयोधां सुपाणिं देवं सुगभस्तिमृभ्वम् ।
होता यक्षद्यजतं पस्त्यानामग्निस्त्वष्टारं सुहवं विभावा ॥९॥

तेजस्वी अग्निदेव उन त्वष्टादेव का यजन करें, जो त्वष्टादेव देवताओं में प्रथम भजनीय, यशस्वी, सुन्दर हाथ एवं भुजाओं वाले, महान् और आवाहन करने योग्य हैं ॥९॥

भुवनस्य पितरं गीर्भिराभी रुद्रं दिवा वर्धया रुद्रमक्तौ ।
बृहन्तमृष्वमजरं सुषुम्नमृधग्घुवेम कविनेषितासः ॥१०॥

इन उत्तम स्तुतियों से दिन एवं रात्रि में भुवन के पिता रुद्रदेव का यशोगान करें । हम दर्शनीय, जरारहित, सुखदाता, प्रभु की सदैव स्तुति करते हैं ॥१०॥

आ युवानः कवयो यज्ञियासो मरुतो गन्त गृणतो वरस्याम् ।
अचित्रं चिद्धि जिन्वथा वृधन्त इत्था नक्षन्तो नरो अङ्गिरस्वत् ॥११॥

हे युवा, ज्ञानी, यजनीय, मरुद्गणो ! आप स्तोताओं के पास आयें। आप अग्नि के सहयोग से अन्तरिक्ष में वृद्धि को प्राप्त होकर जल वृष्टि करते हैं। आप ओषधियों से रहित देशों को भी तृप्त करते हैं ॥११॥

प्र वीराय प्र तवसे तुरायाजा यूथेव पशुरक्षिरस्तम् ।
स पिस्पृशति तन्वि श्रुतस्य स्तृभिर्न नाकं वचनस्य विपः ॥१२॥

पालक जिस प्रकार गौओं के झुण्ड को घर की ओर तीव्र गति से चलने को प्रेरित करता है, वैसे ही स्तोतागण मरुद्गण की ओर जाने के लिए अपने स्तोत्रों को प्रेरित करें । स्तोताओं की स्तुतियाँ मरुद्गणों के मन एवं शरीर को स्पर्श करती हैं और उनकी वैसे ही शोभा बढ़ाती हैं, जैसे नक्षत्रों से अन्तरिक्ष सुशोभित होता है ॥१२॥

यो रजांसि विममे पार्थिवानि त्रिश्चिद्विष्णुर्मनवे बाधिताय ।
तस्य ते शर्मन्नुपदद्यमाने राया मदेम तन्वा तना च ॥१३॥

विष्णुदेव ने मनुदेव के दु:ख को दूर करने के लिए तीन चरणों में पराक्रम किया । हे देव ! आपके द्वारा दिये गये घर, धन, शरीर और पुत्रों सहित हम आनन्द से रहें ॥१३॥

तन्नोऽहिर्बुध्यो अद्भिरर्कैस्तत्पर्वतस्तत्सविता चनो धात् ।
तदोषधीभिरभि रातिषाचो भगः पुरंधिर्जिन्वतु प्र राये ॥१४॥

हमारे अनेक प्रकार के स्तोत्रों द्वारा स्तुत अहिर्बुध्य (मेघ), पर्वत और सवितादेव हमें अन्न तथा जल दें, भगदेव हमें धन दें तथा विश्वदेवो हमें अन्न प्रदान करें ॥१४॥

नु नो रयिं रथ्यं चर्षणिप्रां पुरुवीरं मह ऋतस्य गोपाम् ।
क्षयं दाताजरं येन जनान्त्स्पृधो अदेवीरभि च क्रमाम विश
आदेवीरभ्यश्नवाम ॥१५॥

हे विश्वदेवा ! आप हमें न टूटने वाला रथ एवं घर, मानवों को तृप्ति देने वाला अन्न, पुत्र तथा अनुचर प्रदान करें, ताकि हम शत्रुओं को आक्रमण करके जीत सकें । आप देवताओं के उपासकों को संरक्षण दे ॥१५॥

सूक्त ५०

ऋषि: ऋजिश्वा भारद्वाज:
देवता – विश्वेदेवा। छंद – त्रिष्टुप

हुवे वो देवीमदितिं नमोभिर्मृळीकाय वरुणं मित्रमग्निम् ।
अभिक्षदामर्यमणं सुशेवं त्रातृन्देवान्त्सवितारं भगं च ॥१॥

हे देवगणो ! सुख की कामना से हम देवमाता अदिति, वरुण, मित्र, अग्नि, शत्रु संहारक एवं सेवनीय अर्यमा, सविता, भग तथा रक्षा करने वाले समस्त देवगणों के प्रति नमन करते हुए इन सबकी उपासना करते हैं ॥१॥

सुज्योतिषः सूर्य दक्षपितृननागास्त्वे सुमहो वीहि देवान् ।
द्विजन्मानो य ऋतसापः सत्याः स्वर्वन्तो यजता अग्निजिह्वाः ॥२॥

हे सर्वप्रेरक सूर्यदेव ! श्रेष्ठ कान्ति वाले देवों को आप हमारे अनुकूल बनाएँ। जो द्विज सदाचारी, सत्यवादी, आत्मवान् तथा पूजनीय हैं, ऐसे अग्नि रूपी जिह्वा वाले देवों को हमारे अनुकूल करें ॥२॥

उत द्यावापृथिवी क्षत्रमुरु बृहद्रोदसी शरणं सुषुम्ने ।
महस्करथो वरिवो यथा नोऽस्मे क्षयाय धिषणे अनेहः ॥३॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आप हमें व्यापक क्षेत्र वाला विशाल निवास दें । हम बलवान् एवं ऐश्वर्यवान् हों । हमें निष्पाप घर मिले ॥३॥

आ नो रुद्रस्य सूनवो नमन्तामद्या हूतासो वसवोऽधृष्टाः ।
यदीमर्भे महति वा हितासो बाधे मरुतो अह्वाम देवान् ॥४॥

सबको निवास देने वाले, रुद्र के पुत्र, हे अहिंसक मरुद्गण ! हम आपकी आवाहन करते हैं। आप छोटे या बड़े संग्राम में हमारा कल्याण करें ॥४॥

मिम्यक्ष येषु रोदसी नु देवी सिषक्ति पूषा अभ्यर्धयज्वा ।
श्रुत्वा हवं मरुतो यद्ध याथ भूमा रेजन्ते अध्वनि प्रविक्ते ॥५॥

तेजस्वी द्यावा-पृथिवीं जिनके साथ हैं, उपासकों को समृद्ध करने वाले पूषन्देव जिनकी सेवा करते हैं, उन मरुद्गणों का हम आवाहन करते हैं। उनके आगमन पर उनके वेग से सभी प्राणी काँपने लगते हैं ॥५॥

अभि त्यं वीरं गिर्वणसमर्चेन्द्रं ब्रह्मणा जरितर्नवेन ।
श्रवदिद्धवमुप च स्तवानो रासद्वाजाँ उप महो गृणानः ॥६॥

हे स्तोतागण ! आप उन पराक्रमी प्रशंसनीय इन्द्रदेव की अभिनव स्तोत्रों द्वारा स्तुति करें । हमारी स्तुति सुनकर प्रसन्न हुए वे इन्द्रदेव हमें बल और अन्न प्रदान करें ॥६॥

ओमानमापो मानुषीरमृक्तं धात तोकाय तनयाय शं योः ।
यूयं हि ष्ठा भिषजो मातृतमा विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः ॥७॥

हे जल देवता ! आप समस्त स्थावर-जंगम को उत्पन्न करने वाले हैं । आप मनुष्यों के हितैषी हैं । आप हमारे पुत्र-पौत्रादि की रक्षा के निमित्त अन्न प्रदान करें । आप माताओं से भी श्रेष्ठ चिकित्सक हैं, अतएव आप हमारे समस्त विकारों को नष्ट करें ॥७॥

आ नो देवः सविता त्रायमाणो हिरण्यपाणिर्यजतो जगम्यात् ।
यो दत्रवाँ उषसो न प्रतीकं व्यूर्णुते दाशुषे वार्याणि ॥८॥

जो सवितादेव, रक्षक, स्वर्णिमरश्मियों वाले, उषा के समान प्रकाशमान , पूजनीय, धनवान् एवं मनुष्यों को अभीष्ट धन देते हैं, वे सवितादेव हमारे पास आएँ ॥८॥

उत त्वं सूनो सहसो नो अद्या देवाँ अस्मिन्नध्वरे ववृत्याः ।
स्यामहं ते सदमिद्रातौ तव स्यामग्नेऽवसा सुवीरः ॥९॥

हे बल पुत्र अग्निदेव ! आज आप हमारे इस यज्ञ में देवगणों को लाएँ । हम आपकी अनुकूलता को सदैव याद रखें और पुत्र-पौत्रादि सहित आपकी कृपा से सुरक्षित रहकर आनन्द से रहें ॥९॥

उत त्या मे हवमा जग्म्यातं नासत्या धीभिर्युवमङ्ग विप्रा ।
अत्रिं न महस्तमसोऽमुमुक्तं तूर्वतं नरा दुरितादभीके ॥१०॥

हे दोनों अश्विनीकुमारो ! आप बुद्धिमान् हैं। आप अपने श्रेष्ठ कर्मों सहित हमारे पास आएँ । जिस प्रकार आपने अत्रि ऋषि को अन्धकार से छुड़ाया था, वैसे ही हमें भी इस (जीवन) संग्राम में पापों से बचाएँ ॥१०॥

ते नो रायो द्युमतो वाजवतो दातारो भूत नृवतः पुरुक्षोः ।
दशस्यन्तो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता अप्या मृळता च देवाः ॥११॥

हे देवगणो ! आप पुत्रादि से युक्त धन देने वाले हैं । आदित्य, वसु, मरुद्गण आदि देव हमारी इच्छाओं की पूर्ति करें एवं हमें सुखी बनाएँ ॥११॥

ते नो रुद्रः सरस्वती सजोषा मीळ्हुष्मन्तो विष्णुर्मृळन्तु वायुः ।
ऋभुक्षा वाजो दैव्यो विधाता पर्जन्यावाता पिप्यतामिषं नः ॥१२॥

रुद्र, सरस्वती, विष्णु, वायु, ऋभुक्षा, दिव्य अन्न और विधाता हमें सुखी बनायें । पर्जन्य एवं वायुदेव हमें अन्न प्रदान करें ॥१२॥

उत स्य देवः सविता भगो नोऽपां नपादवतु दानु पप्रिः ।
त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः सजोषा द्यौर्देवेभिः पृथिवी समुद्रैः ॥१३॥

वे प्रसिद्ध सवितादेव, भगदेव एवं पर्याप्त धन दान करने वाले अग्निदेव हमारी रक्षा करें । सबसे प्रेम करने वाले त्वष्टा देव, द्युलोक और समुद्र सहित पृथ्वी आदि हमारी रक्षा करें ॥१३॥

उत नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात्पृथिवी समुद्रः ।
विश्वे देवा ऋतावृधो हुवानाः स्तुता मन्त्राः कविशस्ता अवन्तु ॥१४॥

अहिर्बुध्न्य, अज, एकपाद, पृथ्वी एवं समुद्र आदि देव हमारी प्रार्थना सुनें । यज्ञ को बढ़ाने वाले स्तोत्रों एवं ऋषियों द्वारा स्तुत देवता हमारी रक्षा करें ॥१४॥

एवा नपातो मम तस्य धीभिर्भरद्वाजा अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
ग्ना हुतासो वसवोऽधृष्टा विश्वे स्तुतासो भूता यजत्राः ॥१५॥

हे देवगणो ! आप शत्रुओं द्वारा अर्हिसित हैं, आप सबको निवास देने वाले हैं। आप अपनी शक्तियों (देव-पलियों) सहित सर्वत्र पूजनीय हैं । हम भरद्वाज वंशीय ऋषि आप सब देवगणों की स्तुति करते हैं ॥१५॥

सूक्त ५१

ऋषि: ऋजिश्वा भारद्वाज:
देवता – विश्वेदेवा। छंद – त्रिष्टुप, १३-१५ उष्णिक, १६ अनुष्टुप

उदु त्यच्चक्षुर्महि मित्रयोराँ एति प्रियं वरुणयोरदब्धम् ।
ऋतस्य शुचि दर्शतमनीकं रुक्मो न दिव उदिता व्यद्यौत् ॥१॥

महान् मित्रावरुण की प्रिय, निर्मल, दर्शनीय, अदम्य, तेजयुक्त ऋत की सेना (प्रकाश किरणे) प्रकट होकर दृष्टिगोचर हो रही हैं। प्रकाशित होकर यह तेज द्युलोक के अलंकार की तरह शोभा पाता है ॥१॥

वेद यस्त्रीणि विदथान्येषां देवानां जन्म सनुतरा च विप्रः ।
ऋजु मर्तेषु वृजिना च पश्यन्नभि चष्टे सूरो अर्य एवान् ॥२॥

ज्ञानवान्, तीनों भुवनों के ज्ञाता, दुर्जय देवों के जन्म के भी जानकार सूर्यदेव मनुष्यों के शुभाशुभ कर्मों को देखते हैं। वे स्वामी (मनुष्यों के) अर्थों (सार्थक प्रयोजनों) की पूर्ति करते हैं ॥२॥

स्तुष उ वो मह ऋतस्य गोपानदितिं मित्रं वरुणं सुजातान् ।
अर्यमणं भगमदब्धधीतीनच्छा वोचे सधन्यः पावकान् ॥३॥

अदिति, मित्र, वरुण, भग एवं अर्यमा आदि यज्ञ की रक्षा करने वाले देवों की हम स्तुति करते हैं। देवगणों के कर्म से यह सब पवित्र होता है ॥३॥

रिशादसः सत्पतीँरदब्धान्महो राज्ञः सुवसनस्य दातॄन् ।
यूनः सुक्षत्रान्क्षयतो दिवो नॄनादित्यान्याम्यदितिं दुवोयु ॥४॥

हे अदिति पुत्र देवगणो ! आप दयालु, चिरयुवा, महाराजा एवं महाबली हैं । आप दुष्टों का नाश करने वाले हैं ।आप ऐश्वर्यवान् एवं श्रेष्ठ निवास देने वाले हैं । (हे अदिति पुत्रो !) हम माता अदिति के आश्रय में जाते हैं ॥४॥

द्यौष्पितः पृथिवि मातरध्रुगग्ने भ्रातर्वसवो मृळता नः ।
विश्व आदित्या अदिते सजोषा अस्मभ्यं शर्म बहुलं वि यन्त ॥५॥

हे वसुगण ! द्यावा-पृथिवी एवं अग्निदेव सहित आप हमारा कल्याण करें । हे अदिति एवं समस्त आदित्यो ! आप सब परस्पर प्रीतिपूर्वक रहकर हमें और अधिक सुख प्रदान करें ॥५॥

मा नो वृकाय वृक्ये समस्मा अघायते रीरधता यजत्राः ।
यूयं हि ष्ठा रथ्यो नस्तनूनां यूयं दक्षस्य वचसो बभूव ॥६॥

हे पूजनीय देवताओ ! आप हमें वृक (भेड़िया या क्रूरकर्मी) तथा वृक्य (क्रूरता-कुटिलता) से बचाएँ । आप हमारे शरीर, बल एवं वाक् को श्रेष्ठता की ओर बढ़ने की प्रेरणा दें ॥६॥

मा व एनो अन्यकृतं भुजेम मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे ।
विश्वस्य हि क्षयथ विश्वदेवाः स्वयं रिपुस्तन्वं रीरिषीष्ट ॥७॥

हे देवताओ ! दूसरों के द्वारा किए गये पाप-कर्मों को दुष्परिणाम हमें भोगना न पड़े । हम दण्डनीय पाप कर्म न करें । हे विश्व के स्वामी देव ! आपकी कृपा से शत्रु अपने शरीर को स्वयं ही नष्ट कर लें ॥७॥

नम इदुग्रं नम आ विवासे नमो दाधार पृथिवीमुत द्याम् ।
नमो देवेभ्यो नम ईश एषां कृतं चिदेनो नमसा विवासे ॥८॥

नमन वास्तव में ही महान् है, इसलिए हम उसका सेवन करते (उसे व्यवहार में लाते हैं । नमन ही द्युलोक एवं पृथ्वी का धारणकर्ता है । हम देवगणों को नमन करते हैं, नमन ही उन्हें प्रभावित करने वाला है। किये गये (कर्मों के भोगों) को नष्ट करने के लिए हम नमन करते हैं ॥८॥

ऋतस्य वो रथ्यः पूतदक्षानृतस्य पस्त्यसदो अदब्धान् ।
ताँ आ नमोभिरुरुचक्षसो नृन्विश्वान्व आ नमे महो यजत्राः ॥९॥

हे देवगण ! आप यज्ञ के नेतृत्व करने वाले, बलवान् यज्ञशाला में निवास करने वाले, अपराजित एवं महिमावान् हैं। हम नमस्कारों द्वारा आपको नमन करते हैं ॥९॥

ते हि श्रेष्ठवर्चसस्त उ नस्तिरो विश्वानि दुरिता नयन्ति ।
सुक्षत्रासो वरुणो मित्रो अग्निर्ऋतधीतयो वक्मराजसत्याः ॥१०॥

वे देवता हमारे पापों को दूर करने वाले तथा तेजस्वी हैं। सत्यवादी, सदाचारी एवं सत्यबल वाले (साधक), वरुण, मित्र एवं अग्नि आदि सभी देवों के आश्रय में रहते हैं ॥१०॥

ते न इन्द्रः पृथिवी क्षाम वर्धन्पूषा भगो अदितिः पञ्च जनाः ।
सुशर्माणः स्ववसः सुनीथा भवन्तु नः सुत्रात्रासः सुगोपाः ॥११॥

बढ़ने वाले इन्द्रदेव, पूषा, भग, अदिति और पञ्चजन हमारे उत्तम घरों की रक्षा करें । वे अन्न प्रदान करने वाले, सुखदायक, आश्रय प्रदान करने वाले देव हमारी रक्षा करें ॥११॥

नू सद्मानं दिव्यं नंशि देवा भारद्वाजः सुमतिं याति होता ।
आसानेभिर्यजमानो मियेधैर्देवानां जन्म वसूयुर्ववन्द ॥१२॥

आहुति अर्पित करने वाले ऋषि एवं यजमान धन प्राप्ति की इच्छा से देवताओं की स्तुति करते हैं । वे देवता प्रसन्न होकर हम भारद्वाजों को भव्य निवास प्रदान करें ॥१२॥

अप त्यं वृजिनं रिपुं स्तेनमग्ने दुराध्यम् ।
दविष्ठमस्य सत्पते कृधी सुगम् ॥१३॥

हे अग्निदेव ! आप उन दुष्ट शत्रुओं को दूर भगायें, जो चोर एवं पापी हैं। इनके स्वभाव को बदलें । इनसे हमारी रक्षा करें एवं हमारा सर्वतोभावेन मंगल करें ॥१३॥

ग्रावाणः सोम नो हि कं सखित्वनाय वावशुः ।
जही न्यत्रिणं पणिं वृको हि षः ॥१४॥

है सोम ! आप भेड़िये की तरह स्वभाव वाले दण्डनीय 'पणि' का संहार करें । आपकी मित्रता की इच्छा से हम इस प्राव (सोमवल्ली कूटने के पत्थर अथवा दमन की सामर्थ्य) सहित प्रस्तुत हैं ॥१४॥

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः ।
कर्ता नो अध्वन्ना सुगं गोपा अमा ॥१५॥

हें देवगणो ! आप उत्तम दानवीरों में श्रेष्ठ, तेजस्वी इन्द्रदेव सहित हमारे मार्ग को सुगम करें एवं हमारी रक्षा करें ॥१५॥

अपि पन्थामगन्महि स्वस्तिगामनेहसम् ।
येन विश्वाः परि द्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥१६॥

जिस मार्ग पर गमन करने से शत्रु दूर रहते हैं एवं पर्याप्त धन लाभ होता है, हम उसी निष्पाप-सुखद मार्ग से गमन करें ॥१६॥

सूक्त ५२

ऋषि: ऋजिश्वा भारद्वाज:
देवता – विश्वेदेवा। छंद – त्रिष्टुप, ७-१२ गायत्री, १४ जगती

न तद्दिवा न पृथिव्यानु मन्ये न यज्ञेन नोत शमीभिराभिः ।
उब्जन्तु तं सुभ्वः पर्वतासो नि हीयतामतियाजस्य यष्टा ॥१॥

(ऋषि कहते हैं) हमारी सुनिश्चित मान्यता है कि वह अतियाज(यज्ञीय मर्यादाओं के अनुशासन का अतिक्रमण करने वाला यजनपरक कर्मकाण्ड) न तो द्युलोक के अनुकूल है और न पृथ्वी के । न (कर्मकाण्ड परक) यज्ञीय परिपाटी के अनुरूप है और न शान्तिपूर्ण कर्मानुष्ठानों के अनुकूल है। अस्तु, महान् पर्वत उसे प्रताड़ित करें और उसके ऋत्विग्गण हीनता को प्राप्त हों ॥१॥

अति वा यो मरुतो मन्यते नो ब्रह्म वा यः क्रियमाणं निनित्सात् ।
तपूंषि तस्मै वृजिनानि सन्तु ब्रह्मद्विषमभि तं शोचतु द्यौः ॥२॥

हे मरुद्गणो ! जो हमारे मन्त्रपाठ का अतिक्रमण अथवा अनादर करे, उसको अग्नि की ज्वालाएँ जलाने वाली हों । स्वर्ग लोक भी उस ज्ञान से द्वेष करने वाले को संतप्त करे ॥२॥

किमङ्ग त्वा ब्रह्मणः सोम गोपां किमङ्ग त्वाहुरभिशस्तिपां नः ।
किमङ्ग नः पश्यसि निद्यमानान्ब्रह्मद्विषे तपुषिं हेतिमस्य ॥३॥

हे सोमदेव ! आपको मन्त्र की रक्षा करने वाला क्यों कहते हैं ? हे प्रिय सोमदेव ! आपको निन्दा से बचाने वाला क्यों कहा जाता है ? आप निन्दा करने वाले को देखते हैं। ज्ञान से द्वेष करने वाले को आप अपने आयुध द्वारा व्यथित करें ॥३॥

अवन्तु मामुषसो जायमाना अवन्तु मा सिन्धवः पिन्वमानाः ।
अवन्तु मा पर्वतासो ध्रुवासोऽवन्तु मा पितरो देवहूतौ ॥४॥

जल से भरी नदियाँ, उषाएँ, दृढ़ पर्वत, पितर, यज्ञ में आहूत-उपस्थित देवशक्तियाँ हमारी रक्षा करें ॥४॥

विश्वदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम् ।
तथा करद्वसुपतिर्वसूनां देवाँ ओहानोऽवसागमिष्ठः ॥५॥

हम सदैव उत्तम विचार करें । हम सदैव सूर्यदेव का दर्शन करें । देवताओं के निमित्त आहुति को वहन करने वाले एवं धनों के अधिपति अग्निदेव हमें सुरक्षा प्रदान करें ॥५॥

इन्द्रो नेदिष्ठमवसागमिष्ठः सरस्वती सिन्धुभिः पिन्वमाना ।
पर्जन्यो न ओषधीभिर्मयोभुरग्निः सुशंसः सुहवः पितेव ॥६॥

इन्द्रदेव अपने रक्षण साधनों सहित हमारी रक्षा करें । जल से उमड़ती सरस्वती हमारी रक्षा करें । पर्जन्य से उत्पन्न ओषधियों एवं पिता के समान अग्निदेव को हम रक्षा के लिए आवाहित करते हैं ॥६॥

विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम् ।
एदं बर्हिर्नि षीदत ॥७॥

हे विश्वेदेव ! आप हमारी प्रार्थना सुनकर आएँ और बिछाये हुए कुशाओं पर विराजमान हों ॥७॥

यो वो देवा घृतस्नुना हव्येन प्रतिभूषति ।
तं विश्व उप गच्छथ ॥८॥

हे देवगणो ! जो याजक घृत सहित आपके निमित्त आहुतियाँ अर्पित करते हैं। आप उनका कल्याण करने के निमित्त उनके पास आएँ ॥८॥

उप नः सूनवो गिरः शृण्वन्त्वमृतस्य ये ।
सुमृळीका भवन्तु नः ॥९॥

जो अमरपुत्र देव हैं, वे हमारी इस प्रार्थना को सुनकर हमारे पास आएँ एवं हमें सुख प्रदान करें ॥९॥

विश्वे देवा ऋतावृध ऋतुभिर्हवनश्रुतः ।
जुषन्तां युज्यं पयः ॥१०॥

आप समस्त देवगण सत्य (यज्ञीय) मार्ग को बढ़ाते हैं । आप तुओं के अनुसार हवन करने के लिए सर्वविदित हैं । आप योग्य दुग्ध को स्वीकार करें ॥१०॥

स्तोत्रमिन्द्रो मरुद्गणस्त्वष्टृमान्मित्रो अर्यमा ।
इमा हव्या जुषन्त नः ॥११॥

मरुद्गण के साथ इन्द्रदेव त्वष्टादेव, मित्र, अर्यमा आदि सब देव हमारी आहुतियों को एवं स्तोत्रों को स्वीकार करें ॥११॥

इमं नो अग्ने अध्वरं होतर्वयुनशो यज ।
चिकित्वान्दैव्यं जनम् ॥१२॥

हे होता अग्निदेव ! आप हमारे इस यज्ञ में प्रमुख देवताओं के लिए उनके अनुरूप यजन क़रें ॥१२॥

विश्वे देवाः शृणुतेमं हवं मे ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ ।
ये अग्निजिह्वा उत वा यजत्रा आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयध्वम् ॥१३॥

हे विश्वेदेवगणो ! आप अन्तरिक्ष में अथवा द्युलोक में (जहाँ भी) हैं, हमारी प्रार्थना सुनकर आएँ और इन कुशाओं पर बैठकर सोम का पान करके आनन्दित हों ॥१३॥

विश्वे देवा मम शृण्वन्तु यज्ञिया उभे रोदसी अपां नपाच्च मन्म ।
मा वो वचांसि परिचक्ष्याणि वोचं सुम्नेष्विद्वो अन्तमा मदेम ॥१४॥

पृथ्वी, अन्तरिक्ष एवं अग्नि सहित समस्त देवशक्तियाँ हमारे द्वारा प्रस्तुत, श्रेष्ठ स्तोत्रों का श्रवण करें । हम कभी भी देवों को अप्रिय लगने वाले वचन न बोलें एवं देवों द्वारा प्रदत्त अनुदानों से ही प्रमुदित हों ॥१४॥

ये के च ज्मा महिनो अहिमाया दिवो जज्ञिरे अपां सधस्थे ।
ते अस्मभ्यमिषये विश्वमायुः क्षप उस्रा वरिवस्यन्तु देवाः ॥१५॥

द्युलोक, पृथ्वीलोक और अन्तरिक्ष में अपने महान् कर्मकौशल से युक्त देव प्रकट हों और हमारे पुत्रादि को अन्न एवं पूर्ण आयुष्य प्रदान करें ॥१५॥

अग्नीपर्जन्याववतं धियं मेऽस्मिन्हवे सुहवा सुष्टुतिं नः ।
इळामन्यो जनयद्गर्भमन्यः प्रजावतीरिष आ धत्तमस्मे ॥१६॥

हे अग्निदेव और पर्जन्य ! आप हमारी बुद्धि की सुरक्षा करें । हे आवाहन करने योग्य ! आप स्तुति सहित हमारा आवाहन सुनें । आप में से एक अन्नदाता और दूसरे सन्तानदाता हैं। आप प्रसन्न होकर हमें अन्न सहित सन्तान प्रदान करें ॥१६॥

स्तीर्णे बर्हिषि समिधाने अग्नौ सूक्तेन महा नमसा विवासे ।
अस्मिन्नो अद्य विदथे यजत्रा विश्वे देवा हविषि मादयध्वम् ॥१७॥

हे देवताओ ! हम कुश के आसन बिछाते हैं और अग्नि प्रदीप्त करते हैं। जब हम मनोयोगपूर्वक मंत्र पाठ करें, तब आप सब देव हमारी आहुतियों एवं नमस्कारों से तृप्त हों ॥१७॥

सूक्त ५३

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – पूषा । छंद – गायत्री; ८ अनुष्टुप

वयमु त्वा पथस्पते रथं न वाजसातये ।
धिये पूषन्नयुज्महि ॥१॥

हे पूषन्देव ! आप हमें मार्ग में सुरक्षित करें । जैसे अन्न के लिए रथ नियोजित करते हैं, वैसे ही हम बुद्धि पूर्वक कर्म करने के लिए आपके सम्मुख उपस्थित होते हैं ॥१॥

अभि नो नर्यं वसु वीरं प्रयतदक्षिणम् ।
वामं गृहपतिं नय ॥२॥

हे पूषन्देव ! आप हमें मनुष्यों के हितैषी, पर्याप्त धन दान करने वाले दानवीर और प्रशंसनीय गृहस्थ के समीप ले चलें ॥२॥

अदित्सन्तं चिदाघृणे पूषन्दानाय चोदय ।
पणेश्चिद्वि म्रदा मनः ॥३॥

हे प्रकाशमान पूषन्देव ! आप कंजूस को दान देने की प्रेरणा दें । (कृपण) व्यापारी के कठोर हृदय को कोमल बनाएँ ॥३॥

वि पथो वाजसातये चिनुहि वि मृधो जहि ।
साधन्तामुग्र नो धियः ॥४॥

हे पूषन्देव ! आप हमारे घातक शत्रुओं का नाश करें । हमें धन प्राप्त करने का मार्ग बताएँ ॥४॥

परि तृन्धि पणीनामारया हृदया कवे ।
अथेमस्मभ्यं रन्धय ॥५॥

हे पूषन्देव ! आप ज्ञानी हैं । आप (ज्ञानरूपी) शस्त्र से इन प्राणियों के कठोर हृदयों को चीर कर (परिवर्तित कर) हमारे अनुकूल कर दें ॥५॥

वि पूषन्नारया तुद पणेरिच्छ हृदि प्रियम् ।
अथेमस्मभ्यं रन्धय ॥६॥

हे पूषन्देव ! आप आरे से प्राणियों के हृदय को चीरकर (परिवर्तित कर) उनके हृदय में प्रिय भाव भरें और हमारे वशीभूत कर दें ॥६॥

आ रिख किकिरा कृणु पणीनां हृदया कवे ।
अथेमस्मभ्यं रन्धय ॥७॥

हे पूषन्देव ! आप प्राणियों के हृदयों की कठोरता को खाली करें और उन्हें हमारे अधीन करें ॥७॥

यां पूषन्ब्रह्मचोदनीमारां बिभर्ष्याघृणे ।
तया समस्य हृदयमा रिख किकिरा कृणु ॥८॥

हे पूषन्देव ! आप ज्ञान से प्रेरित आरे से कृपणों के हृदयों को अच्छी तरह खाली कर समभाव से भरें ॥८॥

या ते अष्ट्रा गोओपशाघृणे पशुसाधनी ।
तस्यास्ते सुम्नमीमहे ॥९॥

हे तेजस्वी वीर पूषन्देव ! आप अपने जिस अस्त्र से पशुओं को प्रेरित कर सही मार्ग में चलाते हैं, उसी से हम भी अपने कल्याण की कामना करते हैं ॥९॥

उत नो गोषणिं धियमश्वसां वाजसामुत ।
नृवत्कृणुहि वीतये ॥१०॥

हे पूषन् देव ! आप हमारे यज्ञादि कार्य की सफलता के लिए गौ, अश्व, सेवक एवं अन्न प्रदान करें ॥१०॥

सूक्त ५४

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – पूषा । छंद – गायत्री

सं पूषन्विदुषा नय यो अञ्जसानुशासति ।
य एवेदमिति ब्रवत् ॥१॥

हे पूषन्देव ! आप हमें ऐसे श्रेष्ठ मार्गदर्शक के पास पहुँचाएँ, जो हमें उत्तम मार्ग एवं धन प्राप्त करने का मार्ग बताएँ ॥१॥

समु पूष्णा गमेमहि यो गृहाँ अभिशासति ।
इम एवेति च ब्रवत् ॥२॥

हे पूषन्देव ! आप हमें ऐसे पुरुष से मिलाएँ, जो घर को अनुशासित रखने का मार्गदर्शन दे ॥२॥

पूष्णश्चक्रं न रिष्यति न कोशोऽव पद्यते ।
नो अस्य व्यथते पविः ॥३॥

पूषन्देव का चक्र कभी भी दूषित नहीं होता है। इसकी धार सदैव तीक्ष्ण रहती है ॥३॥

यो अस्मै हविषाविधन्न तं पूषापि मृष्यते ।
प्रथमो विन्दते वसु ॥४॥

जो याजक ऐसे पूषन्देव के लिए आहुति प्रदान करता है । उसे कोई कष्ट नहीं होता है एवं उसे पूषादेव कृपा करके प्रथम (श्रेष्ठ) धन प्रदान करते हैं ॥४॥

पूषा गा अन्वेतु नः पूषा रक्षत्वर्वतः ।
पूषा वाजं सनोतु नः ॥५॥

पूषन्देव हमारी गौओं की, घोड़ों की रक्षा करें एवं हमें अन्न एवं धन प्रदान करें ॥५॥

पूषन्ननु प्र गा इहि यजमानस्य सुन्वतः ।
अस्माकं स्तुवतामुत ॥६॥

हे पूषन्देव ! यज्ञ कर्म करने वालों को तथा हम स्तोताओं को अनुकूल गौएँ प्राप्त हों ॥६॥

माकिर्नेशन्माकीं रिषन्माकीं सं शारि केवटे ।
अथारिष्टाभिरा गहि ॥७॥

हे पूषन्देव ! आप हमारी गौओं को नष्ट न करें, कुएँ में गिरकर या अन्य प्रकार से नष्ट न होने दें । आपसे सुरक्षित गौएँ सायंकाल हमारे पास लौट आएँ॥७॥

शृण्वन्तं पूषणं वयमिर्यमनष्टवेदसम् ।
ईशानं राय ईमहे ॥८॥

जिनका धन अविनाशी हैं, ऐसे पूषन्देव से हम धन की याचना करते हैं। वे प्रार्थना सुनकर हमारी दरिद्रता को दूर कर दें॥८॥

पूषन्तव व्रते वयं न रिष्येम कदा चन ।
स्तोतारस्त इह स्मसि ॥९॥

है पूषन्देव ! आपका यजन करते हुए, आपकी स्तुति करने वाले हम सब कभी नष्ट न हों, प्रत्युत पहले की तरह ही सुरक्षित रहें ॥९॥

परि पूषा परस्ताद्धस्तं दधातु दक्षिणम् ।
पुनर्नो नष्टमाजतु ॥१०॥

हे पूषन्देव ! आप हमारे गो-धन को कुमार्गगामी होकर नष्ट होने से बचाएँ और अपहत हुए गो-धन को पुनः प्राप्त कराएँ ॥१०॥

सूक्त ५५

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – पूषा । छंद – गायत्री

एहि वां विमुचो नपादाघृणे सं सचावहै ।
रथीर्ऋतस्य नो भव ॥१॥

हे पूषन्देव ! आपकी स्तुति करने वाले स्तोता और आपका वजन करने वाले हम, दोनों मिलकर रहेंगे। आप हमारे पास आएँ और यज्ञ कर्म का नेतृत्व करें ॥१॥

रथीतमं कपर्दिनमीशानं राधसो महः ।
रायः सखायमीमहे ॥२॥

मस्तक पर केश हैं जिनके, ऐसे महारथी योद्धा, धन के स्वामी, जो हमारे सखा हैं, उन पूषन्देव से हम धन की याचना करते हैं ॥२॥

रायो धारास्याघृणे वसो राशिरजाश्व ।
धीवतोधीवतः सखा ॥३॥

हे अजरूपी अश्व वाले देव ! आप धन के प्रवाह एवं ऐश्वर्य की राशि हैं । आप स्तुति करने वाले स्तोताओं के मित्र हैं ॥३॥

पूषणं न्वजाश्वमुप स्तोषाम वाजिनम् ।
स्वसुर्यो जार उच्यते ॥४॥

अश्व एवं छाग (बकरी) जिनके वाहन हैं, उन पूषादेव की हम स्तुति करते हैं । वे पूषादेव उषा के स्वामी कहलाते हैं ॥४॥

मातुर्दिधिषुमब्रवं स्वसुर्जारः शृणोतु नः ।
भ्रातेन्द्रस्य सखा मम ॥५॥

वे पूषादेव, जो उषा के पति सूर्यदेव एवं इन्द्रदेव के भाई और हमारे सखा हैं, उन रात्रि माता के सहचर की हम स्तुति करते हैं ॥५॥

आजासः पूषणं रथे निशृम्भास्ते जनश्रियम् ।
देवं वहन्तु बिभ्रतः ॥६॥

लोगों को वैभवशाली बनाने वाले पूषादेव को, रथ में जुते छाग, रथ को खींचकर यहाँ (यज्ञशाला में) लाएँ ॥६॥

सूक्त ५३

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – पूषा । छंद – गायत्री; ६ अनुष्टुप

य एनमादिदेशति करम्भादिति पूषणम् ।
न तेन देव आदिशे ॥१॥

जो करम्भ (दहीं, घृतयुक्त अन्न विशेष अथवा करों-किरणों से जल) का सेवन करने वाले पूषादेव की स्तुति करता है, उसे अन्य देवताओं की स्तुति करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है ॥१॥

उत घा स रथीतमः सख्या सत्पतिर्युजा ।
इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते ॥२॥

वास्तव में जो श्रेष्ठ रथी हैं, उन पूषादेव की मित्रवत् सहायता से सज्जनों के रक्षक इन्द्रदेव शत्रुओं का संहार करते हैं ॥२॥

उतादः परुषे गवि सूरश्चक्रं हिरण्ययम् ।
न्यैरयद्रथीतमः ॥३॥

वे श्रेष्ठ रथी पूषादेव सूर्यदेव के हिरण्यमय रथ चक्र को उत्तम रीति से घुमाते हैं ॥३॥

यदद्य त्वा पुरुष्टुत ब्रवाम दस्र मन्तुमः ।
तत्सु नो मन्म साधय ॥४॥

हे पूषादेव ! आप बहुतों द्वारा प्रशंसित, दर्शनीय और माननीय हैं। हम जिस धन की इच्छा से आपकी स्तुति करते हैं, वह आप हमें दिलाएँ ॥४॥

इमं च नो गवेषणं सातये सीषधो गणम् ।
आरात्पूषन्नसि श्रुतः ॥५॥

हे पूषन्देव ! आप समीप से और दूर से भी प्रसिद्ध हैं, अर्थात् आप सर्वव्यापक हैं। आप गौओं के खोजने वालों को धन प्रदान करें ॥५॥

आ ते स्वस्तिमीमह आरेअघामुपावसुम् ।
अद्या च सर्वतातये श्वश्च सर्वतातये ॥६॥

हैं पूषन्देव ! हम आपकी स्तुति करते हैं, जिससे हमारा आज और कल (सर्वदा) कल्याणकारी हो । आप हमें धन प्रदान करें और पाप से बचाएँ ॥६॥

सूक्त ५७

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्रापूषणौ । छंद – गायत्री

इन्द्रा नु पूषणा वयं सख्याय स्वस्तये ।
हुवेम वाजसातये ॥१॥

हम अन्न प्राप्ति की कामना से, अपने कल्याण के लिए मित्रस्वरूप इन्द्र और पूषा देवताओं को स्तुतियों के द्वारा बुलाते हैं ॥१॥

सोममन्य उपासदत्पातवे चम्वोः सुतम् ।
करम्भमन्य इच्छति ॥२॥

आसन पर बैठे देवों में इन्द्रदेव अभिषुत सोमरस को पीने की इच्छा करते हैं एवं पूषादेव करम्भ (सत्तू युक्त खाद्य पदार्थ) की इच्छा करते हैं ॥२॥

अजा अन्यस्य वह्नयो हरी अन्यस्य सम्भृता ।
ताभ्यां वृत्राणि जिघ्नते ॥३॥

इन्द्रदेव के रथ में घोड़े एवं पूषादेव के रथ में छाग (बकरी) युक्त (जुते) हैं। ये दोनों मिलकर वृत्रों (शत्रुओं) का नाश करते हैं ॥३॥

यदिन्द्रो अनयद्रितो महीरपो वृषन्तमः ।
तत्र पूषाभवत्सचा ॥४॥

जब महाबली इन्द्रदेव घनघोर जलवृष्टि के रूप में जल को प्रवाहित करते हैं, तब पोषण करने में समर्थ (पूषा) भी उनके सहयोगी होते हैं ॥४॥

तां पूष्णः सुमतिं वयं वृक्षस्य प्र वयामिव ।
इन्द्रस्य चा रभामहे ॥५॥

हम सुदृढ़ वृक्ष की शाखा की तरह इन्द्रदेव और पूषन्देव के आश्रय में सुरक्षित रह सकते हैं ॥५॥

उत्पूषणं युवामहेऽभीशूँरिव सारथिः ।
मह्या इन्द्रं स्वस्तये ॥६॥

जैसे लगाम को सारथी पकड़कर (रथ को बिना क्षति के) ले चलता है, वैसे अपने महान् कल्याण के लिए हम पूषन्देव और इन्द्रदेव को पकड़कर (जीवन पथ पर आगे बढ़ते हैं ॥६॥

सूक्त ५८

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – पूषा । छंद – त्रिष्टुप, २ जगती

शुक्रं ते अन्यद्यजतं ते अन्यद्विषुरूपे अहनी द्यौरिवासि ।
विश्वा हि माया अवसि स्वधावो भद्रा ते पूषन्निह रातिरस्तु ॥१॥

हे पूषादेव ! आपका एक शुभरूप, दिन है तथा अन्यरूप रात्रि है । यह दोनों आपकी महिमा से ही भासित होते हैं । हे पोषणकर्ता पूषन्देवता ! द्युलोक के समान आभामय आप सम्पूर्ण जीव-जगत् की रक्षा करने वाले हैं । आपका कल्याणकारी अनुदान हमें प्राप्त हो ॥१॥

अजाश्वः पशुपा वाजपस्त्यो धियंजिन्वो भुवने विश्वे अर्पितः ।
अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्वरीवृजत्संचक्षाणो भुवना देव ईयते ॥२॥

जो छाग वाहने वाले पूषन्देव पशुओं के पोषक हैं एवं अन्नदाता, बुद्धि को प्रखर बनाने वाले, ज्ञानी, समस्त भुवनों में स्थित हैं, वे पूषादेव सूर्यरूप से समस्त प्राणियों को प्राण-प्रकाश देते हुए अन्तरिक्ष में गमन करते हैं ॥२॥

यास्ते पूषन्नावो अन्तः समुद्रे हिरण्ययीरन्तरिक्षे चरन्ति ।
ताभिर्यासि दूत्यां सूर्यस्य कामेन कृत श्रव इच्छमानः ॥३॥

हे पूषन्देव ! अन्तरिक्षरूपी समुद्र में (सूर्य रश्मिरूपी) आपकी सुनहरी नौकाएँ चल रहीं हैं। आप स्वेच्छा से यशस्वी कर्म करते हैं । आप सूर्यदेव के दूत हैं । हम आपकी प्रसन्नता के लिए स्तुति करते हैं ॥३॥

पूषा सुबन्धुर्दिव आ पृथिव्या इळस्पतिर्मघवा दस्मवर्चाः ।
यं देवासो अददुः सूर्यायै कामेन कृतं तवसं स्वञ्चम् ॥४॥

द्युलोक से पृथ्वीलोक तक के समस्त प्राणियों के उत्तम बन्धुरूप पूषादेव अन्न-धन के स्वामी हैं। वे पूषादेव, ऐश्वर्यवान् हैं। वे ही उषा को प्रकट करने वाले हैं। वे समस्त विश्व को प्रकाशित करते हुए गमन करते हैं ॥४॥

सूक्त ५९

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इंद्राग्नि । छंद – वृहती; ७-१० अनुष्टुप

प्र नु वोचा सुतेषु वां वीर्या यानि चक्रथुः ।
हतासो वां पितरो देवशत्रव इन्द्राग्नी जीवथो युवम् ॥१॥

हे इन्द्राग्निदेव ! आप अमर हैं। आप रक्षक हैं; आपने देखें से द्वेष करने वाले असुरों को अपने पराक्रम से नष्ट किया है। सोम तैयार करके हम आपके पराक्रम का गान करते हैं ॥१॥

बळित्था महिमा वामिन्द्राग्नी पनिष्ठ आ ।
समानो वां जनिता भ्रातरा युवं यमाविहेहमातरा ॥२॥

हे इन्द्राग्निदेव ! आपकी महिमा वास्तव में सत्य है । आप दोनों के एक ही पिता हैं, आप दोनों जुड़वा भाई हैं और यहीं आपकी एक माता (अदिति) हैं ॥२॥

ओकिवांसा सुते सचाँ अश्वा सप्ती इवादने ।
इन्द्रा न्वग्नी अवसेह वज्रिणा वयं देवा हवामहे ॥३॥

हे इन्द्राग्ने ! घोड़ा जिस प्रकार घास मिलने पर हर्षित होता है, उसी प्रकार तैयार सोमरस से युक्त होकर आप आनन्दित होते हैं । इस यज्ञ में हम अपनी रक्षा के निमित्त आपका आवाहन करते हैं ॥३॥

य इन्द्राग्नी सुतेषु वां स्तवत्तेष्वृतावृधा ।
जोषवाकं वदतः पज्रहोषिणा न देवा भसथश्चन ॥४॥

हे ऋत वृध (सत्य के उन्नायक) इन्द्राग्ने ! सोम तैयार होने पर जो लोग कुत्सित भावों या स्नेहरहित स्तोत्रों का प्रयोग करते हैं, आप उनका सोम नहीं पीते हैं ॥४॥

इन्द्राग्नी को अस्य वां देवौ मर्तश्चिकेतति ।
विषूचो अश्वान्युयुजान ईयत एकः समान आ रथे ॥५॥

हे इन्द्राग्निदेव ! जब आप एक ही रथ पर आरूढ़ हों, घोड़ों को जोतकर, विभिन्न दिशाओं को जाते हैं, तब कौन ऐसा मानव है, जो आपके इस कार्य के रहस्य को पूर्णतया समझ सके? ॥५॥

इन्द्राग्नी अपादियं पूर्वागात्पद्वतीभ्यः ।
हित्वी शिरो जिह्वया वावदच्चरत्त्रिंशत्पदा न्यक्रमीत् ॥६॥

हे इन्द्रदेव और अग्निदेव ! बिना पैर की उषा, पैर वाली प्रजा से पूर्व हीं आती है और शिर न होते हुए भी जीभ से (जाग्रत् जीवों की वाणी से) प्रेरणा देती हुई, एक दिन में तीस कदम (मुहूर्त) चलती है ॥६॥

इन्द्राग्नी आ हि तन्वते नरो धन्वानि बाह्वोः ।
मा नो अस्मिन्महाधने परा वर्क्तं गविष्टिषु ॥७॥

हे इन्द्राग्ने ! वीर पुरुष अपने हाथ धनुष पर रखते हैं अर्थात् युद्ध के लिए सदा ही तत्पर रहते हैं। ऐसे वीर गौओं को खोजने में हमारा सहयोग करें ॥७॥

इन्द्राग्नी तपन्ति माघा अर्यो अरातयः ।
अप द्वेषांस्या कृतं युयुतं सूर्यादधि ॥८॥

हे इन्द्राग्ने ! जो शत्रु हमें दुःख दे रहे हैं, उन्हें आप हमसे दूर रखें। उन दुष्टों को सूर्य के प्रकाश से वंचित करके दण्डित करें ॥८॥

इन्द्राग्नी युवोरपि वसु दिव्यानि पार्थिवा ।
आ न इह प्र यच्छतं रयिं विश्वायुपोषसम् ॥९॥

हे इन्द्रदेव और अग्निदेव ! जो भी धन स्वर्ग और पृथ्वी पर है, वह सब आपके अधीन है। जिस धन से सबका पोषण हो, ऐसा धन आप हमें प्रदान करें ॥६॥

इन्द्राग्नी उक्थवाहसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ।
विश्वाभिर्गीर्भिरा गतमस्य सोमस्य पीतये ॥१०॥

हे इन्द्रदेव और अग्निदेव ! आप सामगान एवं स्तोत्रों को सुनकर प्रसन्न होने वाले हैं । आप हमारी स्तुतियों को सुनकर इस सोमरस का पान करने के लिए आएँ ॥१०॥

सूक्त ६०

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इंद्राग्नि । छंद – गायत्री; १-३, १ त्रिष्टुप, १४ वृहती , १५ अनुष्टुप

श्नथद्वृत्रमुत सनोति वाजमिन्द्रा यो अग्नी सहुरी सपर्यात् ।
इरज्यन्ता वसव्यस्य भूरेः सहस्तमा सहसा वाजयन्ता ॥१॥

सूर्योदय के समय जो साधक इन्द्र और अग्निदेवों की उपासना करते हैं, वे इन दोनों सामर्थ्यवान् देवों की कृपा से शत्रु का नाश करके अन्न और धन प्राप्त करते हैं ॥१॥

ता योधिष्टमभि गा इन्द्र नूनमपः स्वरुषसो अग्न ऊव्व्हाः ।
दिशः स्वरुषस इन्द्र चित्रा अपो गा अग्ने युवसे नियुत्वान् ॥२॥

हे इन्द्र और अग्निदेवो ! आप गौओं, जल प्रवाह, प्रकाश एवं उषा को उठाकर दूर ले जाने वालों से संग्राम करके उन्हें नष्ट करें। आप अपने भक्तों को, श्रेष्ठ प्रकाश, गौएँ एवं उत्तम प्रकार का जल प्रदान करें ॥२॥

आ वृत्रहणा वृत्रहभिः शुष्मैरिन्द्र यातं नमोभिरग्ने अर्वाक् ।
युवं राधोभिरकवेभिरिन्द्राग्ने अस्मे भवतमुत्तमेभिः ॥३॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्र और अग्निदेवो ! शत्रु को नष्ट करने वाले सामर्थ्य के साथ अन्न लेकर आप हमारे निकट आएँ। आप दोनों अनिन्द्य एवं श्रेष्ठ धन सहित हमारे पास पधारें ॥३॥

ता हुवे ययोरिदं पप्ने विश्वं पुरा कृतम् ।
इन्द्राग्नी न मर्धतः ॥४॥

इन्द्रदेव और अग्निदेव का विश्व निर्माण में पहले से सहयोग रहा है । इस कारण उनकी प्रशंसा करते हुए हम उनका आवाहन करते हैं। वे इन्द्र और अग्निदेव स्तोता और याजकों की रक्षा करते हैं ॥४॥

उग्रा विघनिना मृध इन्द्राग्नी हवामहे ।
ता नो मृळात ईदृशे ॥५॥

उग्र शत्रु को संग्राम में विदीर्ण करने वाले, जो इन्द्र और अग्निदेव हैं, उनका हम आवाहन करते हैं । वे दोनों देव हमें सफल और सुखी बनाएँ ॥५॥

हतो वृत्राण्यार्या हतो दासानि सत्पती ।
हतो विश्वा अप द्विषः ॥६॥

जो इन्द्रदेव और अग्निदेव दुष्ट असुरों की दुष्टता का संहार करते हैं एवं सज्जनों की रक्षा करते हैं, उन्हीं देवों ने सब शत्रुओं का विनाश किया है ॥६॥

इन्द्राग्नी युवामिमेऽभि स्तोमा अनूषत ।
पिबतं शम्भुवा सुतम् ॥७॥

हे सुखप्रदाता इन्द्रदेव और अग्निदेव ! ये स्तोतागण आप दोनों की वन्दना करते हैं। आप दोनों सोमरस का पान करें ॥७॥

या वां सन्ति पुरुस्पृहो नियुतो दाशुषे नरा ।
इन्द्राग्नी ताभिरा गतम् ॥८॥

जगत् के नायक हे इन्द्रदेव और अग्निदेवे ! याजकों द्वारा प्रशंसा किये जाते हुए, आप दोनों उनसे प्रदत्त हविष्यान्न के लिए यज्ञशाला में अपने द्रुतगामी वाहन (अश्व) की सहायता से पधारें तथा दानदाताओं की सहायता करें ॥८॥

ताभिरा गच्छतं नरोपेदं सवनं सुतम् ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥९॥

हे सृष्टि के नायक इन्द्रदेव और अग्निदेव ! विधिपूर्वक पवित्रता को प्राप्त, इस सोमरस के पास, इसका पान करने के लिए अपने वाहनों के साथ पधारें ॥९॥

तमीळिष्व यो अर्चिषा वना विश्वा परिष्वजत् ।
कृष्णा कृणोति जिह्वया ॥१०॥

जिन अग्निदेव की प्रचण्ड ज्वालाएँ सब वनों को अपनी चपेट में लेकर ज्वालारूप जिह्वा से काला कर देती हैं; उन शक्तिशाली अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं ॥१०॥

य इद्ध आविवासति सुम्नमिन्द्रस्य मर्त्यः ।
द्युम्नाय सुतरा अपः ॥११॥

जो मनुष्य प्रज्वलित अग्नि में इन्द्रदेव के लिए आनन्दप्रद आहुति अर्पित करते हैं, उनकी तेजस्विता एवं अन्न वृद्धि के लिए इन्द्रदेव जल-वर्षा करते हैं ॥११॥

ता नो वाजवतीरिष आशून्पिपृतमर्वतः ।
इन्द्रमग्निं च वोळ्हवे ॥१२॥

हे इन्द्र और अग्निदेवो ! आप दोनों (यजमान की) उन्नति के लिए शक्तिवर्धक अन्न और शीघ्र गतिशील अश्व प्रदान करें ॥१२॥

उभा वामिन्द्राग्नी आहुवध्या उभा राधसः सह मादयध्यै ।
उभा दाताराविषां रयीणामुभा वाजस्य सातये हुवे वाम् ॥१३॥

हे इन्द्राग्ने ! हम, आप दोनों का (यज्ञ में) आवाहन करते हैं। आपको (हविष्यान्नरूपी) धन प्रदान करके प्रसन्न करते हैं। अन्न एवं धन प्राप्ति के लिए हम आप दोनों को यज्ञ में आवाहित करते हैं ॥१३॥

आ नो गव्येभिरश्व्यैर्वसव्यैरुप गच्छतम् ।
सखायौ देवौ सख्याय शम्भुवेन्द्राग्नी ता हवामहे ॥१४॥

हे इन्द्र और अग्निदेवो ! हम मित्रता के लिए आपका आवाहन करते हैं। आप दोनों मित्ररूप में हमारे पास गौएँ, घोड़े और धन सहित आएँ ॥१४॥

इन्द्राग्नी शृणुतं हवं यजमानस्य सुन्वतः ।
वीतं हव्यान्या गतं पिबतं सोम्यं मधु ॥१५॥

हे इन्द्र और अग्निदेवो ! आप सोमरस तैयार करने वाले एवं यज्ञकर्ता की स्तुति सुनकर हवि की इच्छा से आएँ और सोमरस का पान करें ॥१५॥

सूक्त ६१

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – सरस्वती । छंद – गायत्री; १-३, १३ जगती, १४ त्रिष्टुप

इयमददाद्रभसमृणच्युतं दिवोदासं वध्र्यश्वाय दाशुषे ।
या शश्वन्तमाचखादावसं पणिं ता ते दात्राणि तविषा सरस्वति ॥१॥

सरस्वती देवी ने आहुति देने वाले 'वध्र्यश्व को, धैर्यवान्, ऋणमुक्त होने वाला पुत्र 'दिवोदास' प्रदान किया, जिसने 'पणि' नामक कष्ट देने वाले कंजूस का नाश किया । हे सरस्वती देवि ! आपके दान महान् हैं ॥१॥

इयं शुष्मेभिर्बिसखा इवारुजत्सानु गिरीणां तविषेभिरूर्मिभिः ।
पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेम धीतिभिः ॥२॥

जो सरस्वती देवी अपने बलवान् वेग से कमलनाल की तरह पर्वत के तटों को तोड़ देती हैं, हम उन सरस्वती देवी की भक्ति और सेवा करते हैं, वे हमारी रक्षा करें ॥२॥

सरस्वति देवनिदो नि बर्हय प्रजां विश्वस्य बृसयस्य मायिनः ।
उत क्षितिभ्योऽवनीरविन्दो विषमेभ्यो अस्रवो वाजिनीवति ॥३॥

हे सरस्वती देवि ! आपने देवताओं की निन्दा करने वाले को नष्ट किया। आप उसी तरह कपटी-दुष्टों का नाश करें । मानवों के लाभ के लिए अपने संरक्षित भू-भाग प्रदान किए हैं। हे वाजिनीवति ! आपने ही मनुष्यों के लिए जल प्रवाहित किया है ॥३॥

प्र णो देवी सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती ।
धीनामवित्र्यवतु ॥४॥

सरस्वती देवी अनेक प्रकार के अन्न देने से अन्नवाली कहलाती हैं। वे रक्षा करती हैं। वे देवि हमें उत्तम प्रकार से तृप्त करें ॥४॥

यस्त्वा देवि सरस्वत्युपब्रूते धने हिते ।
इन्द्रं न वृत्रतूर्ये ॥५॥

जिस प्रकार इन्द्रदेव को युद्ध में शत्रुओं से रक्षा करने के निमित्त बुलाते हैं, उसी प्रकार युद्ध के प्रारम्भ के समय जो आपका आवाहन करता है, आप उसकी रक्षा करती हैं ॥५॥

त्वं देवि सरस्वत्यवा वाजेषु वाजिनि ।
रदा पूषेव नः सनिम् ॥६॥

हे सरस्वती देवि ! आप बल से युक्त हैं। आप संग्राम के समय हमारी रक्षा करें एवं पूषनुदेव की तरह हमें धन प्रदान करें ॥६॥

उत स्या नः सरस्वती घोरा हिरण्यवर्तनिः ।
वृत्रघ्नी वष्टि सुष्टुतिम् ॥७॥

स्वर्णिम रथ पर आरूढ़, प्रचण्ड वीरता धारण करने वाली देवी सरस्वती शत्रुओं का नाश करती हैं और स्तोताओं की रक्षा करती हैं ॥७॥

यस्या अनन्तो अह्रुतस्त्वेषश्चरिष्णुरर्णवः ।
अमश्चरति रोरुवत् ॥८॥

उन (सरस्वती) का निरन्तर प्रवाहित जल, वेग से गमन करता हुआ, गर्जन (शब्द) करता है ॥८॥

सा नो विश्वा अति द्विषः स्वसॄरन्या ऋतावरी ।
अतन्नहेव सूर्यः ॥९॥

जिस प्रकार सूर्यदेव प्रकाश फैलाते हैं, वैसे ही देवी सरस्वतीं शत्रुओं को परास्त करती हुई बहिनों सहित आती हैं ॥९॥

उत नः प्रिया प्रियासु सप्तस्वसा सुजुष्टा ।
सरस्वती स्तोम्या भूत् ॥१०॥

प्रियजनों में अतिप्रिय, सप्त बहिनों (सात छन्दों अथवा सहायक धाराओं) से युक्त देवी सरस्वती हमारे लिए स्तुत्य हैं ॥१०॥

आपप्रुषी पार्थिवान्युरु रजो अन्तरिक्षम् ।
सरस्वती निदस्पातु ॥११॥

जिन देवी सरस्वती ने स्वर्ग और पृथ्वी को अपने तेज से भर दिया है, वे हमें निन्दा करने वालों से बचाएँ ॥११॥

त्रिषधस्था सप्तधातुः पञ्च जाता वर्धयन्ती ।
वाजेवाजे हव्या भूत् ॥१२॥

जो देवी सरस्वती तीन स्थानों (प्रदेशों) में रहने वाली (बहने वाली), सप्त धारक शक्तियों से युक्त, पाँचों वर्ण के मनुष्यों को बढ़ाने वाली हैं, वे संग्राम के समये आवाहन करने योग्य हैं ॥१२॥

प्र या महिम्ना महिनासु चेकिते द्युम्नेभिरन्या अपसामपस्तमा ।
रथ इव बृहती विभ्वने कृतोपस्तुत्या चिकितुषा सरस्वती ॥१३॥

जो देवी सरस्वती अपने महत्त्व और तेज के प्रभाव के कारण अन्य नदियों में श्रेष्ठ हैं। अन्य नदियों के प्रवाहों की अपेक्षा इनका प्रवाह अधिक तीव्र गति वाले रथ के वेग के समान है; वे गुणवती देवी सरस्वती विद्वान् स्तोताओं द्वारा स्तुत्य हैं ॥१३॥

सरस्वत्यभि नो नेषि वस्यो माप स्फरीः पयसा मा न आ धक् ।
जुषस्व नः सख्या वेश्या च मा त्वत्क्षेत्राण्यरणानि गन्म ॥१४॥

हे सरस्वती देवि ! आप हमें उत्तम धन प्रदान करें । हमें आपके प्रवाह कष्ट न दें । आप हमारे बन्धुत्व को स्वीकार करें । म निकृष्ट स्थान को न जाएँ ॥१४॥

सूक्त ६२

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – आश्विनौ । छंद – त्रिष्टुप

स्तुषे नरा दिवो अस्य प्रसन्ताश्विना हुवे जरमाणो अर्कैः ।
या सद्य उस्रा व्युषि ज्मो अन्तान्युयूषतः पर्युरू वरांसि ॥१॥

हम उन दोनों अश्विनीकुमारों की उत्तम स्तोत्रों से स्तुति करते हैं, जो अश्विनीकुमार इस दृश्य जगत् को प्रकाशित करते हैं। वे बलवान् शत्रुओं का नाश करते हैं ॥१॥

ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोभिः ।
पुरू वरांस्यमिता मिमानापो धन्वान्यति याथो अज्रान् ॥२॥

जब दोनों अश्विनीकुमार अपने तेज़ को बढ़ाते हुए यज्ञशाला में आते हैं, उस समय उनके तेज से रथ भी प्रदीप्त हो उठता है । वे मरुभूमि को छोड़कर अपने अश्वों को जल के निकट ले जाते हैं ॥२॥

ता ह त्यद्वर्तिर्यदरध्रमुग्रेत्था धिय ऊहथुः शश्वदश्वैः ।
मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप मन जैसे तीव्रगामी, इशारे पर चलने वाले अश्वों के द्वारा अपने स्तोताओं को स्वर्ग तक पहुँचाते हैं । आहुति देने वाले याजक को कष्ट पहुँचाने वाले को चिर निद्रा (मृत्यु) में सुला देते हैं ॥३॥

ता नव्यसो जरमाणस्य मन्मोप भूषतो युयुजानसप्ती ।
शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ता होता यक्षत्प्रत्नो अध्रुग्युवाना ॥४॥

अद्रोही होकर प्राचीन होता अग्निदेव तथा दोनों अश्विनीकुमारों के लिए हवि अर्पित करने हैं। वे दोनों अश्विनीकुमार स्तोताओं के नवीन, मनन करने योग्य स्तोत्रों को सुनकर पुष्टिकारक एवं बलवर्धक उत्तम अन्न को, अश्वों के द्वारा लेकर स्तोताओं के समीप पहुँचे ॥४॥

ता वल्गू दस्रा पुरुशाकतमा प्रत्ना नव्यसा वचसा विवासे ।
या शंसते स्तुवते शम्भविष्ठा बभूवतुर्गृणते चित्ररातीं ॥५॥

विस्तृत स्तुति करने वाले स्तोताओं को जो धन एवं सुख देते हैं, ऐसे सुन्दर, शत्रुनाशक, सामर्थ्यवान् पुरातन अश्विनीकुमारों की हम नवीन स्तोत्रों से स्तुति करते हैं ॥५॥

ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समुद्रात्तुग्रस्य सूनुमूहथू रजोभिः ।
अरेणुभिर्योजनेभिर्भुजन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरुपस्थात् ॥६॥

रक्षा करने वाले वे (दोनों अश्विनीकुमार) तुग्र (इस नाम के राजा अथवा लेन-देन करने वाले के पात्र भुज्य (नामक व्यक्ति अथवा भोज्य-उपयोगी) को पक्षी के समान वेगवान् रथ (यान) द्वारा जल की गोद

में उठाकर धन्न रहित मार्ग से समुद्र (सागर अथवा आकाश) के पार लाने में समर्थ हुए ॥६॥

वि जयुषा रथ्या यातमद्रिं श्रुतं हवं वृषणा वध्रिमत्याः ।
दशस्यन्ता शयवे पिप्यथुर्गामिति च्यवाना सुमतिं भुरण्यू ॥७॥

बलवान् दोनों अश्विनीकुमार विजय रथ पर आरूढ़ होकर, पर्वतों (या मेघा) को भी लांघ जाते हैं। आप उत्तम मत वाले की प्रार्थना को सुनें एवं शयु के लिए गौ को पयस्विनी बनाएँ ॥७॥

यद्रोदसी प्रदिवो अस्ति भूमा हेळो देवानामुत मर्त्यत्रा ।
तदादित्या वसवो रुद्रियासो रक्षोयुजे तपुरघं दधात ॥८॥

द्यावा-पृथिवी, आदित्यगण, मरुद्गण, दोनों अश्विनीकुमारों, वसुओं आदि देवगणों एवं मनुष्यों में जो भीषण रोष है, वह असुरों का संहार करने में प्रयुक्त हो ॥८॥

य ईं राजानावृतुथा विदधद्रजसो मित्रो वरुणश्चिकेतत् ।
गम्भीराय रक्षसे हेतिमस्य द्रोघाय चिद्वचस आनवाय ॥९॥

जो याजक इन अश्विनीकुमारों की स्तुति करते हैं, उनके ऐसे पावन यज्ञ कर्म को मित्रावरुणदेव जानते हैं । ऐसे याजक असुरों का, अपने अस्त्रों द्वारा संहार करने में समर्थ होते हैं ॥६॥

अन्तरैश्वक्रैस्तनयाय वर्तिर्द्युमता यातं नृवता रथेन ।
सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य वनुष्यतामपि शीर्षा ववृक्तम् ॥१०॥

हे देव अश्विनीकुमारो ! आप रथ पर चढ़ कर सन्तान को सुख देने के लिए घर आएँ । मानवों को कष्ट पहुँचाने वाले दुष्टों का सिर, अपने उग्र क्रोध के द्वारा तिरस्कार करते हुए काट डालें ॥१०॥

आ परमाभिरुत मध्यमाभिर्नियुद्भिर्यातमवमाभिरर्वाक् ।
दव्ह्स्य चिद्गोमतो वि व्रजस्य दुरो वर्तं गृणते चित्रराती ॥११॥

हे देव अश्विनीकुमारो ! हम आपकी स्तुति करते हैं। आप स्तुति सुनकर हमारे पास आएँ। हमें गौओं से भरा गोष्ठ एवं दिव्य धन प्रदान करें ॥११॥

सूक्त ६३

ऋषिः बार्हस्पत्यो भारद्वाजः
देवता – आश्विनौ । छंद – त्रिष्टुप, १ विराट, ११ एकपदा त्रिष्टुप

क्व त्या वल्गू पुरुहूताद्य दूतो न स्तोमोऽविदन्नमस्वान् ।
आ यो अर्वाङ्नासत्या ववर्त प्रेष्ठा ह्यसथो अस्य मन्मन् ॥१॥

दोनों अश्विनीकुमार देव जहाँ भी हों, वहीं यह आहुति सहित हमारे आकर्षक स्तोत्र, उन्हें दूत की तरह बुलाने के लिए पहुँचे । वे दोनों स्तुत्यदेव हमारी ओर आएँ एवं स्तुति से आनन्दित हों ॥१॥

अरं मे गन्तं हवनायास्मै गृणाना यथा पिबाथो अन्धः ।
परि ह त्यद्वर्तिर्याथो रिषो न यत्परो नान्तरस्तुतुर्यात् ॥२॥

हे अश्विनीकुमारदेवो ! आप हमारी स्तुति से प्रसन्न होकर हमारे घर आएँ एवं सोमपान करें। समीपस्थ एवं दूरस्थ शत्रुओं से हमारे इस घर की रक्षा करें ॥२॥

अकारि वामन्धसो वरीमन्नस्तारि बर्हिः सुप्रायणतमम् ।
उत्तानहस्तो युवयुर्ववन्दा वां नक्षन्तो अद्रय आञ्जन् ॥३॥

हे अश्विद्वय सोमरस तैयार है ।कुश के आसन बिछे हुए हैं । हम स्तोतागण आपको स्तुति करके बुलाते हैं ॥३॥

ऊर्ध्वो वामग्निरध्वरेष्वस्थात्प्र रातिरेति जूर्णिनी घृताची ।
प्र होता गूर्तमना उराणोऽयुक्त यो नासत्या हवीमन् ॥४॥

हे अश्विनीकुमारदेवो ! यज्ञशाला में अग्नि आपके निमित्त प्रदीप्त हैं । घृत से भरा पात्र आगे स्थित हैं। अनेकों विशेष कार्य करने में समर्थ, दानी होता मनोयोगपूर्वक आपके लिए आहुति अर्पित करते हैं ॥४॥

अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुभुजा शतोतिम् ।
प्र मायाभिर्मायिना भूतमत्र नरा नृतू जनिमन्यज्ञियानाम् ॥५॥

हे आजानुबाहु अश्विद्वय ! सूर्यपुत्री अर्थात् उषा आपके अनेक प्रकार से सुरक्षित रथ पर आरूढ़ होती हैं । आप देवों की प्रजाओं का नेतृत्व करें ॥५॥

युवं श्रीभिर्दर्शताभिराभिः शुभे पुष्टिमूहथुः सूर्यायाः ।
प्र वां वयो वपुषेऽनु पप्तन्नक्षद्वाणी सुष्टुता धिष्ण्या वाम् ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सूर्या (उषा) की शोभा के लिए पुष्ट हों । आप अपनी एवं उनकी शोभा और कल्याण के लिए रथ पर पुष्टिकारक अन्न रखते हैं। आप तक हमारी उत्तम स्तुतियाँ पहुँचें ॥६॥

आ वां वयोऽश्वासो वहिष्ठा अभि प्रयो नासत्या वहन्तु ।
प्र वां रथो मनोजवा असर्जीषः पृक्ष इषिधो अनु पूर्वीः ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपका तीव्रगामी रथ अन्न के लिए गमन करता है । मन की गति वाले आपके अश्व आप दोनों को अन्न के साथ हमारे निकट लाएँ ॥७॥

पुरु हि वां पुरुभुजा देष्णं धेनुं न इषं पिन्वतमसक्राम् ।
स्तुतश्च वां माध्वी सुष्टुतिश्च रसाश्च ये वामनु रातिमग्मन् ॥८॥

हे दोनों अश्विनीकुमारो ! आप बड़ी भुजाओं वाले हैं। आपके पास अपरिमित धन है । आप हमें स्थिर मन वाली गौएँ एवं अन्न दें । आपके लिए मधुर सोमरस तैयार है । स्तोतागण आपकी स्तुति करते हैं ॥८॥

उत म ऋज्रे पुरयस्य रघ्वी सुमीव्ह्े शतं पेरुके च पक्का ।
शाण्डो दाद्धिरणिनः स्मद्दिष्टीन्दश वशासो अभिषाच ऋष्वान् ॥९॥

'पुरय' (नगर के नियन्ता) की दो द्रुतगामी अश्वाएँ, 'सुमीव्ह्' (धन-धान्य युक्त अथवा सेचनकर्ता) की सौ गौएँ तथा 'पेरुक' (आदित्य) द्वारा पकाये गये फल (पदार्थ) हमें प्राप्त हैं। 'शाण्ड' (शान्ति या कल्याणप्रद) द्वारा प्रदत्त स्वर्णालंकृत, दर्शनीय, शत्रुजयी दस रथ हमारे पास हैं ॥९॥

सं वां शता नासत्या सहस्राश्वानां पुरुपन्था गिरे दात् ।
भरद्वाजाय वीर नू गिरे दाद्धता रक्षांसि पुरुदंससा स्युः ॥१०॥

हे दोनों अश्विनीकुमारदेवो ! आपके स्तोता को 'पुरूपन्था' राजा ने सैकड़ों-हजारों घोड़े दिये । हे देवो ! यह सब आप भरद्वाज को भी प्रदान करें और असुरों का नाश करें ॥१०॥

आ वां सुम्ने वरिमन्त्सूरिभिः ष्याम् ॥११॥

हे दोनों अश्विनीकुमारो ! आपकी कृपा से हम श्रेष्ठ विद्वानों के साथ सुखपूर्वक रहें ॥११॥

सूक्त ६४

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – उषा । छंद – त्रिष्टुप

उदु श्रिय उषसो रोचमाना अस्थुरपां नोर्मयो रुशन्तः ।
कृणोति विश्वा सुपथा सुगान्यभूदु वस्वी दक्षिणा मघोनी ॥१॥

उषाएँ धवल वर्ण वाली हैं, ये जल की लहरों के समान चमक के साथ ऊपर को आ रहीं हैं। ये उषाएँ धन-ऐश्वर्यवान् हैं। वे सभी मार्गों को प्रकाशित करके सरलता से गमन करने योग्य बनाती हैं ॥१॥

भद्रा दद्दक्ष उर्विया वि भास्युत्ते शोचिर्भानवो द्यामपप्तन् ।
आविर्वक्षः कृणुषे शुम्भमानोषो देवि रोचमाना महोभिः ॥२॥

हे उषा देवि ! आप कल्याणकारी दीखती हैं। आपकी किरणें आभामय होती हैं । हे दिव्य उषा देवि ! आप चमकती किरणों से सुशोभित अपने अन्त: स्थल को प्रकट कर, प्रकाश प्रदान कर सबका कल्याण करती हैं ॥२॥

वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो गावः सुभगामुर्विया प्रथानाम् ।
अपेजते शूरो अस्तेव शत्रून्बाधते तमो अजिरो न वोव्ह्रा ॥३॥

हे उषादेवि ! लाल आभायुक्त तेजस्वी रश्मियाँ आपको वहन कर ऊपर लाती हैं । जैसे घोड़े पर सवार अचूक बाण चलाने वाला शूरवीर, शत्रु को दूर भगाता है, वैसे ही आप भी अन्धकार को दूर कर देती हैं ॥३॥

सुगोत ते सुपथा पर्वतेष्ववाते अपस्तरसि स्वभानो ।
सा न आ वह पृथुयामन्नृष्वे रयिं दिवो दुहितरिषयध्यै ॥४॥

हे उषादेवि ! आप स्वयं प्रकाशित होकर अन्तरिक्ष में विचरण करती हैं, तब आपके लिए मार्ग विहीन पर्वतीय प्रदेश भी सुगम हो जाते हैं । हे स्वर्गलोक की कन्या ! आप बड़े रथ में हमारे लिए धन लाएँ ॥४॥

सा वह योक्षभिरवातोषो वरं वहसि जोषमनु ।
त्वं दिवो दुहितर्या ह देवी पूर्वहूतौ मंहना दर्शता भूः ॥५॥

हे स्वर्ग की कन्या उषादेवि ! आप प्रथम हवन के समय दर्शनीय एवं पूजनीय हैं । आप तीव्रगामी, इच्छानुसार चलने वाले बैलों द्वारा खींचने वाले रथ में हमारे लिए श्रेष्ठ धन लाएँ ॥५॥

उत्ते वयश्चिद्वसतेरपप्तन्नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।
अमा सते वहसि भूरि वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय ॥६॥

हे उषादेवि ! आपके प्रकाशित होने पर पक्षी अपने निवास से बाहर आते हैं एवं अन्नोपार्जन करने वाले भी जाग कर कर्म में उद्यत होते हैं । हे उषादेवि ! जो मनुष्य आपके प्राकट्य के साथ रहता हैं । (कर्म को उद्यत होता हैं) उसे पर्याप्त धन प्राप्त होता है ॥६॥

सूक्त ६५

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – उषा । छंद – त्रिष्टुप

एषा स्या नो दुहिता दिवोजाः क्षितीरुच्छन्ती मानुषीरजीगः ।
या भानुना रुशता राम्यास्वज्ञायि तिरस्तमसश्चिदक्तून् ॥१॥

यह स्वर्ग में उत्पन्न हुई दिव्य कन्या अर्थात् देवी उषा अपनी तेजस्वी-प्रकाशित रश्मियों के द्वारा अन्धकार को दूर करतीं एवं मानवों की प्रजा को जगाती हैं ॥१॥

वि तद्ययुररुणयुग्भिरश्वैश्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्ररथाः ।
अग्रं यज्ञस्य बृहतो नयन्तीर्वि ता बाधन्ते तम ऊर्म्यायाः ॥२॥

अरुण वर्ण के अश्वों वाले विशाल चन्द्ररथ पर बैठी देवी उषा यज्ञ के पहले ही विशेष गति से अन्तरिक्ष में विचरण करती हैं। वे अपने विलक्षण प्रकाश से अन्धकार को नष्ट कर रही हैं ॥२॥

श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीर्नि दाशुष उषसो मर्त्याय ।
मघोनीर्वीरवत्पत्यमाना अवो धात विधते रत्नमद्य ॥३॥

धनवान् एवं उत्तम प्रकार से गमन करने वाली उषाएँ, हव्य दान करने वाले को अन्न, बल, यश और रस प्रदान करती हैं । हे उषाओ ! आप हमें भी अन्न और सेवा करने वाले वीर पुत्रों से युक्त रत्न आज हीं प्रदान करें ॥३॥

इदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा वीराय दाशुष उषासः ।
इदा विप्राय जरते यदुक्था नि ष्म मावते वहथा पुरा चित् ॥४॥

हे उषाओ ! जैसे आपने अपने स्तोताओं को पहले धन प्रदान किया है, वैसे ही इस समय भी आप हविदाता एवं स्तोताओं को वे रल प्रदान करें, जो आपके पास हैं ॥४॥

इदा हि त उषो अद्रिसानो गोत्रा गवामङ्गिरसो गृणन्ति ।
व्यर्केण बिभिदुर्ब्रह्मणा च सत्या नृणामभवद्देवहूतिः ॥५॥

हे पर्वत शिखरों पर दर्शनीय उषादेवि ! आपकी कृपा से ही अंगिराओं ने गौओं के समूह को खोला है। मनुष्यों की ईश-प्रार्थना अब फलवती हुई है ॥५॥

उच्छा दिवो दुहितः प्रत्नवन्नो भरद्वाजवद्विधते मघोनि ।
सुवीरं रयिं गृणते रिरीह्युरुगायमधि धेहि श्रवो नः ॥६॥

हे सूर्य पुत्री उषा ! आप पूर्व की तरह अब भी अन्धकार को मिटाएँ । जैसे आपने भरद्वाज को धन दिया हैं, वैसे ही हम स्तोताओं को भी सुपुत्र सहित अन्न एवं धन प्रदान करें ॥६॥

सूक्त ६६

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – मरुत: । छंद – त्रिष्टुप

वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम् ।
मर्तेष्वन्यद्दोहसे पीपाय सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ॥१॥

ज्ञानी जन उसे (भिन्न होते हुए भी) समान धेनु (धारण करने वाले) नाम से जानते हैं । एक को मनुष्यों के लिए दुहा जाता है तथा दूसरा तेजस्वी रूप अन्तरिक्ष से दूध की भाँति ही क्षरित होता है ॥१॥

ये अग्नयो न शोशुचन्निधाना द्विर्यत्त्रिर्मरुतो वावृधन्त ।
अरेणवो हिरण्ययास एषां साकं नृम्णैः पौंस्येभिश्च भूवन् ॥२॥

जो इच्छा से बढ़ने वाले, अग्निदेव जैसे तेजस्वी एवं स्वर्णाभूषणों से अलंकृत मरुद्गण हैं, वे धन एवं बल के साथ प्रकट होते हैं ॥२॥

रुद्रस्य ये मीव्हुषः सन्ति पुत्रा याँश्चो नु दाधृविर्भरध्यै ।
विदे हि माता महो मही षा सेत्पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात् ॥३॥

अन्तरिक्ष में रहने वाले मरुद्गणों के पिता रुद्र और माता महामहिमामयी पृथ्वी हैं। ये पृथ्वी ही सबके कल्याण के लिए जल, अन्न को अपने गर्भ में धारण करती हैं ॥३॥

न य ईषन्ते जनुषोऽया न्वन्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः ।
निर्यद्दुह्रे शुचयोऽनु जोषमनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः ॥४॥

जो लोगों से दूर न जाकर उनके अन्त:करण में निवास करते हैं और दोष को दूर कर पवित्र बनाते हैं, जो अपने तेज से इच्छानुसार शरीर को बलवान् बनाते हैं, वे पवित्र, वीर मरुत् इच्छानुकूल जल-वृष्टि करते हैं ॥४॥

मक्षू न येषु दोहसे चिदया आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ।
न ये स्तौना अयासो मह्ना नू चित्सुदानुरव यासदुग्रान् ॥५॥

जिन शूरवीरों का नाम मरुद्गण है, वे स्तोताओं के पोषण के लिए उत्तम धन प्रदान करते हैं। वे अपने उग्र क्रोध से चोरों और दस्युओं को परास्त कर नष्ट करते हैं ॥५॥

त इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके ।
अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिरामवत्सु तस्थौ न रोकः ॥६॥

वे मरुद्गण महान् वीर हैं । द्यावा-पृथिवीं में उनकी साहसी सेना सुसज्जित रहती हैं । ये स्वदीप्ति से तेजस्वी हैं। इनके मार्ग में कोई बाधा नहीं डाल सकता ॥६॥

अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्वनश्वश्चिद्यमजत्यरथीः ।

अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन् ॥७॥

हे मरुद्गणो ! अश्वरहित, बिना सारथी वाला, बिना लगाम (रास) वाला (होकर भी), दोषरहित जल प्रदान करने वाला, आपका रथ द्यावा-पृथिवी एवं अन्तरिक्ष में विचरता है ॥७॥

नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति मरुतो यमवथ वाजसातौ ।
तोके वा गोषु तनये यमप्सु स व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ॥८॥

हे मरुद्गणो ! संग्राम में जिनके आप रक्षक हैं, उन्हें कोई नहीं मार सकता । पुत्रों सहित जिसके आप रक्षक हैं, वह शत्रुओं की गौओं को भी जीत सकता है ॥८॥

प्र चित्रमर्कं गृणते तुराय मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ।
ये सहांसि सहसा सहन्ते रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ॥९॥

हे अग्निदेव ! जो मरुद्गण अपने बल-पराक्रम से शत्रुओं को परास्त करते हैं; उनकी हलचल से पृथ्वी भी काँपने लगती है। उन्हीं तीव्रगामी, बलवान्, वीर मरुद्गणों के लिए ही स्तोता अद्भुत स्तोत्रों से स्तुति करते हैं ॥९॥

त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत्तृषुच्यवसो जुह्वो नाग्नेः ।
अर्चत्रयो धुनयो न वीरा भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः ॥१०॥

अग्नि सदृश प्रदीप्त रहने वाले, शत्रुओं को कैंपाने वाले एवं यज्ञ के समान तेजस्वी ये मरुद्गण कभी पराभूत नहीं होते ॥१०॥

तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ।
दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृधन् ॥११॥

हम शस्त्रधारी, पराक्रमी, रुद्र पुत्र मरुद्गणों की स्तुति करते हैं। ये स्तुतियाँ बलवान् होकर मरुद्गणों को और अधिक बल प्रदान करती हैं ॥११॥

सूक्त ६७

ऋषिः बार्हस्पत्यो भारद्वाजः
देवता – मित्रवरुणौ । छंद – त्रिष्टुप

विश्वेषां वः सतां ज्येष्ठतमा गीर्भिर्मित्रावरुणा वावृधध्यै ।
सं या रश्मेव यमतुर्यमिष्ठा द्वा जनाँ असमा बाहुभिः स्वैः ॥१॥

हे अतिश्रेष्ठ मित्रावरुणदेवो ! आपकी हम स्तुति करते हैं। आप अपने बाहुबल से सभी मनुष्यों को अनुशासित करते हैं ॥१॥

इयं मद्वां प्र स्तृणीते मनीषोप प्रिया नमसा बर्हिरच्छ ।
यन्तं नो मित्रावरुणावधृष्टं छर्दिर्यद्वां वरूथ्यं सुदानू ॥२॥

हे मित्रावरुणदेवो ! हम स्तोताओं द्वारा की जाने वाली ये स्तुतियाँ आपको प्रवृद्ध करती हैं। आपके लिए हमने कुश का आसन बिछाया है । आप प्रसन्न होकर हमें ऐसा निवास दें, जिससे हमारी रक्षा हो सके ॥२॥

आ यातं मित्रावरुणा सुशस्त्युप प्रिया नमसा हूयमाना ।
सं यावप्रः स्थो अपसेव जनाञ्छुधीयतश्चिद्यतथो महित्वा ॥३॥

हे मित्रावरुणदेवो ! आपका हम नमस्कारपूर्वक आवाहन करते हैं एवं आपकी स्तुति करते हैं। आप आएँ और जिस तरह आप सत्कर्मों में प्रवृत्त हैं, उसी तरह हमें भी धन एवं अन्न प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील करें और हमें सन्तुष्ट करें ॥३॥

अश्वा न या वाजिना पूतबन्धू ऋता यद्गर्भमदितिर्भरध्यै ।
प्र या महि महान्ता जायमाना घोरा मर्ताय रिपवे नि दीधः ॥४॥

माता अदिति ने गर्भ में धारण करके सत्य स्वरूप, बलवान्, पवित्र भाइयों के रूप में आपको पोषित किया है। इसलिए आप उत्पन्न होते ही शत्रुओं का संहार करने वाले एवं श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ बन गए ॥४॥

विश्वे यद्वां मंहना मन्दमानाः क्षत्रं देवासो अदधुः सजोषाः ।
परि यद्भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः ॥५॥

जब आपकी महानता के कारण आनन्दित होकर सभी देवगण प्रीतिपूर्वक क्षात्रबल धारण करते हैं, तब आप सब ओर से आकाश एवं पृथ्वी को घेर लेते हैं। आप किसी के द्वारा दमित नहीं होते हैं ॥५॥

ता हि क्षत्रं धारयेथे अनु द्यून्दंहेथे सानुमुपमादिव द्योः ।
दव्ह्रो नक्षत्र उत विश्वदेवो भूमिमातान्द्यां धासिनायोः ॥६॥

वे (दोनों मित्रावरुण देव) अन्तरिक्ष को, सूर्य को एवं नक्षत्रों को दृढ़ता से धारण किये हैं। वे देव प्रतिदिन क्षात्र तेज को बढ़ाते हैं। मानवों को पर्याप्त अन्न मिले, इसलिए द्यावा-पृथिवी का विस्तार करते हैं ॥६॥

ता विग्रं धैथे जठरं पृणध्या आ यत्सद्म सभृतयः पृणन्ति ।
न मृष्यन्ते युवतयोऽवाता वि यत्पयो विश्वजिन्वा भरन्ते ॥७॥

हे मित्रावरुण देवो ! जब याजक यज्ञशाला (की तैयारी) पूर्ण कर लेते हैं, तब आप उदर पूर्ति के लिए ही आदरपूर्वक प्रेषित अन्न रूप सोम को धारण (ग्रहण) करते हैं। प्रसन्न होकर आप स्वभावत: हीं नदियों को जल से भर देते हैं, जिससे धूल नहीं उड़ती हैं ॥७॥

ता जिह्वया सदमेदं सुमेधा आ यद्वां सत्यो अरतिर्ऋते भूत् ।
तद्वां महित्वं घृतान्नावस्तु युवं दाशुषे वि चयिष्टमंहः ॥८॥

मेधावी जन वाणी द्वारा (स्तुति द्वारा आपसे जल की कामना करते हैं, जैसे आपके यजनकर्ता सत्य मार्ग पर आरूढ़ होते हैं, वैसे ही आप महिमावान् हवि देने वालों के पापों का नाश करें ॥८॥

प्र यद्वां मित्रावरुणा स्पूर्धन्प्रिया धाम युवधिता मिनन्ति ।
न ये देवास ओहसा न मर्ता अयज्ञसाचो अप्यो न पुत्राः ॥९॥

जो आपके प्रिय धाम एवं नियम में बाधा उत्पन्न करते हैं एवं यज्ञ न करके द्वेष करते हैं, ऐसे स्तुति न करने वाले एवं यज्ञ न करने वाले लोग न तो मानव हैं, न देव हैं, उनका आप संहार करें ॥९॥

वि यद्वाचं कीस्तासो भरन्ते शंसन्ति के चिन्निविदो मनानाः ।
आद्वां ब्रवाम सत्यान्युक्था नकिर्देवेभिर्यतथो महित्वा ॥१०॥

कोई स्तोता वाणों द्वारा, कोई विद्वान् मन द्वारा आपको प्रसन्न करते हैं। वास्तव में हम यह सत्य ही कहते हैं। कि आप की महिमा अतुलनीय है ॥१०॥

अवोरित्था वां छर्दिषो अभिष्टौ युवोर्मित्रावरुणावस्कृधोयु ।
अनु यद्वावः स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं यद्रणे वृषणं युनजन् ॥११॥

हे मित्रावरुण देवो ! जब हम स्तोतागण आपकी स्तुति करके आपके लिए सोमरस प्रस्तुत करते हैं, तब आप अपने आश्रय में रहने वाले भक्तों को गौओं से भरा गोष्ठ एवं सुरक्षित निवास प्रदान करते हैं ॥११॥

सूक्त ६८

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्रावरुणौ उषा । छंद – त्रिष्टुप, ९-१० जगती

श्रुष्टी वां यज्ञ उद्यतः सजोषा मनुष्वद्वृक्तबर्हिषो यजध्यै ।
आ य इन्द्रावरुणाविषे अद्य महे सुम्नाय मह आववर्तत् ॥१॥

हे इन्द्र और वरुण देवो ! जो यज्ञ उद्यमी मानवों द्वारा, बहुत से आसन बिछाकर महान् सुख की पूर्ति के लिये किया जाता है, उसी तरह की इच्छापूर्ति के लिए आज यह यज्ञ उत्साहपूर्वक आपके निमित्त किया जा रहा है ॥१॥

ता हि श्रेष्ठा देवताता तुजा शूराणां शविष्ठा ता हि भूतम् ।
मघोनां मंहिष्ठा तुविशुष्म ऋतेन वृत्रतुरा सर्वसेना ॥२॥

हे इन्द्र और वरुण देवो ! आप यज्ञ करने वाले देवों में श्रेष्ठ हैं । आप बल और महान् धन से युक्त हैं । आप सेनाओं एवं ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं । आप दाताओं में श्रेष्ठ एवं शत्रु का संहार करने वाले हैं ॥२॥

ता गृणीहि नमस्येभिः शूषैः सुम्नेभिरिन्द्रावरुणा चकाना ।
वज्रेणान्यः शवसा हन्ति वृत्रं सिषक्त्यन्यो वृजनेषु विप्रः ॥३॥

हे स्तोताओ ! आप इन्द्र और वरुण दोनों देवों की नमस्कारपूर्वक, बल-वर्धक स्तोत्रों से स्तुति करें । इन्द्रदेव वज्र फेंककर वृत्रासुर को मारने वाले हैं एवं वरुणदेव संकट के समय बल के द्वारा रक्षा करते हैं ॥३॥

ग्नाश्च यन्नरश्च वावृधन्त विश्वे देवासो नरां स्वगूर्ताः ।
प्रैभ्य इन्द्रावरुणा महित्वा द्यौश्च पृथिवि भूतमुर्वी ॥४॥

समस्त स्त्रियाँ, पुरुष, देवगण एवं द्यावा-पृथिवी अपने उद्यम से कितने भी बढ़ गये हों, परन्तु इन्द्र और वरुण दोनों देव इन सबसे श्रेष्ठ हैं ॥४॥

स इत्सुदानुः स्ववाँ ऋतावेन्द्रा यो वां वरुण दाशति त्मन् ।
इषा स द्विषस्तरेद्दास्वान्वंसद्रयिं रयिवतश्च जनान् ॥५॥

हे इन्द्र और वरुणदेवो ! आपको हविप्रदान करने वाला याजक, दानदाता और धनवान् होता है । वह यज्ञ करने वाला आपकी कृपा से सुरक्षित रहकर, धन एवं ऐश्वर्ययुक्त पुत्र प्राप्त करता है ॥५॥

यं युवं दाश्वध्वराय देवा रयिं धत्थो वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
अस्मे स इन्द्रावरुणावपि ष्यात्प्र यो भनक्ति वनुषामशस्तीः ॥६॥

हे इन्द्र और वरुण देवो ! जैसा धन आप हविदाता को देते हैजो धन आपसे सुरक्षित है; वैसा ही धन सुरक्षा के लिए हमें प्रदान करें, जिससे हम अपने निन्दकों को दूर कर सकें ॥६॥

उत नः सुत्रात्रो देवगोपाः सूरिभ्य इन्द्रावरुणा रयिः ष्यात् ।
येषां शुष्मः पृतनासु साह्वान्प्र सद्यो द्युम्ना तिरते ततुरिः ॥७॥

हे इन्द्र और वरुण देवो ! हम आपकी स्तुति करने वाले स्तोतागण हैं । आपका देवों द्वारा रक्षित धन हमें भी प्राप्त हो । हम उस सुरक्षित धन-बल से शत्रुओं को तिरस्कृत करके उन्हें जीत लें ॥७॥

नू न इन्द्रावरुणा गृणाना पृङ्क्तं रयिं सौश्रवसाय देवा ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्धोऽपो न नावा दुरिता तरेम ॥८॥

हे इन्द्र और वरुणदेवो ! आप दोनों महान् बलवान् हैं । हम आपकी स्तुति करते हैं। आप हमें यश प्राप्त कराने वाला धन प्रदान करें । जैसे नौका द्वारा जल राशि को पार किया जाता है, वैसे ही हम आपकी कृपा से पापों से तर जायें ॥८॥

प्र सम्राजे बृहते मन्म नु प्रियमर्च देवाय वरुणाय सप्रथः ।
अयं य उर्वी महिना महिव्रतः क्रत्वा विभात्यजरो न शोचिषा ॥९॥

हे मनुष्यो ! वरुणदेव महान् , तेजस्वी, अजर और बड़े कार्य करने वाले हैं; जो वरुणदेव इस पृथ्वी को अपने प्रकाश से प्रकाशित करते हैं, उनकी मननीय स्तोत्रों द्वारा स्तुति करो ॥९॥

इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रता ।
युवो रथो अध्वरं देववीतये प्रति स्वसरमुप याति पीतये ॥१०॥

सोमपायों हे इन्द्र और वरुणदेवो ! आप दोनों इस हर्षित करने वाले सोमरस का पान करें। आपका रथ सोमपान एवं देवों की तुष्टि के लिए प्रत्येक यज्ञ में जाता है ॥१०॥

इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य वृषणा वृषेथाम् ।
इदं वामन्धः परिषिक्तमस्मे आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयेथाम् ॥११॥

हे बलवान् इन्द्र और वरुणदेवो ! आप इस बलयुक्त अति मधुर आनन्दवर्धक सोमरस का पान करें । आप दोनों इस कुश के आसन पर बैठकर अपने लिए तैयार सोमरस को ग्रहण कर हर्षित हों ॥११॥

सूक्त ६९

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्राविष्णु। छंद – त्रिष्टुप

सं वां कर्मणा समिषा हिनोमीन्द्राविष्णू अपसस्पारे अस्य ।
जुषेथां यज्ञं द्रविणं च धत्तमरिष्टैर्नः पथिभिः पारयन्ता ॥१॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! हम आपके निमित्त हवि और उत्तम स्तोत्र प्रेषित करते हैं। आप प्रसन्न होकर यज्ञ में आएँ एवं हमें धन प्रदान करें ॥१॥

या विश्वासां जनितारा मतीनामिन्द्राविष्णू कलशा सोमधाना ।
प्र वां गिरः शस्यमाना अवन्तु प्र स्तोमासो गीयमानासो अर्कैः ॥२॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! आप समस्त विश्व में सुमति के प्रेरक हैं। आपके लिए यह सोमरस से भरे पात्र रखे हैं। आपके लिए की गई स्तुतियाँ आपको प्रसन्न करें। आप हमारी रग करें ॥२॥

इन्द्राविष्णू मदपती मदानामा सोमं यातं द्रविणो दधाना ।
सं वामञ्जन्त्वक्तुभिर्मतीनां सं स्तोमासः शस्यमानास उक्थैः ॥३॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! आप दोनों सोम के स्वामी हैं। आप हमारे लिए धन लेकर इस यज्ञ में आएँ । उक्थों (उच्चारित वचनों) सहित स्तोत्र आपको बढ़ाने वाले हों ॥३॥

आ वामश्वासो अभिमातिषाह इन्द्राविष्णू सधमादो वहन्तु ।
जुषेथां विश्वा हवना मतीनामुप ब्रह्माणि शृणुतं गिरो मे ॥४॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! हिंसकों को परास्त करने वाले घोड़े आपको ले आएँ । आप हमारी स्तुति को सुनकर, हमारी प्रार्थना पर ध्यान दें ॥४॥

इन्द्राविष्णू तत्पनयाय्यं वां सोमस्य मद उरु चक्रमाथे ।
अकृणुतमन्तरिक्षं वरीयोऽप्रथतं जीवसे नो रजांसि ॥५॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! सोमपान से हर्षित होकर आपने इस विस्तृत विश्व को आवृत किया और हमारे जीवन के लिए लोकों को प्रकाशित किया है ॥५॥

इन्द्राविष्णू हविषा वावृधानाग्राद्वाना नमसा रातहव्या ।
घृतासुती द्रविणं धत्तमस्मे समुद्रः स्थः कलशः सोमधानः ॥६॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! आप सोम पान से बढ़ते हैं। यजमान आपके लिए नमस्कार सहित हवि प्रदान करते हैं । आप हमें धन प्रदान करें । आप समुद्रवत् गंभीर हैं। जैसे यह कलश सोम से परिपूर्ण हैं, वैसे ही आप भी परिपूर्ण हों ॥६॥

इन्द्राविष्णू पिबतं मध्वो अस्य सोमस्य दस्रा जठरं पृणेथाम् ।

आ वामन्धांसि मदिराण्यग्मन्नुप ब्रह्माणि शृणुतं हवं मे ॥७॥

है इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! आप दोनों तृप्त होने तक इस सोमरस को उदरस्थ करें। यह हर्षित करने वाला सोम आपके पास तक पहुँचे । आप हमारी प्रार्थना एवं स्तोत्रों को ध्यानपूर्वक सुनें ॥७॥

उभा जिग्यथुर्न परा जयेथे न परा जिग्ये कतरश्चनैनोः ।
इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथाम् ॥८॥

हे इन्द्रदेव और विष्णुदेव ! आप दोनों कभी पराजित न होने वाले अजेय हैं, परन्तु जब आप आपस में ही स्पर्धा करते हैं, तो सारे भुवन भय से काँपने लगते हैं ॥८॥

सूक्त ७०

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – द्यावा पृथ्वी । छंद – जगती

घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥१॥

हे द्युलोक और पृथ्वीलोक ! आप जलयुक्त सुन्दर रूप वाले और भुवनों को आश्रय देने वाले, मधुर अन्न-रस देने वाले, अमर एवं बलवान् हैं। आप दोनों वरुणदेव द्वारा धारण किये गये हैं ॥१॥

असश्चन्ती भूरिधारे पयस्वती घृतं दुहाते सुकृते शुचिव्रते ।
राजन्ती अस्य भुवनस्य रोदसी अस्मे रेतः सिञ्चतं यन्मनुर्हितम् ॥२॥

ये द्यावा-पृथिवी बहुत से जल प्रवाहों से युक्त हैं। ये दोनों उत्तम कर्म करने वालों को तेजस्वी जल प्रदान करते हैं । हे द्यावा-पृथिवि ! आप दोनों इन भुवनों की अधिष्ठाता हैं । आप प्रसन्न होकर हमें हितकारी जल प्रदान करें ॥२॥

यो वामृजवे क्रमणाय रोदसी मर्तो ददाश धिषणे स साधति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि युवोः सिक्ता विषुरूपाणि सव्रता ॥३॥

हे द्यावा-पृथिवि ! आपके निमित्त यजन कर्म करने वालों के सभी कार्य सफल-सिद्ध होते हैं। आपकी कृपा से धर्मारूढ़ मानवों को श्रेष्ठ सन्तान प्राप्त होती है ॥३॥

घृतेन द्यावापृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा ।
उर्वी पृथ्वी होतृवूर्ये पुरोहिते ते इद्विप्रा ईळते सुम्नमिष्टये ॥४॥

द्यावा और पृथिवी दोनों जल से युक्त हैं। वे जल से सुशोभित एवं जल वृष्टि करने वाले हैं । यज्ञ में यजमान उनकी स्तुति करते हुए सुख प्राप्ति की कामना करते हैं ॥४॥

मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते ।
दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्मे सुवीर्यम् ॥५॥

हे मधुरता की वृद्धि करने वाले द्यावा-पृथिवि ! आप दोनों में मधुरता प्रदान करें । मधुरता आपका स्वभाव है । यज्ञ, धन एवं देवत्व धारण करने वाले आप हमें यश, बल और धन प्रदान करें ॥५॥

ऊर्जं नो द्यौश्च पृथिवी च पिन्वतां पिता माता विश्वविदा सुदंससा ।
संरराणे रोदसी विश्वशम्भुवा सनिं वाजं रयिमस्मे समिन्वताम् ॥६॥

हे सबका कल्याण करने वाले द्यावा-पृथिवि ! आप हमारे माता-पिता हैं । आप सर्वज्ञ, तेजस्वी, ज्ञानी एवं सत्कर्म करने वाले हैं। आप हमें पुत्र-पौत्र युक्त, अन्न, बल, यश और धन प्रदान करें ॥६॥

सूक्त ७१

ऋषिः बार्हस्पत्यो भारद्वाजः
देवता – सविता । छंद – जगती, ४-६ त्रिष्टुप

उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया बाहू अयंस्त सवनाय सुक्रतुः ।
घृतेन पाणी अभि प्रुष्णुते मखो युवा सुदक्षो रजसो विधर्मणि ॥१॥

श्रेष्ठ कर्म करने वाले सवितादेव सुदक्ष, तरुण, पवित्र और यज्ञरूप हैं। वे देव अपनी स्वर्णिम बाहुओं को ऊपर उठाकर जगत् को सब प्रकार से कल्याण करते हैं ॥१॥

देवस्य वयं सवितुः सवीमनि श्रेष्ठे स्याम वसुनश्च दावने ।
यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो निवेशने प्रसवे चासि भूमनः ॥२॥

सवितादेव द्वारा सत्प्रेरणा और धन दान के समय हम उपस्थित हों । हे सवितादेव ! आप समस्त पशुओं और मनुष्यों को विश्राम तथा कर्म में नियोजित करने वाले हैं ॥२॥

अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वं शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम् ।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥३॥

हे सवितादेव ! आप न दबने वाले कल्याणकारी तेज से हमारे घरों की रक्षा करें । स्वर्ण जिह्वा वाले देव आप हमें नये-नये सुख देते हुए, हमारी रक्षा करें । हम पापियों के अधीन न हों ॥३॥

उदु ष्य देवः सविता दमूना हिरण्यपाणिः प्रतिदोषमस्थात् ।
अयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्व आ दाशुषे सुवति भूरि वामम् ॥४॥

जो सवितादेव शान्त मन वाले, स्वर्णमयी बाहुओं वाले और यशस्वी हैं, वे रात्रि के समाप्त होने पर विधिपूर्वक आहुति प्रदान करने वाले को उत्तम अन्न-धन प्रदान करते हैं ॥४॥

उदू अयाँ उपवक्तेव बाहू हिरण्यया सविता सुप्रतीका ।
दिवो रोहांस्यरुहत्पृथिव्या अरीरमत्पतयत्कच्चिदभ्वम् ॥५॥

जैसे वक्ता हाथ ऊपर उठाकर भाषण करता है, वैसे ही सविता देवता अपनी स्वर्णिम किरणों रूपी हाथों को ऊपर की ओर फैलाकर उदित होते हैं । उदित होकर पृथ्वी से उठकर स्वर्ग के शिखर पर स्थित होकर, सभी को पुष्ट और आनन्दित करते हैं ॥५॥

वाममद्य सवितर्वाममु श्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः ।
वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेरया धिया वामभाजः स्याम ॥६॥

हे सर्व उत्पादक सवितादेव ! आज हमारे लिए श्रेष्ठ सुखों को प्रदान करें । अगला दिवस भी श्रेष्ठ सुख प्रदायक हो, इस प्रकार आप प्रतिदिन हमें उत्तम सुखों को प्रदान करें। आप विपुल धन एवं आश्रयों के अधिपति हैं। इस भावना के अनुसार हम श्रेष्ठ धनादि प्राप्त करें ॥६॥

सूक्त ७२

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – इन्द्र सौमो। छंद – त्रिष्टुप

इन्द्रासोमा महि तद्वां महित्वं युवं महानि प्रथमानि चक्रथुः ।
युवं सूर्यं विविदथुर्युवं स्वर्विश्वा तमांस्यहतं निदश्च ॥१॥

हे इन्द्रदेव और सोमदेव ! आप अत्यन्त महिमावान् हैं। आप दोनों ने श्रेष्ठ कर्म किये हैं। आपने सूर्य तथा जल को प्राप्त किया है। आपने अन्धकार और निन्दकों को दूर किया हैं ॥१॥

इन्द्रासोमा वासयथ उषासमुत्सूर्यं नयथो ज्योतिषा सह ।
उप द्यां स्कम्भथुः स्कम्भनेनाप्रथतं पृथिवीं मातरं वि ॥२॥

हे इन्द्रदेव और सोमदेव ! आपने उषा को बसाया एवं प्रकाशित सूर्य को ऊपर उठाया है । आपने आधार प्रदान कर द्युलोक को स्थिर किया एवं पृथ्वी माता को विस्तृत किया है ॥२॥

इन्द्रासोमावहिमपः परिष्ठां हथो वृत्रमनु वां द्यौरमन्यत ।
प्रार्णांस्यैरयतं नदीनामा समुद्राणि पप्रथुः पुरूणि ॥३॥

हे इन्द्रदेव और सोमदेव ! आपने जल प्रवाह को रोकने वाले वृत्र को नष्ट किया । द्युलोक ने आपको प्रवृद्ध किया। आपने नदियों की जल राशि को प्रवाहित कर समुद्र को भर दिया है ॥३॥

इन्द्रासोमा पक्वमामास्वन्तर्नि गवामिद्दधथुर्वक्षणासु ।
जगृभथुरनपिनद्धमासु रुशच्चित्रासु जगतीष्वन्तः ॥४॥

हे इन्द्रदेव और सोमदेव ! आपने कम आयु वाली गौओं के (थनों) दुग्धाशय में परिपक्व दूध को स्थापित किया है । उसी तरह विचित्र वर्ण वाली गौओं में आपने श्वेत वर्ण का दुग्ध धारण कराया हैं ॥४॥

इन्द्रासोमा युवमङ्ग तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे ।
युवं शुष्मं नर्यं चर्षणिभ्यः सं विव्यथुः पृतनाषाहमुग्रा ॥५॥

हे इन्द्रदेव और सोमदेव ! आप दोनों में ऐसा धन प्रदान करें, जिससे हमारा कल्याण हो । आप हमें शत्रु सेना का पराभव करने वाला उग्र बल प्रदान करें ॥५॥

सूक्त ७३

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – बृहस्पति: । छंद – त्रिष्टुप

यो अद्रिभित्प्रथमजा ऋतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान् ।
द्विबर्हज्मा प्राघर्मसत्पिता न आ रोदसी वृषभो रोरवीति ॥१॥

जो बृहस्पति देव सबसे प्रथम उत्पन्न हुए, उन्होंने पर्वत को ध्वस्त किया । जो अङ्गिरसों में हविष्यान्न से युक्त हैं, जो स्वयं के तेज से तेजस्वी हैं, वे उत्तम गुणों से भूमि की सुरक्षा करने वाले, बलवान्, हमारे पालक बृहस्पति देव द्युलोक और भूलोक में गर्जना करते हैं ॥१॥

जनाय चिद्य ईवत उ लोकं बृहस्पतिर्देवहूतौ चकार ।
घ्नन्वृत्राणि वि पुरो दर्दरीति जयञ्छत्रूँरमित्रान्पृत्सु साहन् ॥२॥

जो बृहस्पतिदेव स्तोताओं को स्थान देते हैं, वे बृहस्पतिदेव शत्रुओं को मारने वाले और शत्रुजयीं हैं । वे शत्रुओं को परास्त करके उनके नगरों को ध्वस्त करते हैं ॥२॥

बृहस्पतिः समजयद्वसूनि महो व्रजान्गोमतो देव एषः ।

अपः सिषासन्त्स्वरप्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कैः ॥३॥

बृहस्पतिदेव ने असुरों को परास्त करके गोधन जीता है। वे बृहस्पतिदेव स्वर्ग के शत्रुओं को मन्त्र द्वारा विनाश करते हैं ॥३॥

सूक्त ७४

ऋषि: बार्हस्पत्यो भारद्वाज:
देवता – सोमारुद्रौ । छंद – त्रिष्टुप

सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यं प्र वामिष्टयोऽरमश्नुवन्तु ।
दमेदमे सप्त रत्ना दधाना शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१॥

हे सोमदेव और रुद्रदेव ! आप दोनों सामर्थ्यवान् हैं । हमारे समस्त यज्ञ आप तक पूर्णता से पहुँचें । प्रत्येक घर में सात रत्न (प्रत्येक शरीर में सप्त धातु) स्थापित कर, आप हमारा मंगल करें । हमारे द्विपादों (मानवों) एवं चतुष्पादों (पशुओं) को सुख प्रदान करें ॥१॥

सोमारुद्रा वि वृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।
आरे बाधेथां निर्ऋतिं पराचैरस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु ॥२॥

हे सोमदेव और रुद्रदेव ! आप दोनों हमारे घरों में प्रविष्ट रोगों का विनाश करें । दरिद्रता हमसे दूर रहे। हम अन्नसहित सुख से रहें ॥२॥

सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मे विश्वा तनूषु भेषजानि धत्तम् ।

अव स्यतं मुञ्चतं यन्नो अस्ति तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत् ॥३॥

हे सोमदेव और रुद्रदेव ! आप दोनों हमारे शरीर में सभी ओषधियाँ धारण करा दें। हमारे बन्धन खोलें और हमें मुक्त कर दें ॥३॥

तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ सोमारुद्राविह सु मृळतं नः ।
प्र नो मुञ्चतं वरुणस्य पाशाद्गोपायतं नः सुमनस्यमाना ॥४॥

तीक्ष्ण आयुधधारी, उत्तम विचारवान्, सुसेव्य, हे सोमदेव और रुद्रदेव ! आप हमें वरुण पाश से मुक्त करके, उत्तम प्रकार का सुख प्रदान करें ॥४॥

सूक्त ७५

ऋषिः पायुभारद्वाजः
देवता – संग्रामशिषः, । छंद – त्रिष्टुप, ६, १० जगती, १२, १३, १५, १६, १९, अनुष्टुप, १७ पंक्ति

जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे ।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वं स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्तु ॥१॥

कवच को धारण करके जब शूरवीर योद्धा संग्राम-स्थल के लिए जाते हैं, तब सेना का स्वरूप बादल के सदृश होता है । हे वीर पुरुष ! आप बिना आहत हुए विजय को प्राप्त करें; उस कवच की महान् शक्ति आपकी रक्षा करे ॥१॥

धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम ।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥२॥

धनुष की शक्ति से युद्ध जीतकर गौएँ प्राप्त करेंगे । भीषण संग्राम में धनुष से शत्रु की कामनाएँ ध्वस्त करेंगे । हमारा धनुष शत्रु को पराजित करता है, ऐसे धनुष की महिमा से सभी दिशाओं को विजित करेंगे ॥२॥

वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियं सखायं परिषस्वजाना ।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वञ्ज्या इयं समने पारयन्ती ॥३॥

संग्राम में विजय दिलाने वाला, धनुष पर चढ़कर अव्यक्त ध्वनि करती हुई, (प्रत्यंचा) प्रिय बाणरूप मित्र से मिलती है । वह योद्धा के कानों तक खिचती हुई ऐसी प्रतीत होती है, मानो कुछ कहना चाहती हैं । यह प्रत्यंचा संकटों से पार करने वाली है ॥३॥

ते आचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे ।
अप शत्रून्विध्यतां संविदाने आर्त्नी इमे विष्फुरन्ती अमित्रान् ॥४॥

ये दोनों (कोटियाँ) समान मन वाली स्त्रियों की तरह (एक ही प्रयोजन के लिए) आचरण करती हैं। माता की भाँति पुत्र (बाण) को गोद में लेकर एक साथ रहने वाली ये, शत्रुओं का वेधन करतीं तथा अमित्रों को बिखेर देती हैं ॥४॥

बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चा कृणोति समनावगत्य ।
इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः ॥५॥

यह बहुतों का पिता है, इसके पुत्र बहुत हैं। समर में पहुँचकर यह चीं-चीं ध्वनि करता है । योद्धा के पृष्ठ भाग में आबद्ध यह अपने द्वारा प्रसूत (बाणों) से सभी संगठित शत्रुओं को जीत लेता है ॥५॥

रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः ।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः ॥६॥

उत्तम सारथी रथ पर स्थित होकर अश्वों को यहाँ-वहाँ इच्छानुसार आगे ले जाता हैं। हे स्तोताओ ! आप लगामों की महिमा का बखान करें । वे मन के अनुकूल (अश्वों को गति देने के लिए प्रवृत्त होती हैं ॥६॥

तीव्रान्घोषान्कृण्वते वृषपाणयोऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान्क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः ॥७॥

रथ के साथ गतिमान् , वृषभों से भी अधिक शक्तिशाली अश्व अमित्रों (शत्रुओं) को अपने पदों (चरणों) से आक्रान्त करते हैं । अपव्यय से बचकर शत्रुओं को नष्ट करते हैं ॥७॥

रथवाहनं हविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म ।
तत्रा रथमुप शग्मं सदेम विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः ॥८॥

जहाँ इस रथ को बढ़ाने वाले हव्य, (रथी के) अस्त्र-शस्त्र एवं कवच आदि रखे होते हैं, हम प्रसन्न मन से उस रथ पर सदैव स्थित रहेंगे ॥८॥

स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः ।
चित्रसेना इषुबला अमृध्राः सतोवीरा उरवो व्रातसाहाः ॥९॥

(यह रक्षक) वयोधा (अवस्थाओं अथवा बल को धारण करने वाले), शत्रु के अन्नों को नष्ट करने वाले तथा स्वपक्ष को अन्न देने वाले हैं । संकट के समय आश्रय देने वाले, गंभीर, विचित्र सेना से युक्त यह महान् वीर स्वयं अहिसित रहकर शत्रुसेना को नष्ट करने में समर्थ है ॥९॥

ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवे नो द्यावापृथिवी अनेहसा ।
पूषा नः पातु दुरितादृतावृधो रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥१०॥

ब्राह्मण, पितर, ऋत (सत्य या यज्ञ संवर्धक तथा सोम सिद्ध करने वाले-यह सब हमारी रक्षा करें। कल्याणप्रद द्यावा-पृथिवी एवं पूषादेव हमें पापों से बचाएँ । पापी-दुराचारी व्यक्ति हम पर शासन न करने पाएँ ॥१०॥

सुपर्णं वस्ते मृगो अस्या दन्तो गोभिः संनद्धा पतति प्रसूता ।
यत्रा नरः सं च वि च द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यंसन् ॥११॥

यह सुपर्णयुक्त (पक्षी की तरह) गतिशील, तीक्ष्ण दाँत (नोंक) वाले मन की तरह यह बाण गो (इन्द्रियों) द्वारा संधान किया गया, प्रसूत होते (प्रकट होते-छूटते) ही प्रहार करता है । जहाँ मनुष्य एकत्रित होकर या बिखर कर गतिशील होते हैं, वहाँ ये बाण हमारे शरणदाता या सुख प्रदायक हों ॥११॥

ऋजीते परि वृङ्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनूः ।
सोमो अधि ब्रवीतु नोऽदितिः शर्म यच्छतु ॥१२॥

है ऋजुगामी (बाण) आप सब ओर से हमें संवर्धित करें । हमारे शरीर पत्थर जैसे (मजबूत) हो । सोमदेव हमें उत्साहित करें तथा माता अदिति हमें सुख प्रदान करें ॥१२॥

आ जङ्घन्ति सान्वेषां जघनाँ उप जिघ्नते ।
अश्वाजनि प्रचेतसोऽश्वान्त्समत्सु चोदय ॥१३॥

हे अश्व चलाने वाली कशा ! आप संग्राम में जागरूक अश्वों को प्रेरित-उत्तेजित करें । इनके उभरे हुए भागों पर अथवा निचले अंगों पर समीप से प्रहार करें ॥१३॥

अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान्पुमान्पुमांसं परि पातु विश्वतः ॥१४॥

सर्प की तरह लिपट कर प्रत्यंचा के आघात से यह (हस्तबन्ध) हाथ की रक्षा करता हैं । यह सभी कुशलताओं के ज्ञाता पुरुषों का सब ओर से संरक्षण करे ॥१४॥

आलाक्ता या रुरुशीष्र्यथो यस्या अयो मुखम् ।
इदं पर्जन्यरेतस इष्वै देव्यै बृहन्नमः ॥१५॥

जो विषयुक्त, लोहे के फल लगा, हिंसक अग्रभाग वाला यह बाण है, पर्जन्य से जिनका पराक्रम बढ़ता है, उन बाण देवता को हमारा नमस्कार है ॥१५॥

अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
गच्छामित्रान्प्र पद्यस्व मामीषां कं चनोच्छिषः ॥१६॥

हे बाण रूपी अस्त्र ! मन्त्रों के प्रयोग से तीक्ष्ण किये हुए आप हमारे द्वारा छोड़े जाते हुए शत्रु सेना पर एक साथ प्रहार करें और उन्हें संतप्त करें । उनके शरीरों में प्रविष्ट होकर सभी का विनाश करें तथा किसी भी दुष्ट को जीवित न बचने दें ॥१६॥

यत्र बाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्रा नो ब्रह्मणस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥१७॥

जहाँ शिखारहित-बालकों (चंचल बालकों) के समान बाण गिरते हों, वहाँ ब्रह्मणस्पति और अदिति हमें सुख प्रदान करें और हमारा सदा कल्याण करें ॥१७॥

मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥१८॥

हे रथी ! आपके मर्मस्थलों को हम कवच से युक्त करते हैं। सोमदेव आपको अमृत से युक्त करें । वरुणदेव आपको सुख प्रदान करें । आपकी विजय से देवगण आनन्दित हों ॥१८॥

यो नः स्वो अरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति ।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥१९॥

जो हमारे बन्धु होकर द्वेष करते हैं, गुप्त रूप से हमारे संहार की इच्छा रखते हैं, उन्हें सब देवगण नष्ट कर दें। वेदमन्त्र ही हमारे कवचरूप हैं, वे हमारा कल्याण करें ॥१९॥

॥इति षष्ठं मण्डलं॥